Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारतीय पुरालिपि मञ्जूषा

(ब्राह्मी-शारदा-ग्रंथ-नागरी लिपि प्रवेशिका)

डॉ. उत्तमसिंह

For Private and Personal Use Only

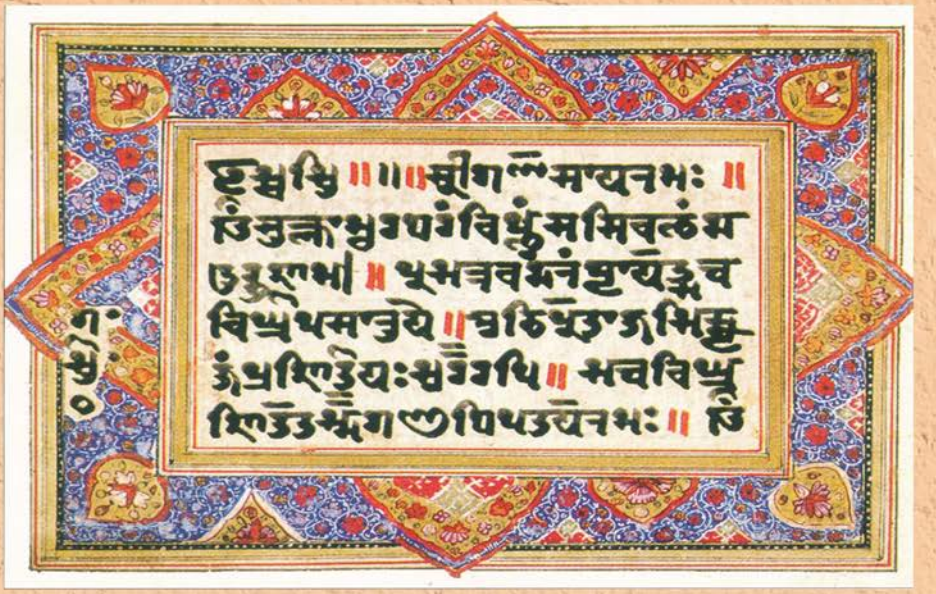

(शारदा लिपिबद्ध सुशोभित हस्तप्रत)

(नागरी लिपिबद्ध चित्रित हस्तप्रत)

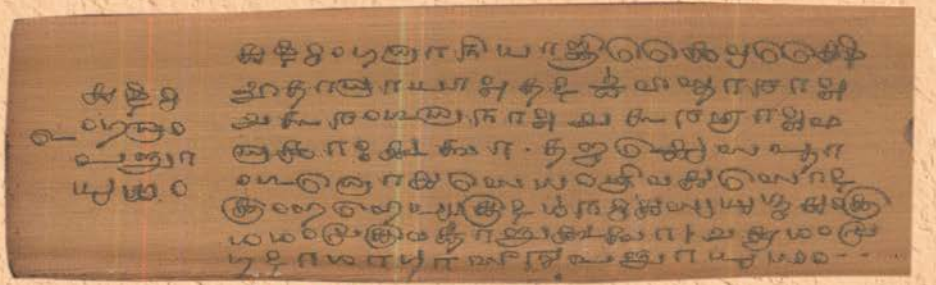

(ग्रंथ लिपिबद्ध ताडपत्रीय हस्तप्रत)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारतीय पुरालिपि मञ्जूषा

(ब्राह्मी-शारदा-ग्रंथ-नागरी लिपि प्रवेशिका)

❖ आशीर्वाद ❖

राष्ट्रसंत प. पू. आचार्य श्री पद्मसागरसूरीश्वरजी म. सा.

❖ प्रेरक ❖

प. पू. आचार्य श्री अजयसागरसूरीश्वरजी म. सा.

❖ लेखक-संपादक ❖

डॉ. उत्तमसिंह

❖ प्रकाशक ❖

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर

(जैन व प्राच्यविद्या शोध-संस्थान एवं ग्रन्थालय)

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र कोबा, गांधीनगर-३८२००७

फोन नं. (०७९) २३२७६२०४, २०५, २५२ फेक्स : (०७९) २३२७६२४९

Website : www.kobatirth.org **Email :** gyanmandir@kobatirth.org

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारतीय पुरालिपि मञ्जूषा

(ब्राह्मी-शारदा-ग्रंथ-नागरी लिपि प्रवेशिका)

❖

डॉ. उत्तमसिंह

❖ उपलक्ष ❖

श्रुतोद्धारक आचार्यदेवश्री पद्मसागरसूरीश्वरजी म. सा. के
82वें जन्म महोत्सव के पावन प्रसंग पर
वि.सं.2072, भाद्रपद शुक्ल-9 (द्वि.), रविवार, दि.11-9-2016

❖ आवृत्ति-प्रथम ❖

वि. सं. २०७२, ई. सन् २०१६

प्रतियाँ : १०००

ISBN : 978-93-85803-02-4

❖ मूल्य : ३६०/- ❖

❖

❖ प्रकाशक ❖

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
(जैन व प्राच्यविद्या शोध-संस्थान एवं ग्रन्थालय)
श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र कोबा, गांधीनगर-३८२००७

❖ मुद्रक ❖

नवप्रभात प्रिंटिंग प्रेस, अहमदाबाद - मो. 9825598855

For Private and Personal Use Only

Acharya Padmasagarsuri

आशीर्वचन

डॉ. उत्तमसिंह द्वारा संकलित-संपादित पुस्तक 'भारतीय पुरालिपि मञ्जूषा' का प्रकाशन श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा द्वारा किया जा रहा है; यह जानकर मुझे अतीव प्रसन्नता हुई।

संस्था के ही आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर, कोबा (जैन व प्राच्यविद्या शोध-संस्थान एवं ग्रन्थालय) के हस्तप्रत व प्रकाशन विभाग में वरिष्ठ पण्डित पद पर कार्यरत डॉ. उत्तमसिंह पाण्डुलिपि-शास्त्र एवं विभिन्न प्राचीन लिपियों के जानकार हैं तथा इस विद्या के अध्ययन-अध्यापन में रुचि रखते हैं ।

इन्होंने अपने अनुभव के आधार पर कठिन परिश्रम के द्वारा इस पुस्तक का संकलन-संपादन किया है । इसमें इन्होंने ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ एवं प्राचीन देवनागरी लिपियों की संपूर्ण वर्णमाला, उद्भव और विकास व लेखन-प्रक्रिया का विशद् परिचय प्रस्तुत करके पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि विद्या के प्रति रुचि रखने वाले अभ्यासुओं के लिए मार्ग प्रशस्त किया है। हस्तप्रतों के आधार पर पाठ संपादन, संशोधन करने की चाहना रखनेवाले एवं पुरालेखों के अभ्यास की इच्छा रखनेवाले विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक बहुत उपयोगी सिद्ध होगी। इस पुस्तक के प्रकाशन हेतु शुभकामना एवं मंगल आशीर्वाद देता हूँ...

पद्मसागर सूरि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

Dr. Kumarpal Desai
PADMASHREE

❖ शुभानुशंसा ❖

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि डॉ. उत्तमसिंह द्वारा संपादित पुस्तक 'भारतीय पुरालिपि मञ्जूषा' का प्रकाशन 'आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर-कोबा' द्वारा किया जा रहा है। इस पुस्तक में ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ एवं प्राचीन नागरी लिपियों के उद्भव-विकास एवं संपूर्ण वर्णमाला का विशद् विवेचन प्रस्तुत किया गया है, जो पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि विद्या के अभ्यासुओं के लिए अत्यन्त ही उपयोगी, महत्त्वपूर्ण और ज्ञानवर्धक संकलन है।

प्राचीन लिपियाँ हमारी अमूल्य निधि स्वरूप ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहर हैं, जिसे सहेजकर रखना हमारा परम कर्तव्य है। इन लिपियों के माध्यम से ही भारतीय प्राचीन श्रुतसंपदा को अद्यवधि पर्यन्त सुरक्षित रखा जा सका है। आज के संदर्भ में इन लिपियों के प्रचार-प्रसार, अध्ययन-अध्यापन एवं संरक्षण की दिशा में एक योजनाबद्ध प्रयास की महती आवश्यकता है। डॉ. उत्तमसिंह ने इस दिशा में सुन्दर प्रयास किया है, जिसकी मैं हृदय से अनुमोदना करता हूँ।

भारतीय प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति के संरक्षण-संवर्धन में इन चारों ही लिपियों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इन लिपियों के माध्यम से संरक्षित प्राचीन अभिलेखों एवं हस्तप्रतों में निहित भारतीय श्रुतसंपदा के प्रकाशनार्थ यह पुस्तक विद्वानों के लिए अत्यन्त सहायक व उपयोगी सिद्ध होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

डॉ. उत्तमसिंह विगत कई वर्षों से भारतीय प्राचीन लिपियों के संरक्षण-संवर्धन एवं अध्ययन-अध्यापन कार्य में संलग्न हैं, जो सराहनीय है। यह पुस्तक उनके सुदीर्घ अनुभव और कठिन परिश्रम का एक सफल एवं सुखद परिणाम है । इसके प्रकाशन से भावी पीढ़ी को नई प्रेरणा के साथ इन लिपियों के प्रति उत्साहवर्धक जागरूकता एवं ज्ञानार्जन का सुनहरा अवसर प्राप्त होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

मैं 'भारतीय पुरालिपि मञ्जूषा' के प्रकाशन से जुडे सभी सदस्यों के सद्प्रयासों की अनुमोदना करते हुए इस ग्रन्थ के सफल प्रकाशनार्थ हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

कुमारपाल देसाई

(पद्मश्री कुमारपाल देसाई)

For Private and Personal Use Only

❖ प्रकाशकीय ❖

प्राचीन हस्तप्रतों में निबद्ध भारतीय श्रुतसंपदा के अध्ययन-अध्यापन, संपादन एवं प्रकाशन हेतु पुरालिपियों का ज्ञान अति आवश्यक है। इन लिपियों के माध्यम से ही भारतीय पुरा इतिहास एवं पुरासम्पदा को चिरकाल से सुरक्षित रखा जा सका है।

आज भारतीय प्राचीन लिपियों के संरक्षण की महती आवश्यकता है। इनको जानने वाले विद्वान भी बहुत कम बचे हैं। हालाँकि अभी पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि विद्या के प्रति समाज में जागरूकता आई है और इन लिपियों को सीखने के प्रति रुचि रखने वालों की संख्या में भी पहले की अपेक्षा अभिवृद्धि हुई है। समय-समय पर विविध संस्थाओं एवं अग्रगण्य विद्वानों द्वारा इन लिपियों के प्रशिक्षणार्थ 'पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि अध्ययन कार्यशालाओं' का आयोजन भी किया जा रहा है, जो सराहनीय है। लेकिन एक योजनाबद्ध दीर्घसूत्रीय पाठ्यक्रम के तरहत कुशल प्रशिक्षण की अभी भी महती आवश्यकता है।

यदि इस दिशा में सार्थक प्रयास नहीं किये गये तो भविष्य में ये लिपियाँ भी अन्य प्राचीन लिपियों की तरह अपनी अलौकिक ज्ञान विरासत को साथ लिए लुप्त हो जायेंगी, जो किसी भी राष्ट्र एवं समाज के लिए अपूरणीय क्षति होगी।

प्राचीन जैन आगम समवायांगसूत्र एवं पन्नवणासूत्र में तत्कालीन अठारह लिपियों का नामोल्लेख मिलता है। ईसा की प्रथम शताब्दी में लिखित बौद्धग्रन्थ ललितविस्तर में भी चौंसठ लिपियों का नामोल्लेख हुआ है। इन सभी ग्रन्थों में प्रथम स्थान पर वर्णित नाम ब्राह्मी लिपि है जिसे अनेकों लिपियों की जननी होने का गौरव प्राप्त है।

उपर्युक्त ग्रन्थों में वर्णित अधिकांश लिपियाँ आज लुप्त हो चुकी हैं। इनमें से अशोककालीन ब्राह्मी तथा कुछ आधी-अधूरी लिपियाँ ही देखने को मिलती हैं। चिन्ता की बात तो यह है कि आज जो प्राचीन लिपियाँ शेष बची हैं उनका भी कहीं नियमितरूप से पठन-पाठन नहीं हो रहा है और यदि ऐसा ही रहा तो ये भी कालकवलित हो जायेंगी। ऐसे में इन प्राचीन लिपियों को प्रकाश में लाना

For Private and Personal Use Only

सार्थक और समय सापेक्ष है।

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर, कोबा के हस्तप्रत विभाग में वरिष्ठ पण्डित के रूप में कार्यरत डॉ. उत्तमसिंह कई वर्षों से पाण्डुलिपि एवं पुरालिपिविद्या के अध्ययन-अध्यापन में रत हैं। परिणामस्वरूप 'भारतीय पुरालिपि मञ्जूषा' का उदय हुआ है, जिसके माध्यम से 'ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ एवं प्राचीन देवनागरी' लिपियों को प्रकाशित किया जा रहा है।

इन चारों लिपियों के पुनः संरक्षण, संवर्धन एवं पठन-पाठन को गति मिलें जिससे हमारी पुरातन धरोहर को प्रकाश में लाया जा सके, ऐसी भावना के साथ श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा के आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर द्वारा इस पुस्तक को प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है इसके माध्यम से विद्वानों में इन प्राचीन लिपियों के पठन-पाठन एवं संरक्षण के प्रति रुचि जाग्रत होगी और हमारा यह प्रयास सार्थक सिद्ध होगा।

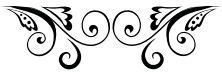

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

❖ सम्पादकीय ❖

भारतीय प्राचीन ज्ञानसंपदा को सदियों से निरन्तर प्रवाहमान रखने में पुरालिपियों की अहम भूमिका रही है। इन लिपियों के माध्यम से ही विविध भाषाओं में निबद्ध साहित्य को हस्तप्रतों के रूप में संग्रह कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर्यन्त सुरक्षित और संचरित किया जा सका है। प्राचीनकाल में जब विश्वभर में पशुधन, अन्नधन, ग्रन्थ अथवा श्रुतधन आदि को ही प्रमुख संपदा के रूप में गिना जाता था तब ये सभी वस्तुएँ हमारे पास प्रचुर मात्रा में विद्यमान थीं। इन्हीं के कारण हिन्दुस्तान को 'सोने की चिडिया' एवं 'जगद्गुरु' जैसे खिताब हासिल हुए।

ग्रन्थागारों में संगृहीत प्राचीन ग्रन्थसंपदा के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि पुराकालीन हिन्दुस्तान में लेखनकला अति विकसित और सर्वजन सुलभ थी। हमारे पूर्वज ऋषि-महर्षि-साधु-साध्वीजी भगवन्त आदि अनेक लिपियों के ज्ञाता थे, जिन्होंने देश-काल-परिस्थिति अनुसार इन लिपियों के माध्यम से भारतीय ज्ञानकोष को शिलाखण्ड, ताम्रपत्र, लोहपत्र, कांस्यपत्र, ताडपत्र, भूर्जपत्र, कपडों तथा हस्तनिर्मित कागजों आदि पर लिखकर या लहियाओं के माध्यम से लिखवाकर आगे आनेवाली पीढियों के लिए संरक्षित एवं हस्तान्तरित किया।

समय की परिवर्तनशीलता एक निर्विवाद सत्य है। जैसे-जैसे समय बदलता गया हमारे संसाधन भी बदलते गये। इसका प्रभाव लिपियों पर भी पडा। ब्राह्मी लिपि की वर्णमाला में अनेक कारणों से अलग-अलग प्रान्तों की भाषाओं के अनुकूल परिवर्तन होने लगे। उत्तर भारत में यह लिपि उत्तरी ब्राह्मी के रूप में विकसित होने लगी तो दक्षिण भारत में दक्षिणी ब्राह्मी के रूप में।

विदित हो कि ब्राह्मी लिपि हिन्दुस्तान की सबसे प्राचीनतम लिपि है जिसे पढा जा सका है। सिन्धुघाटी सभ्यता के अवशेषों में भी ब्राह्मी से पूर्वकालीन कुछ लिपिचिन्ह मिले हैं लेकिन वह कौनसी लिपि है; यह कह पाना बहुत मुश्किल है। जब तक मोहनजोदडो, कालीबंगा, पीलीबंगा आदि स्थलों से प्राप्त मृद्पात्र एवं मुद्रा आदि के लेखों को पढा नहीं जाता तब तक अनुमान के आधार पर हम इसे ब्राह्मी लिपि का पूर्व रूप कह सकते हैं।

आज हमारे पास लगभग ई.पू. तीसरी-चौथी शताब्दी कालीन ब्राह्मी

For Private and Personal Use Only

लिपिबद्ध जो शिलालेख उपलब्ध हैं उनमें टंकित लिपि पूर्ण विकसित ब्राह्मी है। इसका प्रारंभिक स्वरूप कुछ भिन्न अवश्य रहा होगा, जिसका अनुमान सिन्धुघाटी की लिपि को पढपाने के बाद ही लगाया जा सकता है।

ब्राह्मी को समस्त लिपियों की जननी भी कहा गया है। बौद्ध ग्रन्थ 'ललितविस्तर' में चौंसठ लिपियों का नामोल्लेखपूर्वक वर्णन मिलता है। इनमें पहले स्थान पर ब्राह्मी लिपि का नाम है। जैनआगम 'पन्नवणासूत्र' तथा 'समवायांगसूत्र' में अठारह लिपियों का नामोल्लेख हुआ है जहाँ ब्राह्मी लिपि को 'बंभी लिवी' कहा गया है। 'भगवतीसूत्र' में **'नमो बंभीए लिवीए'** कहकर इस लिपि को नमस्कार किया गया है।

गुप्तकाल में इस लिपि के अक्षरों में शिरोरेखा लगाकर लिखने का चलन प्रारंभ हुआ। अक्षरों की आकृति भी किंचित कुटिल आकार को प्राप्त करने लगी। अतः यह लिपि कुटिल ब्राह्मी के नाम से जानी जाने लगी। इस कुटिल लिपि से ही कालान्तर में 'शारदा' तथा 'प्राचीन देवनागरी' लिपियों का विकास हुआ।

शारदा लिपि का चलन विशेषरूप से काश्मीर, पंजाब तथा सिन्ध प्रान्तों में रहा। इसी लिपि से गुरुमुखी, डोगरी आदि लिपियों का उदय हुआ। शारदा लिपि में लिखित हस्तप्रतों को संशोधन की दृष्टि से अति महत्त्वपूर्ण और शुद्धप्राय माना जाता है। लेकिन आज इस लिपि में निबद्ध हस्तप्रतें बहुत कम मात्रा में उपलब्ध हैं। इस लिपि का चलन भी पूर्णतः बन्द हो चुका है और इसे जानने वाले विद्वान भी गिनेचुने ही रहे हैं। अतः निकट भविष्य में शारदा लिपि पर एक स्वतन्त्र पुस्तक भी प्रकाशित करने की योजना है।

शारदा लिपि के लगभग साथ-साथ ही जन्म लेनेवाली देवनागरी तथा ग्रन्थ लिपियों का चलन प्रारंभ में तो किंचित मन्द रहा लेकिन कालान्तर में ये लिपियाँ इतनी प्रचलित हुईं कि इन्होंने अपने समय की समस्त लिपियों को पीछे छोड दिया। ये लिपियाँ पूर्णतः वैज्ञानिक लिपि होने के कारण लहियाओं तथा ग्रन्थकारों को खूब पसन्द आईं।

ग्रन्थ लिपि दक्षिण भारत में खूब फली-फूली। इसे ताडपत्रों पर नुकीली कील द्वारा कुरेदकर लेखन हेतु सबसे उपयोगी लिपि माना गया। ताडपत्र पर कुरेदकर लिखी जाने वाली लिपियों के अक्षर विशेषरूप से गोलाकार ढाँचे के एवं शिरोरेखा विहीन रहे हैं। क्योंकि ताडपत्रों में लिखे जानेवाले अक्षरों में

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शिरोरेखा लगाने के कारण ताडपत्र के रेशे कट जाते हैं। अतः शिरोरेखा के कारण ताडपत्रों के रेशों को कटने से रोकने तथा ताडपत्र को टूटने से बचाने हेतु कुरेदकर लिखी जाने वाली लिपियों में शिरोरेखा का चलन नहीं रहा।

देवनागरी लिपि उत्तर भारत में खूब विकसित हुई। इसे ताडपत्रों एवं हस्तनिर्मित कागजों पर स्याही एवं कलम द्वारा लिखने के लिए उपयोगी और महत्त्वपूर्ण लिपि माना गया। उत्तरी भारत में संपूर्ण साहित्य इसी लिपि में लिखा जाने लगा तथा दक्षिणी भारत में भी इस लिपि को पसन्द किया जाने लगा। यही कारण है कि आज इस लिपि में निबद्ध साहित्य सर्वाधिक मात्रा में प्राप्त होता है। हिन्दुस्तान का शायद ही ऐसा कोई ग्रन्थागार होगा जहाँ नागरी लिपिबद्ध साहित्य की पाण्डुलिपियाँ संग्रहीत न हों।

लेकिन ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ आदि लिपियों की तरह ही आज प्राचीन देवनागरी लिपि का चलन भी बन्द हो चुका है और इसमें लिखित पाण्डुलिपियों को पढनेवाले विद्वान भी कम होते जा रहे हैं। जबकि इस लिपि में निबद्ध हस्तप्रतें करोडों की संख्या में विद्यमान हैं। इन सब बातों को ध्यान में रखकर इस पुस्तक के माध्यम से यहाँ इन चारों प्राचीन लिपियों की वर्णमाला, लेखनविधा एवं उद्भव और विकास को प्रकाशित करने का प्रयास किया है।

हालाँकि भारतीय पुरालिपियों के ज्ञानार्थ कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ उपलब्ध हैं, लेकिन उनमें एक साथ इन चारों लिपियों का विस्तृत संकलन प्राप्त नहीं हो पाता, जिस कारण विद्यार्थियों को अलग-अलग लिपियों के ज्ञानार्थ एकाधिक ग्रन्थों का संचय करना पडता है। 'पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि प्रशिक्षण कार्यशालाओं' में भी विद्यार्थियों की सदैव यह मांग रहती थी कि इन चारों लिपियों का एक साथ समीक्षात्मक संकलन प्राप्त हो। अतः इन सभी कारणों तथा लिपि अध्ययन कार्यशालाओं में उपस्थित विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए इस पुस्तक में योग्य सामग्री का संकलन करने का प्रयास किया गया है।

विगत कुछ वर्षों से इन लिपियों को जीवित रखने हेतु राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन-दिल्ली, लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामन्दिर, भो.जे. भारतीय विद्यामन्दिर, गुजरात विश्वकोष-अहमदाबाद, गुजरात विद्यापीठ तथा आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर-कोबा आदि संस्थाओं द्वारा समय समय पर 'पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि अध्ययन' कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रहा है। इन कार्यशालाओं के माध्यम से पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि विद्या के प्रति विद्वत् समाज में जागरूकता आई है। कुछ लिपि-विशेषज्ञ भी तैयार हुए हैं, जो इस विद्या का प्रचार प्रसार कर रहे हैं।

मुझे इन कार्यशालाओं में विद्यार्थियों को प्राचीन लिपियाँ सिखाते समय ब्राह्मी, शारदा, नागरी तथा ग्रन्थ लिपियों की एक परिचयात्मक पुस्तिका की महती आवश्यकता महसूस हुई; जो इन लिपियों को सीखने वालों के लिए सहायक सिद्ध हो। अतः उस आवश्यकता की पूर्ति हेतु यह एक लघु प्रयास है।

परमपूज्य गुरुदेव राष्ट्रसंत आचार्य भगवन्त श्री पद्मसागरसूरीश्वरजी म. सा. के परम आशीर्वाद का परिणाम है कि यह पुस्तक निर्विघ्नतापूर्वक समय पर पूर्ण होकर प्रकाशित हो रही है।

मैंने इन प्राचीन लिपियों के प्रचार-प्रसार एवं अध्ययन-अध्यापनार्थ एक संकलात्मक पुस्तक तैयार करने की मेरी भावना **प. पू. आचार्य भगवन्त श्री अजयसागरसूरीश्वरजी म. सा.** के समक्ष व्यक्त की जिसे उन्होंने आशीर्वाद व दिशानिर्देश पूर्वक सहर्ष स्वीकार कर सम्मति प्रदान की, इसे मैं अपना सौभाग्य समझता हूँ। पूज्यश्री के महत्त्वपूर्ण दिशा-निर्देशन एवं सुझावों के परिणाम स्वरूप यह पुस्तक पूर्णता को प्राप्त कर सकी हैं। एतदर्थ उनके श्रीचरणों में सादर वन्दन अर्पित है।

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा के ट्रस्टीश्री **श्रीपालभाई, श्री दर्शितभाई** तथा मेरे समस्त सहकर्मी मित्रों ने मुझे इस हेतु समय समय पर प्रेरित व दिशा निर्देशित किया जिसके परिणामस्वरूप यह कृति वाचकों तक पहुँच रही है; एतदर्थ हृदय से आभार।

इस पुस्तक में प्रदत्त हस्तप्रतें व लिपिविकासदर्शक पट्ट आदि कई महत्त्वपूर्ण सामग्रियाँ मुझे 'श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा' के आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर, सम्राट संप्रति संग्रहालय एवं सुधर्मास्वामी हस्तप्रत भण्डार से प्राप्त हुई हैं।

पुस्तक प्रकाशन-व्यय एवं संपूर्ण व्यवस्थापन भी आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर-कोबा द्वारा किया गया है। एतदर्थ मैं संस्था का हृदय से आभार व्यक्त करते हुए प्रभु महावीर से प्रार्थना करता हूँ कि यह

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ज्ञानभण्डार निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होता रहे और इसके माध्यम से ज्ञानपिपासुओं को आवश्यक शोधसामग्री व महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ प्राप्त होते रहें।

गुजरात विश्वकोष के नियामक **पद्मश्री कुमारपालभाई देसाई** ने मुझे एक डायरी व कलम देकर **'भारतीय पुरालिपि मञ्जूषा'** शीर्षक के तहत ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ व प्राचीन देवनागरी लिपियों को आधार बनाकर लिखने हेतु प्रेरित किया, एतदर्थ मैं उनका आभारी हूँ।

इस पुस्तक के अक्षरांकन, पेज सेटिंग तथा संगणकीय व्यवस्थापन में **श्री केतनभाई शाह** एवं **श्री संजयभाई गुर्जर** का महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है, एतदर्थ उनका जितना आभार व्यक्त करूँ वह कम है।

इस पुस्तक के प्रकाशन में मुझे जिन विद्वान लेखकों के ग्रन्थों व अन्य प्रशिक्षण सामग्री आदि से सहायता मिली है उनमें विशेषतः मुनिश्री पुण्यविजयजी म.सा., रायबहादुर श्रीयुत गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, श्रीनाथ तिक्कु, प्रो. त्रिलोकीनाथ गञ्जू, दिनेशचन्द्र सरकार, डा. ब्यूलर, डॉ. साहनी, कर्नल टॉड, प्रो. थपलियाल, श्री लक्ष्मणभाई भोजक, डॉ. एस. जगन्नाथ महोदय आदि के नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। इनके साथ-साथ हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती आदि भाषाओं में निबद्ध ग्रन्थों से भी महत्त्वपूर्ण सामग्री प्राप्त हुई है, यथास्थान उनका नामोल्लेख भी किया है। इन समस्त ग्रन्थों एवं ग्रन्थकारों के प्रति में विनत हूँ। इन पुरातत्त्वविदों के चरणों में मैं एक विद्यार्थी की भाँति नमन करते हुए उनके आशीर्वाद की याचना करता हूँ। उनके द्वारा रचित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की सहायता के बिना यह पुस्तक प्रकाशित कर पाना संभव नहीं था।

साथ ही मैं यहाँ मेरे उन समस्त विद्यार्थियों का हृदय से आभार व्यक्त करना चाहता हूँ जो विविध शैक्षणिक संस्थानों द्वारा आयोजित 'पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि विद्या' विषयक अध्ययन कार्यशालाओं में उपस्थित रहे हैं। इन प्राचीन लिपियों के प्रशिक्षण के समय उनसे भी बहुत कुछ जानने को मिला है। इस पुस्तक में प्रदत्त सामग्री का संकलन करते समय उनके सुझावों एवं आवश्यक्ताओं का विशेषरूप से यथायोग्य ध्यान रखा गया है।

इस पुस्तक में प्रदत्त विषयवस्तु को छह अध्यायों में विभाजित किया गया है। जिसके तहत प्रथम अध्याय में प्राचीन भारतीय लेखनकला का उद्भव-विकास, भाषा एवं लिपियों का समीक्षात्मक परिचय, पुरालेखीय साधन-सामग्री तथा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राचीन पाण्डुलिपियों का भौतिक स्वरूप एवं विवेचनात्मक परिचय प्रस्तुत किया गया है।

द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ एवं पञ्चम अध्यायों में क्रमशः ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ एवं प्राचीन देवनागरी लिपियों का उद्भव और विकास, उनकी विशेषताएँ, वर्णमाला, बाराक्षरी, संयुक्ताक्षर लेखन प्रक्रिया, अंकों का विकासक्रम, तत्तद् लिपि विषयक प्राचीन शिलालेखों के चित्र, पाण्डुलिपियाँ तथा चारों ही लिपियों में प्राकृत भाषाबद्ध 'नमस्कार महामन्त्र' लिखकर प्रकाशित किया गया है; जिससे इन लिपियों का तुलनात्मक अध्ययन करने वालों को इनकी लेखन परम्परा एवं प्रक्रिया का सहज परिचय प्राप्त हो सके।

षष्ठ अध्याय में 'हस्तप्रतों में प्रयुक्त चिह्नों व संयुक्ताक्षरों का संपादकीय विवेचन' शीर्षक के तहत संयुक्ताक्षरों की स्थिति, नागरीलिपिबद्ध हस्तप्रतों में प्रयुक्त संयुक्ताक्षर-तालिका, समानता के कारण भ्रम उत्पन्न करनेवाले अक्षर, हस्तप्रतों में प्रयुक्त चिह्न तथा हस्तप्रत पठन-पाठन अभ्यासार्थ वैविध्यपूर्ण शब्दसंग्रह आदि का समावेष किया गया है।

परिशिष्ट के तहत लिपिविकासदर्शक तालिका, ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ, नागरी आदि इन चारों लिपियों में प्रयुक्त वर्णों की संयुक्त तालिका, विविध शताब्दियों की शारदालिपिबद्ध हस्तप्रतों में प्रयुक्त वर्णों की तालिका तथा पाण्डुलिपि एवं पुरालिपिशास्त्र पठन-पाठन अभ्यासार्थ विविध शताब्दियों में निबद्ध हस्तप्रतों की रंगीन प्रतिलिपियाँ संकलित की गई हैं।

सन्दर्भग्रन्थसूचि के तहत पाण्डुलिपि एवं पुरालिपिशास्त्र विषयक विविध महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों एवं ग्रन्थकारों तथा संपादक, प्रकाशक एवं प्रकाशन स्थल व समय आदि का उल्लेख किया गया है।

इस सूचि में प्रदर्शित समस्त ग्रन्थ 'आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर, कोबा, जिला-गाँधीनगर, गुजरात' के ग्रन्थागार में सुव्यवस्थित रूप से विद्यमान हैं। संगणकीय प्रणाली के सहयोग से यह संस्थान अपने वाचकों को आवश्यक ग्रन्थ व महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ यथाशीघ्र उपलब्ध कराने के लिए संकल्पित है।

उपरोक्त लिपियों का पठन-पाठन पुनः प्रारंभ हो तथा इन्हें जानने वाले पण्डित तैयार हों, इस हेतु से हमने यहाँ ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ एवं प्राचीन देवनागरी लिपियों का किंचित परिचय प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

For Private and Personal Use Only

आशा है गवेषकों को हमारा यह प्रथम प्रयास पसन्द आयेगा और इसके माध्यम से कुछ नये लिपि-विशेषज्ञ अवश्य तैयार होंगे। भविष्य में वे प्राचीन श्रुतसंपदा के संरक्षण-संवर्धन-संपादन आदि कार्यों में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान कर भारतीय प्राचीन श्रुतपरम्परा एवं संपदा को युग-युगान्तरों तक जीवित रखने में सयोग प्रदान करेंगे, इस विश्वास के साथ यह लघुकृति विद्वज्जनों के करकमलों में सादर समर्पित है।

प्राचीन लिपियों के ज्ञानार्थ प्रस्तुत ग्रन्थ हमारा प्रथम प्रयास है, फलस्वरूप त्रुटियाँ एवं कमियाँ होना स्वाभाविक है। प्रबुद्ध पाठकों से अनुरोध है कि वे हमें इससे अवगत कराने की कृपा करेंगे ताकि आगामी संस्करण में परिमार्जन किया जा सके। इसी आशा के साथ...

पर्युषण पर्व **डॉ. उत्तमसिंह**

सितम्बर-२०१६ **आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर**

(जैन व प्राच्यविद्या शोध-संस्थान एवं ग्रन्थालय)

कोबा - गांधीनगर, गुजरात

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषयानुक्रम

अनुक्रम	विषय	पृष्ठ
	(i) **आशीर्वचन**	3
	(ii) **शुभानुशंसा**	4
	(iii) **प्रकाशकीय**	5
	(iv) **संपादकीय**	7
	(v) **विषयानुक्रम**	14
1.	**प्राचीन भारतीय लेखनकला**	**1-34**
	(i) लिपिशास्त्र उद्भव और विकास	1
	(ii) भाषा और लिपि समीक्षात्मक विश्लेषण	6
	(iii) भारतीय पुरालिपियों का उद्भव-विकासदर्शक रेखाचित्र	10
	(iv) पुरालेखीय साधन-सामग्री-लिप्यासन आदि	11
	(v) पाण्डुलिपि परिचय	27
2.	**ब्राह्मी लिपि**	**35-54**
	(i) उद्भव और विकास	35
	(ii) ब्राह्मी लिपि नामकरण अवधारणा	37
	(iii) ब्राह्मी लिपि की विशेषताएँ	38
	(iv) ब्राह्मी लिपि की वर्णमाला	40
	(v) ब्राह्मी लिपि की बाराक्षरी	43
	(vi) ब्राह्मी लिपि में संयुक्ताक्षरयुक्त शब्द लेखन अभ्यास	48
	(vii) ब्राह्मी अंकों का विकासक्रम	49
	(viii) ब्राह्मी लिपि में नमस्कार महामंत्र	50
	(ix) ब्राह्मीलिपिबद्ध अशोक-कालीन शिलालेख	51
3.	**शारदा लिपि**	**55-102**
	(i) उद्भव और विकास	55

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(ii) शारदा लिपि नामकरण अवधारणा 59
(iii) शारदा लिपि की विशेषताएँ 60
(iv) शारदा लिपि की वर्णमाला 63
(vi) शारदा लिपि में अंक लेखन 75
(vii) शारदा लिपि की बाराक्षरी 76
(viii) शारदा लिपि में संयुक्ताक्षर लेखन विधान 81
(ix) संयुक्ताक्षर तालिका 85
(x) शारदा लिपि में संयुक्ताक्षरयुक्त शब्द लेखन अभ्यास 88
(xi) शारदा लिपि में नमस्कार महामन्त्र लेखन अभ्यास 92
(xii) शारदा एवं नागरीलिपिबद्ध पाण्डुलिपि ॥ गौरीदशकम्॥ 93
(xiii) शारदा-लिपिबद्ध एक शिलालेख 100

4. ग्रंथ लिपि 103-123

(i) उद्भव और विकास 103
(ii) ग्रंथ लिपि नामकरण अवधारणा 104
(iii) ग्रंथ लिपि की विशेषताएँ 105
(iv) ग्रंथ लिपि की वर्णमाला 107
(v) ग्रंथ लिपि की बाराक्षरी 112
(vi) ग्रंथ लिपि संयुक्ताक्षर तालिका 117
(vii) ग्रथ लिपि में अंक लेखन 117
(viii) ग्रंथ लिपि में नमस्कार महामन्त्र लेखन अभ्यास 118
(ix) ग्रंथ लिपि में संयुक्ताक्षरयुक्त शब्द लेखन अभ्यास 119
(x) ग्रंथलिपिबद्ध भक्तामरस्तोत्र की ताडपत्रीय प्रत 122
(xi) ग्रंथ-लिपिबद्ध एक शिलालेख 123

5. प्राचीन नागरी लिपि 124-158

(i) उद्भव और विकास 124

For Private and Personal Use Only

(ii) नागरी लिपि नामकरण अवधारणा 125
(iii) नागरी लिपि की विशेषताएँ 126
(iv) नागरी लिपि की वर्णमाला 131
(v) जैन देवनागरी-लिपिबद्ध कक्कापाटी काष्ठपट्टिका 137
(vi) नागरी लिपि की बाराक्षरी 138
(vii) नागरी लिपि में अंक लेखन 143
(viii) नागरी लिपि में संयुक्ताक्षरों की स्थिति 145
(ix) नागरी लिपि में नमस्कार महामन्त्र लेखन अभ्यास 146
(x) नागरी लिपि में संयुक्ताक्षरयुक्त शब्द लेखन अभ्यास 146
(xi) जैन देवनागरी-लिपिबद्ध पाण्डुलिपि 150
(xii) नागरी-लिपिबद्ध पाण्डुलिपि 151
(xiii) नागरी-लिपिबद्ध शिलालेख 152
(xiv) जैन देवनागरी लिपि की विशेषताएँ 156

6. हस्तप्रतों में प्रयुक्त चिह्न, संयुक्ताक्षर व संख्यासूचक अक्षर 147-158

(i) संयुक्ताक्षरों की स्थिति 161
(ii) समानता के कारण भ्रम उत्पन्न करनेवाले अक्षर 162
(iii) हस्तप्रतों में प्रयुक्त चिह्न 166
(iv) हस्तप्रत पठन-पाठन अभ्यासार्थ शब्दसंग्रह 169

7. परिशिष्ट 179-216

(i) चारों लिपियों में प्रयुक्त वर्णों की संयुक्त तालिका 179
(ii) शारदा-लिपिबद्ध हस्तप्रतों में प्रयुक्त वर्णों की तालिका 183
(iii) लिपि-विकास-दर्शक तालिका 195

8. संदर्भग्रन्थ-सूचि 214-216

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राचीन भारतीय लेखनकला

प्राचीनकाल से मानव स्वकीय संस्कृति एवं इतिहास का निर्माण करता हुआ निरन्तर आगे बढ रहा है। इसके प्रमाण पुरातन गुह्य-चित्रों, भवनों के खण्डहरों, समाधियों, मंदिरों तथा अन्य वस्तुएँ जैसे-मृद्भाण्ड, मुद्राएँ, मृण्मूर्तियाँ, ईंटें, अस्त्र-शस्त्र आदि उपलब्ध प्राचीन सामग्री से मिल जाते हैं। इनके अलावा शिलालेख, चट्टानलेख, ताम्रलेख, भित्तिचित्र, ताडपत्र, भोजपत्र, कागज, कपडा एवं मुद्रालेख आदि भी उसकी अनवरत प्रगति के सूचक हैं।

ये ही वे अवशेष हैं जिनके माध्यम से मनुष्य अपने इतिहास का ताना-बाना बुनते हुए नई खोज के साथ एक विकसित और सभ्य समाज का निर्माण करता हुआ प्रगतिपथ पर आगे बढने का प्रयास कर रहा है। उदाहरणार्थ प्राचीन गुफाओं में मिलनेवाले वे चित्र जिन्हें तत्कालीन मानव ने उकेरा था; उन्हें उसके तत्कालीन जीवन का साक्षात् इतिहास कहा जा सकता है।

धीरे-धीरे इतिहास और संस्कृति के विकासक्रम में मानव एक ऐसे बिन्दु पर पहुँचता है जहाँ एक ओर वह चित्रों से लिपि की ओर बढता है तो दूसरी ओर अपनी भाषा का विकास करता है। इस प्रकार लिपि और भाषा के सहारे आदिकाल से अद्यपर्यन्त मनुष्य अपने को प्रतिबिम्बित करता आ रहा है।

सभ्यता और संस्कृति के विकास के साथ-साथ भाषा एवं लेखनकला का विकास भी होता रहा। प्रारंभ में लिखने के साधन गुफाओं की दीवारें, ईंट, पत्थर, मृद्पात्र एवं शिलापट्ट आदि थे। देश-काल-परिस्थिति अनुसार ये साधन बदलते गये और लिपि एवं भाषा परिष्कृत होती गयीं।

लिपिशास्त्र उद्भव और विकास :

लिपि शब्द संस्कृत के 'लिप्' धातु से 'इन्' प्रत्यय लगाकर निष्पन्न हुआ है।[1] जिसका अर्थ है- लीपना, मांढना या लिखना। प्राचीनकाल में जब लोग कच्चे मकानों या घास-फूँस से निर्मित झोंपडियों में रहते थे तब वे अपने घरों को गाय के गोबर तथा मिट्टी-पानी आदि का पतला मिश्रण बनाकर उससे लीपते

1. उणादिसूत्र ४.११९, शब्दकल्पद्रुम, पृष्ठ २२३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

थे। इसी मिश्रण से घर के दरवाजे पर कुछ चित्र, बेलबूटे तथा गाय, मोर, बतख आदि पशु-पक्षियों की आकृतियाँ बनाया करते थे, जिसे मांढना[1] कहा जाता था। यह लीपना या मांढना ही संभवतः लिपि का प्राचीनतम स्वरूप रहा होगा। इसी सन्दर्भ में अमरकोश में 'लिखिताक्षरसंस्थाने लिपिलिबिरुभे स्त्रियौ' प्रयुक्त हुआ है।[2]

मनुष्य ने भाषा पहले और लिपि बाद में अर्जित की फिर भी, सभ्यता के विकास में लिपि के योगदान को भाषागत योगदान से कम गौरवपूर्ण नहीं आँका जा सकता है। अतः लिपि के आविष्कार को मनुष्य के सर्वोत्कृष्ट आविष्कारों में से एक गिना जा सकता है। भाषा को दृश्यरूप में स्थायित्व प्रदान करने का काम लिपि ही करती है। या ऐसा कहना भी निरर्थक नहीं होगा कि लिपि भाषा को पंख लगा देती है। व्यावहारिक दृष्टि से दोनों एक-दूसरे के लिए नितान्त आवश्यक हैं। फिर भी लिपि के लिए जैसी अनिवार्यता भाषा की है, वैसी भाषा के लिए लिपि की नहीं है। तात्पर्य यह है कि भाषा लिपि के बिना भी रह सकती है किन्तु भाषा के बिना लिपि निरर्थक रेखाओं और बिन्दुओं के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। यहाँ हम भाषा एवं लिपियों के उद्भव और विकास तथा साम्य वैषम्य का विचार कर इसे जानने का प्रयास करते हैं।

इतिहास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि लिपि के विकास की मुख्यतया तीन अवस्थाएँ रही हैं- चित्रलिपि, भावलिपि और ध्वनिलिपि।

चित्रलिपि :

चित्रों के माध्यम से विचारों की अभिव्यक्ति की प्रक्रिया को चित्रात्मक लिपि कहते हैं। यह लिपि का प्राचीन रूप था। जिस वस्तु का वर्णन करना हो उसका चित्र बनाकर अभिव्यक्त किया जाता था। इससे संबद्ध व्यक्ति लिखनेवाले के भावों को समझ जाता था। प्रारम्भ में इसका प्रयोग प्रायः प्रत्येक देश में होता था। मिस्र, मेसोपोटामिया, स्पेन, अमेरिका, चीन तथा भारत में इसके प्राचीन अवशेष उपलब्ध हैं। तत्कालीन इस लिपि का सम्बन्ध भाषा के

1. राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात आदि राज्यों में यह शब्द आज भी चित्र आदि बनाने के अर्थ में प्रयुक्त होता है।

2. अमरकोश, क्षत्रियवर्ग, द्वितीयकाण्ड, पृष्ठ १८३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्रव्यरूप से बिल्कुल नहीं था। इस कारण वास्तविक अर्थ में इसे लिपि कहना भी युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता है। वर्तमान में चीन की लिपि चित्रलिपि का ही एक जीता-जागता उदाहरण है। कुछ प्रदेशों में रस्सी में गाँठ बाँधकर सन्देश भेजने का कार्य संपादित किया जाता था जिसे चित्रलिपि का ही एक प्रकार कह सकते हैं।

भावलिपि :

इसे लिपिविकास का दूसरा चरण कहा जा सकता है। इस लिपि में प्रयुक्त चित्र सिर्फ वस्तुविशेष के बोधक न रहकर वस्तुओं में निहित सूक्ष्म भावों के भी प्रतीक बनने लगे। यथा वृत्त का तात्पर्य मात्र सूर्य ही नहीं बल्कि ताप और प्रकाश अथवा सूर्य से सम्बन्धित देवता भी समझा जाने लगा। पशु के बोध के लिए पशु के संपूर्ण अंकन की आवश्यकता नहीं रही बल्कि उसके लिए पशु सिर का चित्र भी पर्याप्त माना गया। दुःख के बोधनार्थ आँख से गिरते हुए आँसु की बूँद का प्रयोग होने लगा। चलने के लिए पैरों की आकृति बना दी जाती थी। इस प्रकार चित्रों के माध्यम से भावमूलक लिपि का विकास हुआ।

ध्वनिलिपि :

यह लिपिविकास का तृतीय चरण था जो तत्कालीन मानव की लिपि संबंधी सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि थी। इसमें प्रत्येक ध्वनि के लिए भाषा एवं व्याकरणसम्मत उच्चारणस्थानों को ध्यान में रखकर कुछ संकेत निर्धारित किये गये। इन लिपिचिन्हों के द्वारा मुखोच्चारित प्रत्येक ध्वनि को लिपिबद्ध किया जा सकता था। देशकाल एवं परिस्थिति भेद से ध्वनिलिपियाँ अलग-अलग विकसित होने लगीं। ब्राह्मी, खरोष्ठी आदि प्राचीन लिपियाँ इसका उदाहरण हैं।

प्राचीन लिपियों के उद्भव एवं विकासक्रम की परंपरा के अवलोकनार्थ भाषा एवं लिपियों के साम्य-वैषम्य विषयक प्रक्रिया निम्नवत् है-

भाषा और लिपि का परस्पर अविनाभाव सम्बन्ध है। इनके उद्भव और विकास का इतिहास आज भी गवेषकों के लिए शोध का विषय बना हुआ है। मानव जब जंगलों एवं गुफाओं में रहता था तब वह अपनी गुफा में विविध प्रकार की रेखाओं के माध्यम से कुछ आकृतियाँ बनाया करता था। अपने घोडों

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तथा अन्य पालतु जानवरों की पहचान के लिए उनके शरीर पर विविध कोटि के चिह्न बनाया करता था।

किसी बात को स्मरण रखने के लिए लताओं तथा रस्सियों में गाँठ बाँधकर रखता था। इस प्रकार प्राचीनकालीन मानव विविध साधनों के माध्यम से दीर्घकाल पर्यन्त अपने भावों को प्रकट करता रहा। इन्हीं साक्ष्यों के आधार पर समयानुसार विविध लिपियों का विकास होता चला गया। लिपि-विज्ञानियों ने चित्रों एवं लकीरों को विकसित कर वर्णाकार प्रदान किया और इन आकृतियों को लिपि नाम दिया गया। धीरे-धीरे विविध भाषाओं की अपनी-अपनी लिपियाँ बनने लगीं।

कुछ क्षेत्रीय भाषाओं के उच्चारण-वैविध्य के कारण उनकी अपनी लिपियाँ विकसित हुईं। जैसे गुजराती, बंगला, मैथिली (तीरहुता), उडिया, तामिल, तेलुगु, मलयालम आदि। ये लिपियाँ भी हैं और भाषा भी हैं। जैसा कि हम पूर्व में उल्लेख कर चुके हैं कि संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिंदी, मराठी आदि सिर्फ भाषा हैं, लिपि नहीं। अक्सर हम देखते हैं कि आज भी कई लोग हिंदी या संस्कृत-प्राकृत आदि भाषाबद्ध ग्रन्थ जो नागरी लिपि में लिखे हुए होते हैं; को भी हिंदी लिपि में लिखा हुआ कहते हैं; जबकि हिंदी नाम की कोई लिपि ही नहीं है। सही में वह लिपि तो देवनागरी अथवा नागरी लिपि है।

मनुष्य के विचारों को व्यक्त करने का माध्यम वाणी है। यह वाणी विभिन्न भाषाओं के माध्यम से संसार में प्रकट होती है। इन भाषाओं को लम्बे समय तक स्थाई रूप से सुरक्षित रखने व एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने का काम लिपि ही करती है।

भाषा के दो प्रमुख आधार माने गये हैं- (१) ध्वनि या नाद और (२) दृश्य। किसी भाषा का पहले ध्वनि रूप प्रकट होता है। बाद में वह दृश्य स्वरूप के रूप में अपने विकास का मार्ग प्रशस्त कर लेती है। अतः हम कह सकते हैं कि भाव तथा विचारों के प्रकाशन का ध्वनि-स्वरूप भाषा है और उसका दृश्य-स्वरूप लिपि। अर्थात् भाषा को दृष्टिगोचर करने के लिए जिन प्रतीक-चिह्नों का प्रयोग किया जाता है, उन्हें लिपि कहते हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भाषा और लिपि का सम्बन्ध सिक्के के दो पहलुओं के समान है। भाषा के बिना किसी लिपि की संभावना हो ही नहीं सकती। हाँ बिना लिपि के भाषा संभव है। अनेक बोलियाँ और उपभाषाएँ ऐसी हैं जो भावों और विचारों को व्यक्त करने का कार्य करती हैं, किन्तु लिपि के अभाव में उनका विशेष महत्त्व या प्रचार-प्रसार नहीं हो पाया है।

भाषा या बोली का ध्वनि स्वरूप स्थान-काल की सीमा में रहकर ही प्रकट किया जाता है, जबकि लिपि भाषा को स्थान और काल के बंधन से मुक्त कर देती है। इसका तात्पर्य यह है कि बोली गई भाषा किसी स्थान विशेष में उपस्थित व्यक्तियों तक ही सीमित रहती है, किन्तु लिखी गई भाषा दीर्घकाल पर्यन्त विस्तृत असीम भूमि पर कहीं भी उन विचारों और भावों को पहुँचा सकती है। इसी लिए लिपि को भाषा का एक अनिवार्य एवं अत्युत्तम अंग माना गया है। भाषा को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने तथा दीर्घकाल पर्यन्त जीवित रखने का काम लिपि ही करती है।

लिपि के अभाव में अनेक भाषाएँ उत्पन्न होकर नष्ट हो गईं। आज उनका नामो-निशान तक नहीं रहा। लिपि भी इससे अछूती नहीं रही। ललितविस्तर आदि प्राचीन ग्रन्थों में तत्कालीन प्रचलित लगभग चौंसठ लिपियों का नामोल्लेख मिलता है, लेकिन आज उनमें से अधिकांश लिपियाँ व उनमें लिखित साहित्य उपलब्ध नहीं है।

कुछ प्राचीन लिपियाँ आज भी एक अनसुलझी पहेली बनी हुई हैं। उनमें लिखित अभिलेख आज-तक नहीं पढे जा सके हैं। मध्यप्रदेश के जबलपुर शहर के आस-पास विस्तृत पर्वतों एवं गुफाओं में टंकित 'शंख लिपि' के सुन्दर अभिलेखों को भी आज-तक नहीं पढा जा सका है। इस लिपि के अक्षरों की आकृति शंख के आकार की है। प्रत्येक अक्षर इस प्रकार लिखा गया है कि उससे शंखवत् आकृति उभरकर सामने दिखाई पडती है। अतः अनुमान लगाया जा रहा है कि शायद यह शंख लिपि है।

विद्वान् गवेषक इन लेखों को पढने का प्रयास कर रहे हैं लेकिन अभी तक योग्य सफलता नहीं मिल सकी है। खरोष्ठी लिपि को भी पूर्णतः नहीं पढा जा सका है। आज भी विविध सिक्कों, मृद्पात्रों एवं मुहरों पर लिखित ऐसी कई

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिपियाँ और भाषाएँ हमारे संग्रहालयों में विद्यमान हैं जो एक अनसुलझी पहेली बनी हुई हैं और हमारे भाण्डागारों की शोभा बढा रही हैं।

अतः इतना तो निश्चित कहा जा सकता है कि भाषा और लिपि दोनों ही एक-दूसरे के विकास में गाडी के दो पहियों की तरह अहं भूमिका अदा करते हैं। लिपि के अभाव में कोई भी भाषा अपनी निश्चित सीमा से बाहर नहीं जा सकती है।

जिन भाषाओं के पास अपनी लिपि है वे आज खूब फल-फूल रही हैं। कुछ भाषाएँ ऐसी भी हैं जिनकी अपनी लिपि तो नहीं है लेकन दूसरी लिपियों में आसानी से लिखी-पढी जा सकती हैं। ये भाषाएँ इतनी शुद्ध, स्पष्ट और व्याकरणसम्मत हैं कि किसी भी लिपि में हू-ब-हू लिखी-पढी जा सकती हैं। जैसे संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिंदी, मराठी आदि भाषाओं की अपनी कोई लिपि नहीं है, लेकिन इन्हें किसी भी लिपि में लिखा-पढा जा सकता है।

एक प्रकार से देखें तो ये भाषाएँ आज देवनागरी लिपि पर आधारित हैं। इन्होंने देवनागरी लिपि को विशेषरूप से अपनाया है, लेकिन अन्य लिपियों में भी इन भाषाओं का साहित्य प्राचीनकाल से लिखा जाता रहा है जो हमें विविध ग्रन्थागारों में संगृहीत पाण्डुलिपियों एवं अभिलेखों के रूप में प्राप्त होता है।

भाषा और लिपि समीक्षात्मक विश्लेषण :

भाषा के विकास में लिपि का अत्यधिक महत्त्व है। लिपि के अभाव में भाषा अपनी सीमा और परिधि से बाहर नहीं जा पाती, किन्तु लिपि का आधार मिलते ही भाषा का विकास एवं विस्तार प्रारंभ हो जाता है। लिपि के द्वारा ही भाषा में अधिक सूक्ष्मता और निश्चितता आती है।

विदित हो कि प्राचीनकाल में धर्म, साहित्य तथा इतिहास का लिपि से उतना घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं था जितना आज है। आज लिपि के अभाव में साहित्य, इतिहास आदि का होना असंभव-सा प्रतीत होता है, परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। लिपि के अभाव में भी साहित्य, इतिहास आदि हो सकते हैं और थे भी।

अन्तर सिर्फ इतना हो जाता है कि लिपि के अभाव में वे अनिश्चित से

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रहते हैं; ऐसी स्थिति में धर्म धार्मिक क्रियाकांण्डों का, साहित्य कविता का और इतिहास लोक-कथाओं का रूप ग्रहण कर लेता है। प्राचीन ग्रंथों में वर्णित कहानियाँ तथा विभिन्न देशों की परंपरागत लोक-कथाएँ इसके उदाहरण हैं।

जिस प्रकार लेखनकला के अभाव में साहित्य का होना संभव है, उसी प्रकार वर्णमाला के अभाव में लिपि का होना भी संभव है। वर्णमाला के अभाव में मनुष्य रज्जु, रेखा-चित्र, लीपने, माढने आदि द्वारा अपने भावों तथा विचारों को लिपिबद्ध करता था। अतः लिपि के अन्तर्गत वर्ण-लिपि के अतिरिक्त रज्जु-लिपि, रेखा-लिपि, चित्र-लिपि आदि को भी सामिल किया जा सकता है।

भाषा ध्वन्यात्मक होती है जबकि लिपि चिह्नात्मक अथवा अक्षरात्मक होती है। भाषा बोली जाती है जबकि लिपि लिखी जाती है। अर्थात् भाषा का उद्गम स्थान मुख है जबकि लिपि हाथ द्वारा लिखी जाती है।

भाषा को दीर्घकाल पर्यन्त जीवित रखने का काम लिपि करती है। अर्थात् लिपि भाषा को स्थायित्व प्रदान करती है। भाषा को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने का काम भी लिपि ही करती है। प्राचीनकाल में यह कार्य पत्र द्वारा संदेशा भेजने के रूप में किया जाता था, जिसमें काफी समय लगता था। लेकिन आज वैज्ञानिक संसाधनों के विकास के साथ यह कार्य ई-मेल, एस.एम.एस, फैक्स अथवा वॉट्स-अप आदि मेसेंजर द्वारा तुरन्त हो जाता है।

मुख से बोला गया शब्द शीघ्र ही बदला जा सकता है, परन्तु लिखी गई बात को बदलना सरल नहीं होता है। बोली हुई वाणी तुरन्त ही वायु में विलीन होकर नष्ट हो जाती है, लेकिन लिखित बातें हजारों वर्षों तक स्थिर रहती हैं।

भारत में प्राचीनकाल से ही धार्मिक एवं दार्शनिक साहित्य को मौखिक परम्परा द्वारा जीवन्त रखा गया। हमारे वेद-आगम-त्रिपिटक आदि प्राचीन ग्रन्थरत्न इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। इस अमूल्य विरासत को मौखिक परम्परा के माध्यम से ही सदियों तक सुरक्षित रखा गया। कालान्तर में देश-काल-परिस्थिति अनुसार इस परम्परा में परिवर्तन होते रहे हैं। मनुष्य का आयुष्य भी धीरे-धीरे कम होता गया है। इस कारण कुछ ग्रन्थ तो अपने वाहक के साथ ही

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विलीन हो गये।

अतः इन समस्त कारणों को ध्यान में रखते हुए कालान्तर में हमारे ऋषि-महर्षियों ने तत्कालीन उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप लेखनसामग्री एवं विविध लिपियों के माध्यम से प्राचीन साहित्य को लिपिबद्ध करने का निर्णय लिया। जिसके परिणामस्वरूप हमें आज प्राचीन श्रुतसाहित्य उपलब्ध हो सका है।

लगभग दो हजार वर्ष से भी अधिक प्राचीन सम्राट् अशोक के शिलालेख तत्कालीन ब्राह्मी लिपि के कारण आज भी हमारी मूल्यवान निधि के रूप में सुरक्षित विद्यमान हैं।[1] अतः यह निश्चितरूप से कहा जा सकता है कि हमारे सामने आज जितना भी पुरातन साहित्य विद्यमान है, वह लिपि के स्थायित्व का ही परिणाम है।

भाषा और साहित्य की सुरक्षा के लिए भी लिपि ही एकमात्र साधन है। अतः मानवजाति के विकास में भाषा और साहित्य का जो महत्त्व है, लिपि का भी उससे कम नहीं आंका जा सकता है। वर्तमान में कई लिपियाँ एवं भाषाएँ आधुनिक विज्ञान, सभ्यता-संस्कृति एवं राष्ट्र के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।

1. अशोक के शिलालेखों में सर्वथा धम्मलिपि शब्द प्रयुक्त हुआ है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यहाँ कुछ प्रमुख भाषाओं एवं लिपियों को निम्नोक्त सूचि द्वारा प्रदर्शित किया जा रहा है-

भाषा	लिपि
संस्कृत, प्राकृत, पालि अपभ्रंश, मागधी, अर्धमागधी हिंदी, मराठी	ब्राह्मी, खरोष्ठी शारदा, ग्रंथ, प्राचीन नागरी (देवनागरी) नेवारी, नंदी नागरी, जैन देवनागरी
पंजाबी	टाकरी, डोगरी
गुरुमुखी	**गुरुमुखी**
गुजराती	**गुजराती**
मैथिली	**मिथिलाक्षर (तीरहुता)**
बंगाली	**बंगला**
उडिया	**उडिया**
तामिल	**तामिल**
तेलुगु	**तेलुगु**
मलयालम	**मलयालम**
अरबी, पर्सियन, (फारसी)	**अरबी, पर्सियन**
उर्दू	**उर्दू**

इस सूचि में गहरे बोल्ड अक्षरों में लिखित नाम भाषा भी हैं और लिपि भी। इसके अतिरिक्त अन्य सभी नाम ऐसे हैं जो या तो केवल भाषा हैं या फिर केवल लिपि। संस्कृत, प्राकृत, पालि आदि भाषाओं को शारदा, ग्रंथ, नागरी लिपियों में शतशः शुद्ध लिखा जा सकता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारतीय पुरालिपियों का उद्भव-विकासदर्शक रेखाचित्र[1]

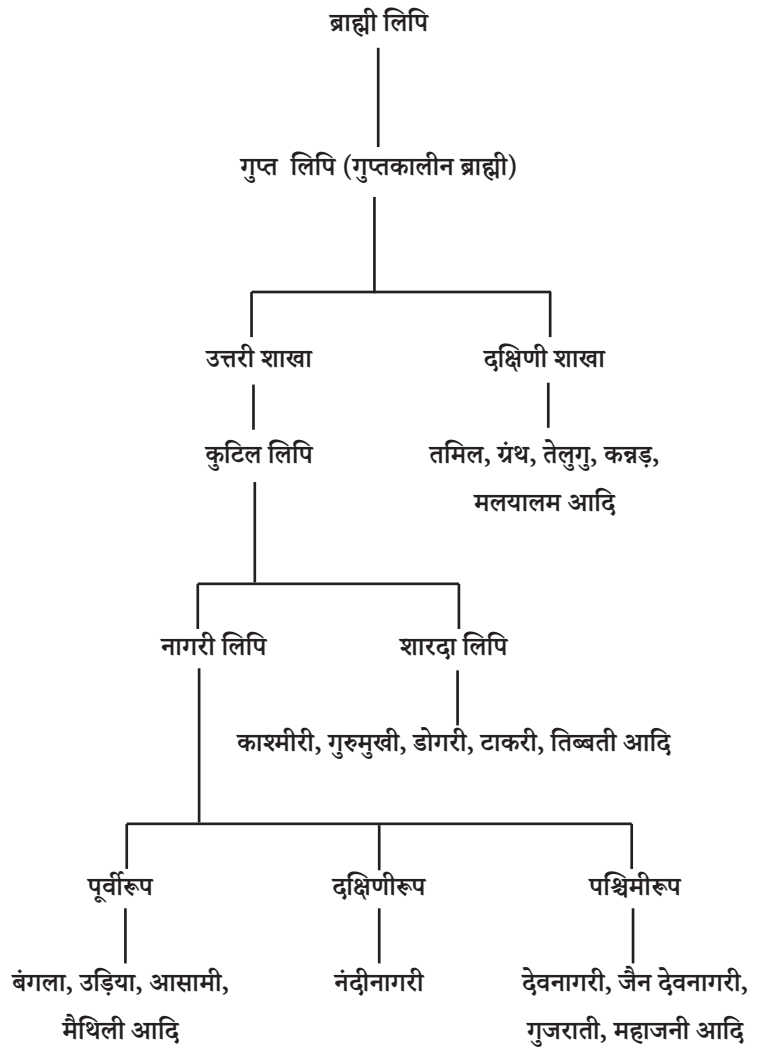

1. रेखाचित्र के माध्यम से ब्राह्मी लिपि के उत्तरी एवं दक्षिणी प्रवाहों से निःसृत एवं विकसित विविध लिपियों का क्रमशः विकासक्रम दर्शाया गया है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुरालेखीय साधन-सामग्री : लिप्यासन आदि :

प्राचीन भारतीय श्रुतसंपदा के रक्षण में तत्कालीन लेखन-सामग्री का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इस सामग्री के तहत मृद्पात्र, सिक्के, मुहरें, शिलाखण्ड, ताम्रपत्र, लोहपत्र, स्वर्ण व रजतपत्र, कांस्यपत्र, मिश्रित धातुपत्र, मिट्टी की कच्ची व पक्की ईंटें, चर्म, कपडा, ताडपत्र, भूर्जपत्र, अगरुपत्र, काष्ठ पट्टियाँ, हस्त निर्मित कागज व प्राकृतिक संसाधनों से निर्मित स्याही, कलम, दवात आदि प्रमुख हैं।

उपर्युक्त संसाधनों के प्रयोग, आकार, प्रकार व लेखन प्रक्रिया में समयानुकूल परिवर्तन होते रहे हैं। यद्यपि ये साधन कबसे उपयोग में आने लगे इसका सही-सही अनुमान लगा पाना बहुत ही मुश्किल है। क्योंकि हमारे पास ऐसे कोई भी स्पष्ट साक्ष्य उपलब्ध नहीं हैं जिनके आधार पर शतशः निर्णय लिया जा सके। आज हमें जो प्राचीनतम सिक्के, मुहरें, मृद्पात्र, विविध लेख आदि प्राप्त हो रहे हैं वे सिर्फ अपने कालखण्ड तक ही सीमित प्रमाण प्रस्तुत कर सकते हैं, जो व्यापक तौर पर करीबन डेढ़-दो हजार वर्ष प्राचीन हैं।

ब्राह्मी, खरोष्ठी या सिन्धुघाटी सभ्यता से प्राप्त प्राचीनतम अभिलेखों की लिपियाँ भी कब से प्रयुक्त होने लगीं, इनसे भी प्राचीन कोई लिपि थी या नहीं, यदि थीं तो उनमें निबद्ध साहित्य का क्या हुआ, मौखिक परम्परा कब तक विद्यमान रही, सबसे पहले क्या, कब और किस लिपि व साधन पर किसके द्वारा लिखा गया? यह यक्षप्रश्न आज भी सदियों से गूढ रहस्य बना हुआ है।

मानवजाति के इतिहास में प्राचीन लेखन-सामग्री ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इसने न केवल मानव संस्कृति व इतिहास को सुरक्षित रखने में योगदान दिया है बल्कि लिपि, भाषा और मनुष्य की चिन्तनधारा को भी काफी गहराई से प्रभावित किया है। अतः यहाँ इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि भारतीय प्राचीन लेखन-सामग्री को जानने का मतलब है प्राचीनकालीन इतिहास एवं संस्कृति को ठीक से समझना।

प्राचीनकाल में भारतीय लेखन-सामग्री के तहत प्रयुक्त विविध साधन-सामग्री एवं तद्विषयक प्रक्रिया आदि का संक्षिप्त परिचय निम्नवत् है-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शैलफलक :

प्राचीन भारत में लेखन हेतु शिलाखण्डों एवं प्राकृतिक रंगों का उपयोग कई हजार साल तक होता रहा है। भीमबेटिका, पञ्चमढी, होसंगाबाद, मिर्जापुर आदि अनेक स्थानों से हजारों वर्ष पुराने शैलचित्र प्राप्त हुए हैं जो प्रागैतिहासिक मानव की जीवनचर्या को प्रदर्शित करते हैं। इन्हें हम आदिम चित्रलिपि के चिह्नों के रूप में देख सकते हैं। इन चित्रों में प्रयुक्त लाल, हरे व सफेद रंग स्थानीय वनस्पतियों और खनिजों से तैयार किए गए हैं, जो आज भी स्थाई है।

भीमबेटिका की पहाडी पर आज भी एक ऐसा वृक्ष पाया जाता है, जिसकी डंठलों से गोंद जैसा सफेद रस निकलता है। डंठल का कूँची की तरह उपयोग करके उसके रस से सफेद चित्र बनाये जाते हैं। उस रस का उपयोग स्थानीय वनस्पतियों से निर्मित हरे अथवा लाल रंगों को पक्का बनाने के लिए भी होता है। संभवतः ऐसी ही प्राकृतिक वनस्पतियों का उपयोग तत्कालीन रंगों के रूप में हुआ होगा। अजन्ता, एलोरा, सिद्धगिरि, खण्डगिरि आदि स्थानों के प्रसिद्ध गुफाचित्र भी तत्कालीन ऐतिहासिक साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं।

मृद्‌फलक व मृण्मुद्रा आदि :

भारतीय संग्रहालयों में चीनी-मिट्टी के बर्तनों तथा ठीकरों पर अंकित हजारों लेख व चित्र आदि संगृहीत हैं जो सिन्धु सभ्यता, मोहनजोदडो, कालीबंगा, पीलीबंगा, मेसोपोटामिया आदि विविध स्थलों की खुदाई से प्राप्त हुए हैं। विश्व की इन प्राचीनतम सभ्यताओं के संक्षिप्त लेख मृद्‌पात्रों के अलावा सेलखडी की मुहरों, ताम्रपट्टियों, लघुप्रस्तरों, काँसे के औजारों, हाथीदाँत व हड्डियों के टुकडों आदि पर अंकित देखने को मिलते हैं, जो अभी भी पूर्णतः पढे नहीं जा सके हैं और अज्ञेय बने हुए हैं। मेसोपोटामिया के निवासी एक छोटी कील से गीली मिट्टी के फलकों पर अक्षर उकेर कर लिखते थे जो कीलाक्षरी लेखों के रूप में जाने जाते हैं। इन्हें भी शतशः पढा नहीं जा सका है।

मृद्‌पात्रों के अलावा मिट्टी की कच्ची अथवा पक्की ईंटों पर भी प्राचीन लेख प्राप्त होते हैं। इन पर नुकीली कील द्वारा लिखकर आग में पकाया जाता था जिससे लम्बे समय तक सुरक्षित रह सकें। मेसोपोटामिया के कीलाक्षर लेख

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मिट्टी के फलकों पर ही लिखे हुए मिले हैं। सिन्धु सभ्यता के स्थलों से भी मिट्टी की अक्षरांकित अनेक मुहरें मिली हैं। नालन्दा एवं राजस्थान से भी मिट्टी की अभिलिखित मुद्राएँ प्राप्त हुई हैं।

शिलाफलक, स्तम्भफलक आदि :

पाषाणीय लेख चट्टानों, शिलाओं, स्तम्भों, मूर्तियों तथा उनके आधार-पीठों और पत्थर के कलश या उनके ढक्कनों आदि वस्तुओं पर उत्कीर्ण प्राप्त होते हैं। प्रारम्भिक काल में लेखों को चिरस्थायी बनाने की दृष्टि से पाषाणों पर उत्कीर्ण किया जाता था। इन पाषाण खण्डों को तरासकर चिकना व लेखन के अनुकूल बनाकर लिखा जाता था। कभी-कभी पाणाण को चिकना किए बिना ही लेख खोद दिये जाते थे। परन्तु जब प्रशस्ति आदि महत्त्वपूर्ण लेख उत्कीर्ण किये जाते थे तो पत्थर को काट-छाँट और छीलकर चिकना किया जाता था। कभी-कभी चिकने पत्थर से रगडकर उसे चमकीला भी बनाया जाता था, जिससे सुन्दर लेखन हो सके। आज दोनों ही प्रकार के लेख हमें देखने को मिलते हैं। गिरनार, सारनाथ, इलाहाबाद, नंदनगढ आदि विविध स्थलों के अशोककालीन शिलालेख आज भी इसके शाश्वत प्रमाण हैं।

पाषाणों पर अक्षरों का उत्कीर्णन करने से पहले लेख की रचना कोई कवि, विद्वान अथवा राज्य का उच्चाधिकारी करता था। लेखक उसे स्याही अथवा खडिया से पत्थर की सतह पर लिख देता था। पट्टी अथवा रंग या कोयले की राख में डुबोए हुए धागे से पत्थर पर सीधी रेखाएँ खींची जाती थीं। अन्त में शिल्पी छेनी-हथोडे से अक्षरों को उत्कीर्ण करता था।[1] अभिलेखों की खुदाई बहुत सावधानी पूर्वक की जाती थी। कभी-कभी पत्थर में टूट या चटक आ जाती थी तो उसे धातु से भरे जाने के संकेत भी मिलते हैं।[2]

शिलालेखों के अलावा कई तरह के प्राचीन स्तम्भलेख भी प्राप्त होते हैं। आज उपलब्ध सम्राट् अशोककालीन ब्राह्मी लिपिबद्ध स्तम्भलेख व काश्मीर के प्राचीन लेख सबसे अधिक प्राचीन माने गये हैं। इन्हें दिल्ली, इलाहाबाद,

1. इस प्रक्रिया के सहज बोधार्थ देखें मुख्य पृष्ठ पर प्रदर्शित चित्र।
2. भारतीय प्राचीन लिपिमाला, पृष्ठ १४८.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लुम्बिनी-नेपाल, सारनाथ, नंदनगढ आदि स्थानों पर आज भी देखा जा सकता है। स्वतन्त्र भारत का सिंहाकृति वाला राष्ट्रचिह्न भी अशोक के सारनाथ वाले स्तम्भ से लिया गया है। विदित हो कि अशोककालीन समस्त स्तंभलेखों के लिए प्रयुक्त बलुआ पत्थर चुनार (उत्तर प्रदेश) की पहाडियों से लिया गया है। एक ही शिलाखण्ड से चयनित इस पत्थर पर पालिश करने के बाद लेख लिखे गये हैं।

स्तम्भलेखों के विविध प्रकार व नामकरण देखने को मिलते हैं, यथा- ध्वजस्तम्भ, जयस्तम्भ, कीर्तिस्तम्भ, वीरस्तम्भ, सतीस्तम्भ, धर्मस्तम्भ, स्मृतिस्तम्भ, यूपस्तम्भ आदि। जिनमें से ध्वजस्तम्भ मन्दिर के सामने खडे किये जाते थे व इन पर तद् विषयक लेख भी लिखे हुए मिलते हैं। जय स्तम्भ पर किसी विजयी राजा की प्रशस्ति लिखी जाती थी। किसी पुण्यकार्य के यशभागी बनने के लिए कीर्तिस्तम्भ स्थापित किये जाते थे। शत्रुओं से लडते हुए वीरगति प्राप्त करने पर अभिलेखयुक्त वीरस्तम्भ खडे किये जाते थे। यज्ञोपरान्त बलि दी जानेवाले पशु को बाँधने के लिए बनाए गये स्तम्भ को यूपस्तम्भ कहा जाता था। इन पर भी प्राचीन लेख उत्कीर्ण किये हुए मिलते हैं जो आज भी तत्कालीन इतिहास के गवाह हैं।

धातुफलक व लेख :

प्राचीनकाल में लेखन सामग्री हेतु स्वर्ण, रजत, ताम्र, कांस्य, लोह, मिश्रित धातु आदि का प्रयोग भी खूब हुआ है। स्वर्ण एवं रजत का प्रयोग विविध प्रकार की स्याही बनाने के लिए भी होता रहा है। आज भी हमारे ग्रन्थागारों में सोनेरी, रूपेरी स्याही से लिखे हुए हजारों प्राचीन ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ देखने को मिलती हैं।

उपर्युक्त धातुओं में से लेखन हेतु सर्वाधिक प्रयोग ताम्र का हुआ है। राजाओं के द्वारा दिये गये दान और अधिकारपत्र तांबे की पट्टिकाओं पर अंकित किये जाते थे। आज भी ताम्रपत्रों पर लिखे हुए दानपत्र, प्रशस्तियाँ तथा कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे हुए प्राप्त होते हैं। इन्हें ताम्रपत्र अथवा 'ताम्रशासन' के नाम से जाना जाता है। चीनी यात्री फाह्यान अपने यात्रा-विवरण में लिखते हैं कि 'भारत में बौद्ध विहारों में दान से संबंधित ताम्रपटों को सुरक्षित रखने की

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रथा काफी पुरानी है'। कहा जाता है कि कनिष्क ने महायानीय बौद्ध ग्रन्थों को ताम्रपटों पर खुदवाकर और पत्थर की पेटियों में बन्द करके कश्मीर के एक स्तूप में सुरक्षित रखवा दिया था।

ताम्र अथवा उपर्युक्त धातुपटों को दो तरह से तैयार किया जाता था- हथौडे से ठोककर व उकेरकर अथवा बालू के साँचे में ढालकर। हथौडे से ठोकर बनाए गए ताम्रपटों पर ठठेर के चिह्न आसानी से पहचाने जा सकते हैं। इन पटों पर मूल पाठ को लहिया द्वारा स्याही अथवा नुकीली सुई से खरोंचकर लिख दिया जाता था।

तदनन्तर कारीगर किसी तीक्ष्ण औजार से उस पर अक्षर खोदता था। गलत अक्षर खोदे जाने पर उस स्थान को हथौडे से पीटकर और काट-छाँटकर सही अक्षर बनाये जाते थे या फिर उन्हें हाँसिए[1] पर लिख दिया जाता था। लेखन की सुरक्षा हेतु इन पटों के किनारों को कुछ मोटा बनाया जाता था, या फिर थोडा उठाव दिया जाता था। यदि दो से अधिक पत्रों का संग्रह हो तो उनमें बाईं ओर एक छिद्र करके उसमें धातु की कडी पिरो दी जाती थी जिससे एक साथ संलग्न रखे जा सकें।[2]

शिलालेखों के अलावा शंख, हाथीदाँत, काँच की मुद्राएँ, लकडी की पट्टियाँ, स्तम्भों तथा स्फटिक जैसे कीमती पत्थरों का उपयोग भी लेखन हेतु खूब हुआ है।

ताडपत्र :

हिन्दुस्तान में लेखन हेतु ताडपत्रों का उपयोग प्राचीनकाल से होता आ रहा है। सुरक्षा की दृष्टि से लेखनार्थ प्रयुक्त तत्कालीन संसाधनों में से सर्वाधिक सरल-सुलभ और दीर्घकाल पर्यन्त टिक सके ऐसी वस्तु सिर्फ ताडपत्र ही थे। अतः हमारे पूर्वजों ने इन्हें ही लेखन-सामग्री के रूप में अपना लिया। आज भी हमारे ग्रन्थागारों में लाखों की संख्या में ताडपत्रीय पाण्डुलिपियाँ संगृहीत हैं

1. लेख के आजु-बाजू का रिक्तस्थान

2. ताडपत्रीय पाण्डुलिपियों को सुरक्षित रखने के लिए भी इसी परम्परा का अनुसरण किया गया है, जिसके तहत ताडपत्रों के मध्य में एक अथवा दो छिद्र करके उनमें एक पतली रस्सी पिरोकर बाँध दिया जाता था।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिनके आधार पर ही प्राचीन भारत को 'पाण्डुलिपियों का देश' कहा गया है। ये पाण्डुलिपियाँ तालवृक्ष के पत्रों से निर्मित की जाती थीं। ताल या ताड वृक्ष दो प्रकार के होते हैं- (१) खरताल व (२) श्रीताल।

खरताल के वृक्ष राजस्थान, गुजरात, पंजाब, दक्षिण भारत आदि प्रान्तों में आज भी देखने को मिलते हैं। इनके पत्ते मोटे और कम लम्बे होते हैं। ये सूखकर तडकने (फटने) लगते हैं और कच्चे तोडने पर जल्दी ही सड-गल जाते हैं। इसलिए इनका उपयोग पोथी लिखने हेतु बहुत कम होता था।

श्रीताल के वृक्ष दक्षिण भारत के तटीय प्रान्तों, उडीसा, बंगाल, कर्नाटक, म्यांमार, नेपाल, तिब्बत, श्रीलंका आदि स्थानों पर आसानी से मिल जाते थे। लेकिन अब सिर्फ श्रीलंका में ही ये वृक्ष मिलते है। आज श्रीताल के पत्रों पर लेखनकार्य हेतु श्रीलंका से ही ये पत्र मंगवाने पडते हैं। इनके पत्र लगभग एक मीटर से कुछ लम्बे और करीबन दस सेंटीमीटर चौडे होते हैं। ये पत्ते मुलायम होते हैं तथा लम्बे समय तक सुरक्षित रह सकते हैं। इसीलिए ग्रन्थ लेखन एवं चित्रांकन हेतु अधिकतर इन्हीं का उपयोग हुआ है। विदित् हो कि ये पत्र श्रीताल के पत्तों की डण्ठल के अन्दर की परत होते हैं, न कि पत्ते।

ग्रन्थ लेखन से पूर्व ताडपत्रों को प्राकृतिक संसाधनों द्वारा सुरक्षित करने हेतु धीमी धूप में सुखाने के बाद हरिद्रा, लवंग, तंबाकू, नीम, घुडवच (अश्वगंधा), इलायची आदि के मिश्रणयुक्त जल में कुछ समय तक भिगोए रखकर पुनः सुखाया जाता था। कुछ समय के लिए इन पत्रों को भीनी जमीन में तम्बाकु के पत्तो के साथ गाड कर रखा जाता था। किंचित् गीले रहते ही इन पत्रों को शंख, कौडी या चिकने पत्थर से घोटा जाता था जिससे लेखन के अनुकूल बन सकें। फिर उन्हें इच्छित आकार में काटकर लोहे की शलाका से उन पर अक्षर कुरेदे जाते थे। इस प्रकार लेखनकार्य पूर्ण होने के बाद पत्रों पर कज्जल पोत दिया जाता था, जिससे अक्षरों में काली स्याही भर जाती। तत्कालीन स्याही भी प्राकृतिक संसाधनों से ही बनाई जाती थी जो आज तक भी इन ग्रन्थों में स्थाई रूप से देखने को मिलती है। उडीसा में ताडपत्रों पर लेखन हेतु सेम के पत्तों से निर्मित स्याही का प्रयोग भी खूब होता था।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दक्षिण भारत में ताडपत्र लेखन हेतु उपर्युक्त पद्धति प्रयुक्त हुई है जबकि उत्तर भारत में ताडपत्रों पर प्रायः स्याही से लेखनी द्वारा लिखा जाता था। ताडपत्रीय ग्रन्थों के संरक्षण की दृष्टि से देखें तो इनके लिए गर्म जलवायु बहुत हानिकारक है। शायद यही कारण है कि समुद्र तटीय प्रदेशों में ताडपत्रीय ग्रन्थ बहुतायत में लिखे जाने के बावजूद भी वहाँ की गर्म जलवायु के कारण आज अति जीर्ण अवस्था में प्राप्त होते हैं। लेकिन उत्तर भारत की जलवायु नमीयुक्त, शुष्क एवं ठण्डी होने के कारण यहाँ के संग्रहालयों में संगृहीत ग्रन्थ अधिक सुरक्षित स्थिति में प्राप्त हो रहे हैं। चिकनेपत्तों की बड़ी थप्पी कागज की तरह टिक न सकने से ताडपत्रों के रक्षण हेतु प्रयुक्त लकडी की पट्टियों एवं उन्हें बाँधने के लिए काम में ली जानेवाली डोरी (पतली रस्सी) तथा ग्रंथी-बन्धन आदि का भी विशेष महत्त्व रहा है। इसे तत्कालीन पुस्तक बाइण्डिंग का एक प्रकार कहा जा सकत है। इसीलिए अधिकांश ग्रन्थों की पुष्पिकाओं में ग्रन्थ-रक्षणार्थ शिथिल बन्धन नहीं करने हेतु स्पष्ट निर्देश प्राप्त होते हैं।[1]

भूर्जपत्र (भोजपत्र) :

भूर्ज नामक वृक्ष हिमालय के तराई वाले क्षेत्र में बहुतायत से मिलता है। इसकी भीतरी छाल, जिसे 'कविकुलगुरु कालिदास' ने अपने ग्रन्थों में 'भूर्जत्वक्' कहा है; कागज की तरह होती है। यह छाल कई मीटर लम्बी निकाली जा सकती है। इसे 'भोजपत्र' के नाम से भी जाना जाता है। इन पत्रों की विशेषता यह होती है कि ये बहुत पतले व चिकने होते है। भूर्जपत्र परत दर परत होते है अर्थात् जिस प्रकार हमारी त्वचा के अन्दर कंई परतें होती हैं उसी प्रकार इन भूर्जपत्रों में भी कई परतें होती हैं। इन पत्रों का भी प्राचीनकाल से लेखनार्थ प्रयोग होता रहा है, लेकिन ताडपत्र के समान नहीं। क्योंकि ये ताडपत्र की तुलना में कम टिकाऊ होते हैं। अधिक पतले होने के कारण सूखे हुए भूर्जपत्रों को सुरक्षित रख पाना भी बहुत मुश्किल होता है। यदि इन्हें सावधानी पूर्वक नहीं पकडा जाये तो ये टूटकर चूर-चूर हो जाते हैं।

भोजपत्रों का प्रयोग तन्त्र-मन्त्र व ज्योतिषीय ग्रन्थों के लेखनार्थ अधिक

1. तैलाद्रक्षेज्जलाद्रक्षेत् रक्षेच्छिथिलबन्धनात्।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हुआ है। इन पर कलम व स्याही द्वारा कागज की तरह लिखा जाता था। भूर्जपत्रों पर लिखी हुई अधिकतर पुस्तकें काश्मीर, अफगानिस्तान, सिन्धप्रान्त, खोतान, तिब्बत एवं उडीसा आदि प्रदेशों से प्राप्त हुई हैं। गिलगित से प्राप्त शारदा लिपिबद्ध अति जीर्ण और प्राचीनतम पाण्डुलिपियाँ भी भूर्जपत्रों पर ही लिखी हुई हैं, जो ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण मानी गई हैं।

प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता अलबरूनी ने 'अलहिन्द' नामक अपने ऐतिहासिक ग्रन्थ में भारत में लेखन हेतु प्रयुक्त भूर्जपत्रों व उनकी प्रक्रिया का वर्णन करते हुए कहा है कि- 'मध्य और उत्तरी भारत के लोग तूज (भूर्ज) वृक्ष की छाल पर लिखते हैं। वे उसके एक मीटर लम्बे और एक बालिश (बिलांद) चौडे पत्रे लेते हैं और उनको भिन्न-भिन्न प्रकार से लेखनार्थ तैयार करते हैं। पत्रों को मजबूत और दीर्घकाल तक टिकाऊ बनाने के लिए वे उन पर तेल लगाते हैं और घोंटकर चिकना बनाते हैं, और फिर उन पर स्याही व कलम द्वारा लिखते हैं। छेद बनाने के लिए मध्यभाग में थोडी खाली जगह छोड दी जाती थी[1]। पुस्तक के ऊपर और नीचे रखी जाने वाली लकडी की पट्टिकाओं में भी उसी अन्दाज में छेद किये जाते थे, ताकि उनमें डोरी पिरोकर पुस्तक को बाँधा जा सके।'

अगरुपत्र :

प्राचीनकाल में लेखन हेतु अगरु वृक्ष के तने की आन्तरिक छाल (प्लाई) का प्रयोग भी खूब हुआ है। इसे अगरपत्र के नाम से भी जाना जाता है। अगरु वृक्ष की लकडी चन्दन की तरह सुगन्धित होती है, अतः विविध प्रकार के सुगन्धित विलेपन तथा अगर-बत्ती आदि बनाने में भी इस वृक्ष की लकडी का प्रयोग होता रहा है। पूर्वोत्तर भारत में इन अगरपत्रों का ग्रन्थ लेखन व चित्र बनाने हेतु काफी प्रयोग हुआ। आसाम में अगरु के वृक्ष बहुतायत से देखने को मिलते हैं। इस प्रदेश

1. भूर्जपत्र के मध्यभाग में छिद्र करने की परम्परा का जो उल्लेख यहाँ अलबरूनी ने किया है उसमें संभवतः ताडपत्र की हस्तप्रत का ही उल्लेख लगता है, क्योंकि भूर्जपत्र बहुत पतले होने के कारण उनके मध्यम में छिद्र नहिं किया जाता था। भूर्जपत्रों को तो उनके उपर-नीचे लकड़ी की चौडी तक्ति लगाकर रखने की परम्परा मिलती है। भूर्जपत्र अत्यन्त पतले और नाजुक होते हैं, यदि इनके मध्य में छिद्र किया जाये तो ये वहीं से फट सकते हैं। अद्यपर्यन्त प्राप्त भोजपत्रीय हस्तप्रतों में छिद्र देखने को नहीं मिला है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में इन वृक्षों से लेखनार्थ प्राप्त छाल को 'सांचीपात' कहा जाता है।

अगरुपत्रों को लिखने हेतु तैयार करने में बहुत अधिक परिश्रम करना पडता था। ये ताडपत्रों की तुलना में अधिक मोटे होते हैं व कम टिकाऊ होते हैं। सूखने पर इनमें शीघ्र ही दरार पडने की संभावना रहती है। फिर भी प्राचीनकाल से इनका लेखनार्थ प्रयोग होता रहा है। बौद्ध ग्रन्थों के लेखनार्थ अगरपत्रों का बहुतायत में प्रयोग हुआ है। ये दो प्रकार के होते हैं- काले व सफेद। इन दोनों का ही प्रयोग लेखनार्थ हुआ है। आज भी हमारे ग्रन्थागारों में अगरुपत्रों पर लिखित हजारों पाण्डुलिपियाँ संगृहीत हैं।

काष्ठफलक, पट्टिका आदि :

प्राचीनकाल में लकडी की तख्ती या काष्टफलक का प्रयोग भी लेखनार्थ हुआ है। इन काष्ठ पट्टिकाओं पर लिखित प्राचीन राजाज्ञाएँ तथा विविध लिपियों की वर्णमालाएँ प्राप्त होती हैं। पश्चिमी राजस्थान तथा गुजरात के कई प्रान्तों में प्राचीन लिपियों के बोधार्थ पाठशालाओं में भी इन पट्टिकाओं का खूब उपयोग हुआ है।

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा के संग्रहालय में आज भी ऐसी कई प्राचीन काष्ठ पट्टिकाएँ संगृहीत हैं। इन पर प्राचीन नागरी लिपि की संपूर्ण वर्णमाला उत्कीर्ण है। बौद्ध जातक कथाओं में भी प्राथमिक शालाओं में शिशुओं की शिक्षा के प्रसंग में फलक शब्द का प्रयोग हुआ है। संभवतः यहाँ काष्टफलक ही अभिधेय रहा होगा। एक बौद्ध काष्ठपलक भी आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर कोबा के भण्डार में संगृहीत है, जिस पर भोट लिपि में सम्पूर्ण वर्णमाला लिखी हुई है। इस फलक पर उत्कीर्ण अक्षरों की लिखावट अति सुन्दर लगती है।

इन काष्टफलकों पर विविध प्रसंगों के अनुरूप चित्रकारी भी की जाती थी। ताडपत्रीय ग्रन्थों के ऊपर-नीचे लगाई जानेवाली काष्ठ पट्टियों पर भी विविध प्रकार के सुन्दर चित्र बने हुए देखने को मिलते हैं। इन चित्रों में तत्कालीन प्राकृतिक रंगों का प्रयोग हुआ है जो आज भी सुरक्षित हैं।

वस्त्रपट :

प्राचीनकाल में लेखन हेतु सूती तथा रेशमी वस्त्र से निर्मित पटों का भी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है। प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थ अलहिन्द में अलबरूनी ने उल्लेख किया है कि 'काबुल के शाहीवंशीय राजाओं की रेशमी कपडे पर लिखी हुई वंशावली नगरकोट के किले में होने की उन्हें जानकारी मिली थी, मगर वे उसे देख नहीं पाए'। सिकन्दर के नौसेनाध्यक्ष नियार्कस् (ई.पू. चौथी सदी) का उल्लेख है कि 'भारतीय लोग अच्छी तरह से कूटे हुए कपास के कपडे पर पत्र लिखते थे'।

जिस कपडे पर लिखा जाता था उसके छिद्रों को बन्द करने के लिए आटा, चावल का मांड या लेई अथवा पिघला हुआ मोम लगाकर उस परत को सूखने के बाद अकीक पत्थर या शंख आदि से घोटकर उसे चिकना बनाते थे। उसके बाद लिखने अथवा चित्र बनाने हेतु ऐसे कपडों को एक फ्रेम में खींचकर लगाया जाता था जिससे लिखते समय कपडे में सिलवट न पडें। केरल, कर्नाटक, महाराष्ट्र आदि प्रदेशों में इमली के बीजों के चूर्ण की लेई बनाकर उसे कपडे पर लगाया जाता था। सूख जाने पर उसे जली हुई लकडी के कोयले से काला कर दिया जाता था। उस काले पट पर व्यापारी लोग सफेद खडिया से अपना हिसाब-किताब लिखते थे। श्रृंगेरी मठ में ऐसी कई बहियाँ संगृहीत हैं, जिन्हें 'कडितम्' कहा जाता है।

विशेष रूप से वस्त्र पटों का उपयोग पूजा-पाठ या यंत्र-मंत्र आदि लिखने हेतु होता था। इन पटों की चौडाई कम और लम्बाई अधिक होती थी। पंचांग, जन्म कुण्डली, पिछवई तथा चित्रपट आदि हेतु कपडा ही अधिक प्रयुक्त होता था। पाटण भंडार में वस्त्र के पन्नों पर लिखित ग्रंथ भी संगृहीत हैं। इन वस्त्रपटों को सुरक्षित रखने हेतु दोनों किनारों पर लकडी की रोल लगाकर उसके साथ लपेटकर रखा जाता था एवं तह (गडी) भी करते थे।

चर्मपट :

भारत में लेखन सामग्री के रूप में चर्मपट का उपयोग नहींवत् हुआ है। पटना स्थित खुदाबक्स संग्रहालय, रजारामपुर पुस्तकालय उत्तरप्रदेश, पीरमशाह संग्रहालय अहमदाबाद आदि कुछ स्थानों में चर्मपट पर लिखित ग्रन्थ संगृहीत हैं। लालभाई दलपतभाई संग्रहालय अमहमदाबाद में भी चर्मपट पर लिखित कुरान की एक प्रति विद्यामान है, जो लगभग पन्द्रहवीं शताब्दी में लिखी गई है। सम्राट संप्रति संग्रहालय, कोबा में भी कुछ चर्मपत्र संगृहीत हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हालांकि चर्मपटों पर लिखित सामग्री ताडपत्र, वस्त्र, कागज आदि अन्य साधनों की अपेक्षा दीर्घकाल पर्यन्त सुरक्षित रहती है। लेकिन चर्म को लेखनार्थ अशुद्ध माना गया है, इसलिए भारतीय परम्परा में इस साधन-सामग्री को अधिक आश्रय नहीं मिला। मध्यकाल में कुछ मुस्लिम शासकों द्वारा चर्मपटों पर लेखनकार्य को मान्यता अवश्य दी गई थी। पश्चिम एशिया और यूरोप में मध्यकाल तक लिखने के लिए चर्मपट का काफी इस्तेमाल हुआ। जब मिस्र से पेपीरस-कागज मिलना कठिन हो गया, तो यूनानियों ने भी चर्मपट पर लिखना शुरू कर दिया था। इन पटों को दीर्घकाल पर्यन्त सुरक्षित रखने हेतु इन पर तेल लगाया जाता है।

हस्तनिर्मित कागज :

प्राचीन भारतीय लेखन सामग्रियों में से कागज एक महत्त्वपूर्ण साधन है। इसकी उपलब्धि ने प्राचीन ज्ञान-विज्ञान एवं संस्कृति के विकास में अविस्मरणीय योगदान दिया है। सर्वप्रथम कागज बनाने की कला चीन में विकसित हुई। तत्पश्चात् जापान, बगदाद, मिस्र, यूरोप, फ्रांस, जर्मनी, नीदरलैण्ड, इंग्लैण्ड, अमेरिका, भारत आदि देशों में भी कागज बनने लगा।

भारत में उपलब्ध कागज पर लिखित प्राचीन संस्कृत पुस्तकों में एक तो कवि भासकृत 'पंचरात्र' नाटक की प्रति का उल्लेख मिलता है जो नेपाल से प्राप्त हुई है।[1] हालाँकि यह प्रति किस समय की है इसका अनुमान तो उस हस्तप्रत को देखकर ही लगाया जा सकता है। लेकिन इसके अलावा खंभात एवं पाटण, गुजरात के जैन भण्डारों में भी प्राचीनतम कागजीय हस्तप्रतें संगृहीत है। प्रसिद्ध पुरातत्त्वविद ब्यूलर का कहना है कि 'कागज की प्रारंभिक पाण्डुलिपी गुजरात में मिली है, जो संभवतः वि.सं. १२२२-२४ के मध्य लिखी गयी।[2] एम.ए.स्टॉन ने ई. १०८९ में कागज पर लिखी गयी शतपथ ब्राह्मण की काश्मीरी पाण्डुलिपि का भी उल्लेख किया है।[3] पठानों और मुगलों के शासनकाल में कश्मीरी कागज की बडी मांग थी। लेकिन यह कागज कश्मीर से बाहर के लेखकों के लिए आसानी से उपलब्ध नहीं हो पाता था। वहाँ के राजकीय कार्य में इसका अधिक इस्तेमाल

1. यह हस्तलिपि अब कोलकाता के 'आशुतोष संग्रहालय' में सुरक्षित है।
2. ब्यूलर की पाण्डुलिपि का सूचिपत्र, जिल्द १, पृष्ठ २३८.
3. जम्मू की पाण्डुलिपि का सूचिपत्र, पृष्ठ ८.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होता था।

तत्पश्चात् भारत के विविध शहरों में कागज का निर्माण होने लगा। मध्ययुगीन भारत में कागज निर्माण के प्रमुख केन्द्र थे-कश्मीर, पंजाब का सियालकोट, उत्तरप्रदेश के जौनपुर जिले का जाफराबाद, आगरा, कानपुर, बंगाल, मुर्शिदाबाद, सांगानेर, जयपुर, मैसूर, औरंगाबाद, विदर्भ का बालापुर, पुणे, दिल्ली, लाहौर, पटना, अहमदाबाद, दौलताबाद, पाटन, खंभात आदि। इनमें से अहमदाबाद और दौलताबाद के कागज ने खूब ख्याति प्राप्त की। इन शहरों में बना कागज विदेशों में भी निर्यात किया जाता था।

उस समय काज बनाने हेतु पेडों की छाल, कच्चे बाँस, सन के चिथडे, रेशम, रुई, मछुआरों के जाल, पुराने रस्सों, जूट के बोरों तथा पटसन आदि को सडा-गलाकर लुगदी तैयार की जाती थी। उस लुगदी को पानी में धोया जाता था। उसके बाद लुगदी को चूना और छार (सज्जी) से साफ करके पुनः कूटा जाता था। फिर उसे धूप में सुखाकर उसके पिंड बनाए जाते थे।

इन पिंडों को एक कुण्ड में डालकर पानी के साथ गाढा मिश्रण बनाया जाता था। इस मिश्रण में से आवश्यकतानुसार लुगदी लेकर एक कपडे पर बिछाया जाता था। इस तरह परत-दर-परत कपडा फिर लुगदी फिर कपडा और फिर लुगदी रखर एक ढेरी बना ली जाती थी। इस ढेरी पर भारी वजन रखकर उसमें से पानी को बाहर निकाला जाता था। उसके बाद कागज की उन नम सीटों को कपडों से अलग करके चूने से पोती हुई दीवार पर लगाया जाता था।

तत्पश्चात् कागज की उन सीटों पर मांड लगाई जाती थी या उन्हें किसी गोंद के घोल में डुबोया जाता था। अन्त में लकडी के तख्ते पर रखकर तथा चिकने पत्थर से रगडकर कागज की उन सीटों को चिकना बनाया जाता था। इस प्रकार निर्मित कागज को धारदार चाकू से काटकर आवश्यकतानुसार इस्तेमाल किया जाता था।

सहायक सामग्री : कलम, लेखनी, शलाका[1] आदि :

प्राचीनकाल में लेखन हेतु प्रयुक्त सामग्री में कलम का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

1. देखें पृष्ठ २६ पर प्रदर्शित चित्र।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसे 'लेखनी' भी कहा गया है। प्रसिद्ध पुरातत्त्वविद् जी. ब्यूह्लर अपनी पुस्तक 'भारतीय लिपिशास्त्र' में लिखते हैं- 'हस्तप्रत लेखन के लिए प्रयुक्त होने वाले उपकरण का सामान्य नाम लेखनी था।

इसका प्रयोग शलाका, तूलिका, वर्णवर्तिका, वर्णिका आदि सभी के लिए होता था। 'नरकुल या नरसल' से बनी लेखनी को आमतौर पर कलम कहते थे, मगर इस शब्द की व्युत्पत्ति स्पष्ट नहीं है। कलम के लिए देशी संस्कृत नाम 'इषीका' या 'ईषिका' था, जिसका शब्दार्थ है नरकुल। नरकुल, बाँस या लकडी के टुकडों को हमारी आज की (यानी आज से करीब सौ साल पहले की) कलमों की तरह बनाकर उनसे लिखने की संपूर्ण भारत में परम्परा रही है। ताडपत्र, भूर्जपत्र आदि पर लिखी गई समस्त उपलब्ध हस्तलिपियाँ इसी तरह की कलमों से लिखी गई हैं'।

दक्षिण भारत में ताडपत्रों पर अक्षर लेखन हेतु लोहे से बनी जिस नुकीली लेखनी का उपयोग होता था उसे संस्कृत में 'शलाका' कहते हैं। प्राचीनकाल में विद्यार्थी लकडी के पाटों पर जिस गोल तीक्ष्ण कलम से लिखते थे, उसे 'वर्णक' या 'वर्णिका' कहा जाता था। रंगीन कलमों को 'वर्णवर्तिका' तथा कूची को 'तूलिका' कहा जाता था।

यहाँ संस्कृत भाषाबद्ध एक श्लोक उद्धृत किया जा रहा है जिसमें लेखन के लिए प्रयुक्त आवश्यक उपकरणों का नामोल्लेख किया गया है। इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि- इस श्लोक में जिन उपकरणों का उल्लेख किया गया है उन सभी का नाम 'क' वर्ण से आरम्भ होता है-

कुम्पी कज्जल केश कम्बलमहो मध्ये च शुभ्रं कुशम्,
काम्बी कल्म कृपाणिका कतरणी काष्ठं तथा कागलम्।
कीकी कोटरि कल्मदान क्रमणेः कटिस्तथा कांकरो,
एतैरम्यकाक्षरैश्च सहितः शास्त्रं च नित्यं लिखेत्॥

उपर्युक्त उपकरणों के अर्थ इस प्रकार हैं- **कुम्पी**- दवात, **कज्जल**- काजल, **केश**- बाल, **कम्बल**- कम्बल, **कुश**- पवित्र मानी जानेवानी एक प्रकार की घास, **काम्बी**- बाँस की पट्टी, रेखनी (पत्रों पर सीधी रेखा खींचने हेतु प्रयुक्त काष्टपट्टिका), **कल्म**- कलम, **कृपाणिका**- कृपाण अथवा चाकू, **कतरणी**- कैंची,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

काष्ठ- लकडी की तख्ती, **कागलम्** - कागज, **कीकी**- आँख, **कोटरि**- छोटा कमरा (प्रकोष्ठ), **कल्मदान**- कलम, चाकू, रेखनी आदि रखने का बक्सा, **क्रमण**- पैर, **कटि**- कमर, **कांकरो**- छोटा कंकड (कलम से अतिरिक्त स्याही को सोखने हेतु)।

स्याही :

प्राचीनकाल में ताडपत्र, भोजपत्र, कागज, अथवा कपडा आदि पर लिखने हेतु विशेषरूप से काली स्याही का प्रयोग हुआ है। इसे संस्कृत ग्रन्थों में 'मसि' अथवा 'मषी' कहा गया है। 'मसी कज्जलम्' शब्दों से सहज स्पष्ट हो जाता है कि प्रमुखतः काजल से ही स्याही तैयार की जाती थी।

प्राकृतिक संसाधनों जैसे- काला भांगुरा, लाख, सुहागा, गोंद, बबूल की छाल, कुछ पुष्पों का रस, बदाम तथा नारियल की कालिख, तिल अथवा सरसों का तेल आदि के मिश्रण द्वारा यह स्याही बनाई जाती थी। हस्तनिर्मित कागज अथवा कपडों पर इस प्राकृतिक स्याही द्वारा कलम की सहायता से लिखा जाता था। जबकि ताडपत्रों पर इस स्याही द्वारा दो प्रकार से लिखा जाता था- एक प्रकार तो कागज आदि पर लिखने की तरह ही काली तरल स्याही द्वारा कलम से लिखते थे, तथा दूसरे प्रकार के तहत ताडपत्रों पर नुकीली कील द्वारा अक्षरों को कुरेदकर लिखने के बाद उन पर काली सूखी स्याही पोतकर कपडा या रुई से साफ कर दिया जाता था। इस प्रकार ताडपत्रों पर खुदे हुए अक्षरों में वह स्याही भर जाती थी जो दीर्घकाल पर्यन्त स्थाई रहती थी।

विविध प्राचीन ग्रन्थों में स्याही, ताडपत्र, कागज आदि लेखन-सामग्री तैयार करने विषयक उल्लेख भी मिलते हैं। जिनमें काला भाँगुरा तथा बबूल के गोंद का वर्णन करते हुए तो यहाँ तक कहा गया है कि- 'गोंद संग जो रंग भाँगुरा मिले तो अक्षरे-अक्षरे दीप जले'।[1] आज भी इस बात के पूर्णत: स्पष्ट साक्ष्य विद्यमान हैं। हमारे ग्रन्थागारों में ऐसे अनेकों ग्रन्थ संगृहीत हैं जिनका आधार (कागज या ताडपत्र) पीला पड गया है अथवा पूर्णत: जीर्ण हो चुका है लेकिन उस पर उत्कीर्ण अक्षरों की स्याही आज भी चमकती हुई दिखाई पडती है। ऐसा लगता है 'मानो कि प्रत्येक अक्षर दीपक की तरह चमक रहा हो'।

1. भारतीय जैन श्रमणसंस्कृति अने लेखनकला, पृष्ठ ३७.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गेरू, सिन्दूर तथा हिंगुल द्वारा लाल स्याही बनाई जाती थी। इसका उपयोग अध्याय की समाप्ति अथवा रचना-प्रशस्ति या लेखन-प्रशस्ति लिखने तथा पन्ने के दाएँ-बाएँ हाँसिए की खडी लकीरें तथा ज्यामितीय आकृतियाँ बनाने के लिए किया जाता था।

हरिताल से निर्मित पीली स्याही का उपयोग भी ताडपत्र तथा कागज दोनों पर होता था। लेकिन इसका अधिक उपयोग कागज तथा कपडे की हस्तलिपियों से अनावश्यक अक्षरों को मिटाने के लिए किया जाता था। कुछ पाण्डुलिपियाँ ऐसी भी मिलती हैं जिनमें अनावश्यक अक्षरों को हटाने हेतु सिर्फ उन अक्षरों की सिरोरेखा पर हरिताल लगाकर ही उन अक्षरों को निरस्त (रद्द) किया गया है। इसे तत्कालीन प्रत-संशोधन पद्धति कहा जा सकता है।

स्वर्ण तथा चाँदी जैसी मूल्यवान धातुओं से भी स्याही बनाये जाने के उल्लेख मिलते हैं। आज हमारे ग्रन्थागारों में ऐसे कई ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ विद्यमान हैं जो सोने-चाँदी की स्याही से लिखी हुई हैं। इन स्याहियों का उपयोग विविध प्रकार के चित्र बनाने के लिए भी होता था। कई जैन ग्रन्थागारों में स्वर्णाक्षरीय व चित्रित कल्पसूत्र ग्रन्थ की प्राचीन पाण्डुलिपियाँ आज भी विद्यमान हैं। यहाँ कुछ लेखन संसाधनों का संक्षिप्त परिचय एवं आदि चित्र निम्नवत् हैं-

फाँटिया/ओलिया :

लेखनकार्य के अलावा काष्ठ पट्टिकाओं का उपयोग कागजीय हस्तप्रतों में पंक्तिबद्ध पाठों के लेखनार्थ सीधी पंक्तियाँ बनाने हेतु भी होता था। ऐसी पट्टियों को 'ओलिया' अथवा 'फाँटिया' कहा जाता था। दरसल इन पट्टियों में लगभग

हस्तप्रतों में पंक्ति बनाने हेतु प्रयुक्त फाँटिया/ओलिया

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कलमदान, कलम, प्रकार, घोटा व दवात आदि लेखन सामग्री

१. कलमदान

२. कलमदान (मञ्जूषा)

३. कलम

४. शलाका

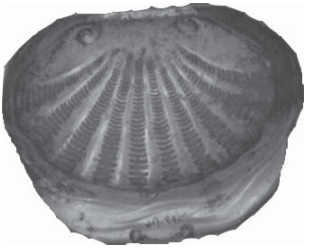

५. अकीक पत्थर

६. स्याही का दवात (मषिपात्र)

७. प्रकार (परिकर)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आठ-दस लंबे धागे समानान्तर पिरोकर उनको गोंद अथवा तारकोल द्वारा उस पट्टी पर स्थाई रूप से चिपका दिया जाता था। इस प्रकार निर्मित इन पट्टियों पर कागज को रखकर हाथ से दबाने पर धागे के कारण उस कागज में सीधी रेखाएँ बन जाती थीं। जिनकी सहायता से लहिया हस्तप्रतों में सीधा और क्रमशः लेख लिख पाते थे। विदित हो कि ओलिया की सहायता से निर्मित ये रेखाएँ कुछ समय बाद कागज पर से स्वतः ही लुप्त हो जाती हैं और हस्तप्रतों में सीधे क्रमशः पंक्तिबद्ध लिखे हुए पाठ हमें प्राप्त होते हैं। ऐसी कुछ प्राचीन पट्टियाँ आज भी श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र कोबा के 'सम्राट् संप्रति संग्रहालय' में विद्यमान हैं, जिन्हें प्रत्यक्ष देखने के बाद संपूर्ण प्रक्रिया का सहज बोध हो जाता है।

इस प्रकार उपर्युक्त संसाधनों की सहायता से भारतीय प्राचीन श्रुतपरम्परा हजारों वर्षों तक पुष्पित-पल्लवित होती रही। इन संसाधनों से निर्मित पाण्डुलिपियों अथवा हस्तप्रतों के विविध रूप देखने को मिलते हैं। इनकी संरचना, विविध नामकरण एवं लेखनपद्धति आदि विषयक संक्षिप्त परिचय निम्नवत् है-

पाण्डुलिपि परिचय :

भारतीय संस्कृति व उसका साहित्य श्रुतपरंपरा से संरक्षित होता हुआ पाण्डुलिपियों के माध्यम से सुरक्षित रहा है। छापेखाने के विकास से पूर्व स्वाध्याय व ज्ञान-प्रसार का आधार ये पाण्डुलिपियाँ ही थीं।

हमारे आचार्यों, मनीषियों, साधु-साध्वियों एवं श्रुतसेवी विद्वानों ने धार्मिक प्रभावना एवं उन्नत जीवन-निर्माण हेतु सहस्रों ग्रन्थ ताडपत्र, भोजपत्र, कपडे एवं कागजों पर लिखकर भारतीय ज्ञानपरंपरा को सदियों से जीवित एवं सुरक्षित रखा है।

इन पाण्डुलिपयों को अलग-अलग प्रदेशों में विविध नामों से जाना जाता है। कहीं इन्हें हस्तप्रत कहा जाता है तो कहीं मातृका, पोथी, पुस्तक, प्रत, पाण्डुलिपि, हस्तलेख, मक्तुताज, कृति, चेवाडी (छेदपाटी का अपभ्रंश), ताळितोळ, मेन्युस्क्रिप्ट आदि नामों से जाना जाता है।

एक समय ऐसा भी था जब हिन्दुस्तान को सोने की चिडिया कहा जाता था,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अर्थात् हिन्दुस्तान में सर्वाधिक धन-संपदा थी। उस समय इन पाण्डुलिपियों को भी प्रमुख संपदा के रूप में गिना जाता था। इसी ज्ञाननिधि के कारण हिंदुस्तान को जगद्गुरु की पदवी प्राप्त हुई।

उस समय श्रेष्ठ लहियाओं से एक ही पाण्डुलिपि की कई प्रतिलिपियाँ तैयार करवाकर विद्वानों एवं स्वाध्यायियों को अध्ययनार्थ उपलब्ध कराई जाती थीं। यही कारण है कि आज एक ही ग्रन्थ की कई प्रतियाँ विभिन्न स्थानों पर प्राप्त हो जाती हैं। विभिन्न पाण्डुलिपि संग्रहालय भी इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं।

पाटण, जैसलमेर, नागौर, जयपुर, बीकानेर, सूरत, छाणी, लींबडी, अहमदाबाद, कोबा, वडोदरा, पूना, इलाहाबाद, वाराणसी, पटना, तंजावुर, रजा-रामपुर आदि अनेक स्थानों के पाण्डुलिपि संग्रहालय भारत की सांस्कृतिक निधियाँ हैं। हमारे पूर्वजों, साधु-साध्वियों एवं श्रेष्ठियों ने इन संग्रहालयों की सुरक्षा करके संस्कृति के संरक्षण में जो योगदान दिया है वह अविस्मरणीय और आगे आनेवाली पीढियों के लिए एक प्रेरक उदाहरण है। उस समय साधु-साध्वियाँ एवं ब्राह्मण नियमित रूप से ग्रंथों का लेखन एवं प्रतिलिपि आदि किया करते थे। विविध क्षेत्रों में विविध जातियों/कुलों का कार्य/पेशा ही लहिये का था। पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात की सीमा के आसपास तो लहियाओं के कई गाँव भी थे जो हस्तप्रत लेखन के प्रमुख स्थल थे।

कहा जाता है कि कलिकाल-सर्वज्ञ हेमचंद्राचार्य ने हेमशब्दानुशासन की प्रतिलिपियाँ तैयार कराने हेतु चारसौ लहियाओं को एक साथ बैठाकर चारसौ प्रतियाँ तैयार कराईं और हिंदुस्तान के विविध भण्डारों में रखवा दीं। जिसके कारण इस ग्रन्थ की एकाधिक प्रतिलिपियाँ आज भी ग्रन्थागारों में आसानी से मिल जाती हैं।

इसी प्रकार रामायण, महाभारत, गीता, अभिज्ञान शाकुन्तल आदि ग्रन्थों की हस्तलिखित प्रतियाँ भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त होती हैं। इन एकाधिक प्रतियों के आधार पर ही इन ग्रन्थों की समीक्षित आवृत्तियाँ तैयार की जा सकी हैं, जो कर्ता-अभिप्रेत शुद्ध पाठ का निर्धारण करने में सहायक सिद्ध होती हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ये पाण्डुलिपियाँ एक विशेष पद्धति से लिखी जाती थीं। इनमें शब्दों को मिलाकर लिखा जाता था, अर्थात् दो शब्दों के बीच स्थान नहीं छोडा जाता था। मात्राएँ भी विशेष प्रकार से लगाई जाती थीं, जिनमें अग्रमात्रा एवं पृष्ठमात्रा (खडी-मात्रा, पडी-मात्रा) का विशेष प्रचलन था। उस समय विशेष ध्यान रखा जाता था कि कम से कम साधन-सामग्री में अधिक से अधिक लेखन-कार्य हो सके। क्योंकि साधन बहुत सीमित थे।

वाक्य समाप्ति या प्रसंग समाप्ति पर कोई पैराग्राफ नहीं बनाया जाता था। कुछ अक्षर विशेष प्रकार से लिखे जाते थे। पत्र के दोनों ओर मार्जिन हाँसिया रखा जाता था। पत्र के मध्य में विविध प्रकार की सादी एवं चित्रित मध्यफुल्लिकाएँ बनाई जाती थीं, पत्र की दूसरी तरफ दायीं ओर पत्रांक लिखा जाता था। चित्रित प्रतों में प्राकृतिक रंगों तथा सोने-चाँदी की स्याही द्वारा प्रसंगानुरूप चित्र भी बनाये जाते थे।

ताडपत्र, भोजपत्र, कागज, स्याही, कलम आदि लेखन-सामग्री आसानी से उपलब्ध नहीं हो पाती थी। यही कारण रहा होगा कि पाण्डुलिपियों में लिखित वर्णों, शब्दों आदि के बीच में स्थान नहीं छोडा गया होगा। यहाँ पाण्डुलिपि स्वरूप एवं विविध नामावली का परिचय निम्नवत् है -

हस्तप्रत स्वरूप :

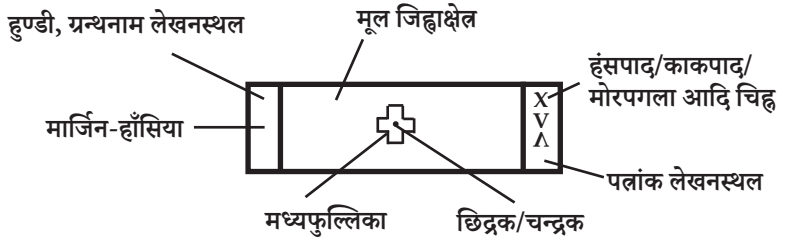

मूल जिह्वाक्षेत्र : यह स्थान पाण्डुलिपि का मूल भाग होता है, जहाँ अभीष्ट ग्रन्थ लिखा जाता है। इसके ऊपर-नीचे तथा दायें-बायें योग्य रिक्त स्थान छोडा जाता है जिसे मार्जिन हाँसिया क्षेत्र कहते हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मार्जिन-हाँसिया : हाँसिया का उपयोग प्रमादवश छूटे हुए अक्षर, पतित-पाठ एवं उपयोगी टिप्पण लिखने हेतु किया जाता था। पाण्डुलिपि लेखन के समय यदि कोई पाठ लिखना रह गया हो और वह बहुत ही उपयोगी हो तो कुछ विशेष चिह्नों द्वारा उस स्थान को चिह्नित कर इस मार्जिन-हाँसिया क्षेत्र में लिख दिया जाता था। इस स्थान का एक आशय मूलपाठ को नुकशान से बचाने का भी था। कई बार किसी कठिन शब्द का अर्थ भी इस क्षेत्र में लिखा हुआ मिलता है।

हुण्डी : पत्र के दायीं ओर मार्जिन हाँसिया में सबसे ऊपर ग्रन्थ का संपूर्ण अथवा सूक्ष्म नाम लिखा हुआ मिलता है। इस स्थान को हुण्डी कहा जाता है।

हंसपाद, काकपाद या मोर-पगला : यह चिह्न गणित के 'X' 'गुणा' के निशान जैसा होता है, इसके माध्यम से प्रत के मूल जिह्वा-क्षेत्र में यदि कुछ शब्द, वर्णादि जोडना हो तो उस स्थान पर '^' 'v' इस प्रकार का चिह्न बनाकर मार्जिन-हाँसिया वाले क्षेत्र में काकपाद का चिह्न बनाकर उस वर्ण को लिख दिया जाता था।

यह वर्ण उसी पंक्ति के सामने लिखा हुआ मिलता है जिसमें ये चिह्न बने हों। अर्थात् इस पंक्ति में जो कुछ छूट गया है तो उसे काकपाद के माध्यम से दर्शाकर प्रत के मार्जिन-हाँसिया-क्षेत्र में लिख दिया जाता था। यदि छूटा हुआ पाठ अधिक हो और उसके सामने वाले मार्जिन-हाँसिया में नहीं लिखा जा सकता हो तो उस पाठ को प्रत के ऊपर अथवा नीचे वाले हाँसिया-क्षेत्र में लिखकर उस पंक्ति के अन्त में ओ./पं. (ओली/पंक्ति) लिखकर जिस पंक्ति में उसे जोडना हो उसकी संख्या लिख दी जाती थी।

इस चिह्न का मुख्य रूप से उपयोग होने का एक और भी कारण प्रतीत होता है- कुछ लहिए पाठ समझ में नही आने के कारण अशुद्ध लिख देते थे अतः पाठशुद्धि की महत्ता व पाठ समझने की सुगमता हेतु ये चिह्न प्रयुक्त होने लगे। क्योंकि उस समय प्रत-लेखन के साधन अत्यन्त सीमित और अल्प थे। अत: कम स्याही, कागज, ताडपत्र, भोजपत्र आदि सामग्री में अधिक से अधिक लिखना हो जाये इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता था। उस समय एक

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रन्थ लिखने हेतु आवश्यक सामग्री एकत्र करने में ही काफी समय गुजर जाता था। इसीलिए इन चिह्नों का सहारा लेना हमारे पूर्वाचार्यों ने अत्यन्त आवश्यक समझा होगा।

पत्रांकलेखन स्थल : प्रत के दायीं ओर ('आ' भाग)में नीचे पत्रांक लिखने की परम्परा मिलती है। पत्रांक लेखन स्थल पर भी कुछ प्रतों में सजाकर अथवा चित्र या बेल-बूटा, पक्षीओं के चित्र, त्रिकोण, चतुष्कोण आदि आकृतियाँ बनाकर अंक लेखन की परम्परा भी मिलती है। ताडपत्रीय पाण्डुलिपियों में पत्रांक मार्जिन हाँसिया के मध्य में लिखने की परम्परा भी देखने को मिलती है। कुछ ताडपत्रीय पाण्डुलिपियों में बायीं ओर भी पत्रांक लिखे हुए मिलते हैं। नागरीलिपिबद्ध ताडपत्रों में पत्रांक लेखन हेतु अंकों के साथ अक्षरों व संयुक्ताक्षरों का प्रयोग भी हुआ है। ऐसे अक्षर जो संख्या के रूप में प्रयुक्त होते थे उनकी विस्तृत तालिका मुनिश्री पुण्यविजयजी ने 'भारतीय जैन श्रमणसंस्कृति अने लेखनकला' में दी है। अतः विशेष जानकारी वहाँ से प्राप्त की जा सकती है।

मध्यफुल्लिका : यह चिह्न पञ्चभुज, षड्भुज या चतुर्भुज के आकार का होता है जो प्रत के मध्य भाग में बनाया हुआ मिलता है। संभवत: मध्य भाग में मिलने के कारण ही इसका नाम मध्यफुल्लिका पडा होगा। यह मध्यफुल्लिका समय के साथ और भी सुन्दर चित्रों से सुसज्जित होने लगी।

ताडपत्र पर धागा पिरोने हेतु छेद के दोनों तरफ का खडी पट्टी में संपूर्ण स्थान छोड दिया जाता था, जो प्रतसंरक्षण हेतु जरूरी भी था। क्योंकि समय के साथ ताडपत्रों के अधिक उपयोग से छेद बडा हो जाता था। उसी का अनुसरण प्रारंभिक काल में कागज पर भी हुआ।

पहले ताडपत्र आकार की कागज की प्रतें बनीं फिर ताडपत्रवत् कुदरती मर्यादा न होने से तथा सुविधा की दृष्टी से प्रत की चौडाई बढी व लंबाई घटी एवं बीच में 'चौकोर' आकार की फुल्लिका बनी, जो जगह बचाने व सुशोभन की दृष्टी से विविध 'वापी' आदि आकारों की बनी और प्रायः विक्रम की १९वीं सदी में सर्वथा निकल भी गई। यहाँ कुछ प्रतों में प्राप्त विविध मध्यफुल्लिकाओं की

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रतिकृति निम्नवत् है :

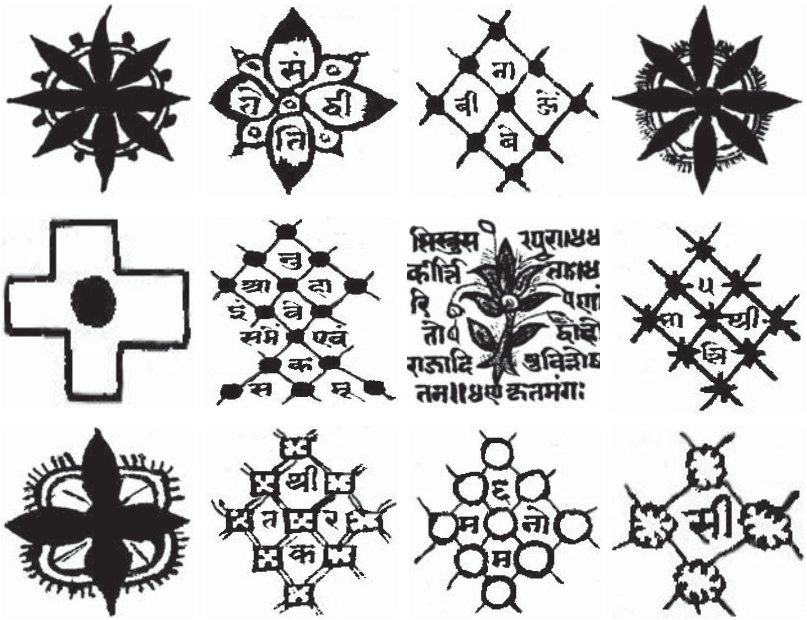

कागज पर लिखे हुए ग्रन्थों में विविध प्रकार की चित्रित मध्यफुल्लिकाएँ देखने को मिलती हैं। इस प्रकार के चिह्न कई प्रतों में अलग-अलग स्याहियों द्वारा बने हुए भी मिलते हैं। कई बार इस प्रकार का चिह्न तो बना हुआ नहीं मिलता है, लेकिन प्रत के बीचों-बीच इसी आकार का स्थान खाली छोड दिया जाता था। जिससे रिक्तस्थान में स्वत: ही मध्यफुल्लिका बनी हुई दिखाई देती है। जिसे लहियाओं की लेखनकला का उत्कृष्ट नमूना कहा जा सकता है।

छिद्रक : अधिकांशत: ताडपत्रीय प्राचीन प्रतों में एक या दो छिद्रक मिलते ही हैं। यह छोटे ताडपत्रों के मध्य भाग में एक छोटा-सा छिद्र होता है। लंबे ताडपत्रों में दोनों तरफ एक तृतियांश जगह पर दो छिद्र होते हैं। इस छिद्रक का पाण्डुलिपि संरक्षण में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इसमें एक पतली रस्सी-डोरी पिरोकर ग्रन्थ के जितने पत्र होते हैं उन्हें एकत्रित करके ग्रन्थ के ऊपर-नीचे लकडी के पुट्ठे लगाकर एक साथ कसकर बाँध दिया जाता था। क्योंकि प्रतों में

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सर्वाधिक नुकसान उनके शिथिल-बन्धन[1] के कारण होता है।

ताडपत्र चिकने होने की वजह से थप्पीबद्ध रह नहीं सकते फिसल जाते हैं। अतः उनके मध्य में छिद्र करके दोरी से बाँधा जाता था। इस छिद्रक के माध्यम से पत्रों को पतली रस्सी द्वारा कसकर बाँध दिया जाता था, जिससे कोई पत्र खोए नहीं, पूरा ग्रन्थ एक साथ उपलब्ध हो सके या आँधी-तूफान में उसके पत्र उड न जायें या पत्र अस्तव्यस्त न हो जायें। इस छिद्रक के माध्यम से एक प्रकार से कहें तो प्रत-बाइण्डिंग का काम होता था। कागज पर भी प्रारम्भ में यह प्रयास हुआ पर कागज फटने से प्रथम दोरा पिरोना बंद हुआ, फिर छिद्र की परम्परा भी कुछ समय बाद ही बन्द हो गई।

चन्द्रक : चन्द्रक भी प्रत के मध्य भाग में देखने को मिलता है। चाँद के जैसा दिखने के कारण इसे चन्द्रक नाम दिया गया प्रतीत होता है। छिद्रक और चन्द्रक में फर्क सिर्फ इतना है कि छिद्रक ताडपत्रीय पाण्डुलिपियों में एक छिद्र के रूप में होता है जबकि चन्द्रक कागज की पाण्डुलिपियों में छिद्र करने के वजाय उस स्थान को लाल अथवा काली स्याही से गोल चंद्र जैसा रंग दिया जाता था। हालाँकि ताडपत्रों में भी सौन्दर्य की दृष्टि से चन्द्रक बनाने की परम्परा मिलती है, लेकिन कागजीय पाण्डुलिपियों में इसका चलन अधिक था। संभवत: यह चंद्रक की परंपरा छिद्रक के बाद की है, और प्राचीन ताडपत्रीय परंपरा को जीवित रखने हेतु कागज पर लिखित प्रतों में इस चंद्रक का प्रयोग प्रारंभ हुआ होगा। क्योंकि यदि कागजीय प्रतों में भी ताडपत्र की तरह ही मध्य में छिद्र किया जाता तो वह कागज सबसे पहले वहीं से फट जाता। इसलिए कागज की प्रतों में छिद्रक के स्थान पर चंद्रक की परंपरा का विकास हुआ होगा।

वैसे भी जब कागज का निर्माण हुआ तब तक हमारे प्रबुद्ध मनीषी इन कागज की प्रतों को सुरक्षित रखने के लिए अन्य विकसित साधनों का आविष्कार कर चुके थे। जैसे कि लाल कपडे में लपेट कर रखना, दाबडा, संच, कबाट, पेटी-पिटारा आदि में प्राकृतिक जडी-बूटियों के साथ रखना, बरसात के समय में ग्रन्थों को भण्डार से बाहर नहीं निकालना, वर्ष में एक बार हल्की धूप

1. तैलाद्रक्षेज्जलाद्रक्षेद् रक्षेच्छिथिलबन्धनात्।
परहस्तगताद्रक्षेदेवं वदति पुस्तकम् ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में ग्रन्थों को रखना आदि।

भारतीय कला-साहित्य एवं संस्कृति को सुरक्षित रखने और इसकी निरन्तरता को बनाए रखने में तीर्थक्षेत्रों, मन्दिरों, साधु-साध्वियों, विद्वानों, गुरुकुल, शिक्षण संस्थानों तथा व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर किये गये प्रयत्नों तथा स्वाध्याय, प्रवचन, शास्त्र-सभाओं, शास्त्र-भण्डारों आदि की अहम् भूमिका रही है। किन्तु इन प्रयत्नों के उपरान्त भी ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व की बहुत-सी अमूल्य धरोहर उचित संरक्षण एवं रख-रखाव के अभाव में यत्र-तत्र बिखरी हुई है। हमारी महत्त्वपूर्ण मूर्तियाँ, दुर्लभ ग्रन्थ व कलात्मक-सामग्री उचित एवं वैज्ञानिक संरक्षण के अभाव में नष्ट हो रही है। ऐसे समय में हमारा कर्त्तव्य है कि हमारी कला एवं संस्कृति की अमूल्य धरोहर स्वरूप विरासत को सुरक्षित एवं संरक्षित करके भावी पीढ़ी को हस्तान्तरित कर अपने पूर्वजों की परम्परा को बचाए रखें और पितृ-ऋण से ऊर्ण हों।

आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व महाराजा सयाजीराव तृतीय के समय में वडोदरा के ज्ञानभण्डार में पाण्डुलिपियों को रखने हेतु ग्रन्थागार में अलमारियों का अभाव था तब महाराजा ने आदेश दिया कि '**आभूषणों को रखने हेतु जो अलमारियाँ राजदरबार में हैं उन्हें खाली करके उनका उपयोग मूल्यवान हस्तप्रतों को सुरक्षित रखने हेतु किया जाये**'। इस प्रसंग से हस्तप्रतों का वास्तविक मूल्य ज्ञात होता है।

पूर्वाचार्यों एवं विशिष्ट कोटी के श्रुतधरों द्वारा आलेखित महती श्रुतसंपदा को सुरक्षित एवं संरक्षित रखना हमारा नैतिक कर्तव्य है। इसका संरक्षण के साथ संवर्धन एवं प्रकाशन होता रहे इसी भावना के साथ इस अध्याय में प्रदत्त सम्पूर्ण सामग्री का संकलन करने का प्रयास किया गया है।

For Private and Personal Use Only

ब्राह्मी लिपि

उद्भव और विकास :

ब्राह्मी लिपि भारतवर्ष की सबसे प्राचीनतम लिपि है जो पूर्णत: पढी जा सकी है। दक्षिण एशियायी क्षेत्र की अधिकांश लिपियों की जननी ब्राह्मी लिपि है। यह लिपि हमें सर्वप्रथम कश्मीरी एवं मौर्यकालीन अभिलेखों में बायें से दायें लिखी हुई देखने को मिलती है। ये अभिलेख पहाडियों की चट्टानों, शिलास्तम्भों और शिलाफलकों पर उत्कीर्ण हैं।

हिन्दुस्तान में पूरव से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण तक इस लिपि में लिखे हुए लेख आज भी विद्यमान हैं, जो इसकी सर्वदेश व्यापकता के परिचायक हैं। जबसे इस लिपि का उद्घाचन हुआ है, यह सिद्ध हो गया की भारतीय उपमहाद्वीप सहित दक्षिण-पूर्व एशिया, श्रीलंका तथा तिब्बत आदि देशों की लिपियाँ भी देवानां प्रिय, जनानां प्रिय, प्रियदर्शी, सम्राट् अशोक के शिलालेखों में प्रयुक्त ब्राह्मी लिपि से ही उद्भूत हुई हैं।

हालाँकि अशोक के लेखों में कहीं भी इस लिपि का ब्राह्मी के रूप में नामोल्लेख नहीं हुआ है लेकिन जार्ज ब्यूलर, डॉ. राजबली पाण्डेय आदि प्रसिद्ध पुरातत्त्वविदों का मानना है कि इस लिपि को ब्राह्मी नाम दिया जा सकता है क्योंकि अधिकांश भारतीय साहित्य में उद्धृत लिपियों की सूचि में ब्राह्मी को ही प्रथम स्थान दिया गया है।[1]

समय के साथ-साथ इस लिपि में काफी परिवर्तन भी हुए। एक समय ऐसा भी आया जब इस लिपि को पढने-लिखने वाले ही नहीं रहे और यह सिर्फ शिलाओं, ताम्रपत्रों, लोहस्तम्भों, मृद्पात्रों अथवा सिक्कों पर ही लिखी रह गई। बडे से बडे विद्वान भी ७वीं-८वीं शताब्दी तक की लिपियाँ ही पढ पाते थे। लेकिन इससे पूर्व-काल की लिपि को पढ-पाना उनके लिए असंभव था।

कहा जाता है कि ई.सन् १३५६ में फिरोजशाह तुगलक ने जब मेरठ और दिल्ली-टोपरा के अशोक स्तंभों को दिल्ली मँगवाकर उन्हें पढने के लिए विद्वानों की सभा में रखवाया तो कोई भी विद्वान उन्हें पढ नहीं पाया।

1. ब्राह्मी लिपि का उद्भव और विकास, पृ. ३०-३१.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुगल सम्राट अकबर को भी इन लेखों का अर्थ जानने की जिज्ञासा थी। वह इन लेखों में उत्कीर्ण प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विषयक गूढ रहस्य को जानना चाहता था, परन्तु उसे भी ऐसा कोई विद्वान नहीं मिला जो उन लेखों को पढकर अर्थ समझा सके।

ई.सन् १७८४ में जब 'एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल' की स्थापना हुई तब भारतीय प्राचीन इतिहास, शिल्प एवं लिपि-विज्ञान में रुचि रखनेवाले विद्वानों को प्रोत्साहन एवं पुनर्बल मिला, उन्होंने इन प्राचीन लिपिबद्ध लेखों को पुन: पढने का प्रयास शुरू किया। लेकिन ई.सन् १८३५-३७ में इस लिपि को सर्वप्रथम पढने का श्रेय पाश्चात्य पुरातत्त्वविद सर-जॉन-प्रिंसेप को जाता है, जिसने दस वर्ष तक अथक प्रयास कर आखिरकार इस लिपि के सभी अक्षरों को पढने में सफलता हाँसिल की और एक सर्वमान्य वर्णमाला का संकलन हुआ। इसके बाद तो ब्राह्मी लिपिबद्ध लेखों को एक के बाद एक कर आसानी से पढा जाने लगा।

गुजरात में ब्राह्मी लिपि का सबसे प्राचीन नमूना मौर्य सम्राट अशोक के गिरनार शिलालेखों में प्राप्त होता है जो ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी का है। इन शिलालेखों की प्रचुरता से सिद्ध होता है कि मौर्यकाल में इस लिपि का उत्तरी भारत तथा लंका में खूब प्रचार था। सम्राट अशोक ने इन लेखों में तत्कालीन राजाज्ञा, धर्म संबंधी नीति-नियम तथा अहिंसा प्रचारक उद्घोषों को उत्कीर्ण कराया और इसे 'धम्म लिपि' की संज्ञा दी।

जैन आगम ग्रन्थ 'पन्नवणासूत्र' तथा 'समवायांगसूत्र' में अठारह लिपियों का उल्लेख मिलता है, जहाँ इस लिपि का 'बंभी लिवी' के रूप में नामोल्लेख हुआ है। विदित् हो कि इस अठारह लिपियों की नामावली में ब्राह्मी लिपि का नाम सबसे पहले है। बौद्ध ग्रन्थ 'ललितविस्तर' में ६४ लिपियों का नामोल्लेख हुआ है, जिनमें 'ब्राह्मी' तथा 'खरोष्ठी' लिपियों का नाम सर्वप्रथम है। जैन आगम 'भगवतीसूत्र' में भी प्रारंभ में ही 'नमो बंभीए लिवीए' कहकर इस लिपि की वंदना की गई है। अत: कहा जा सकता है कि इसका प्राचीन नाम 'बंभी' लिपि के रूप में प्रचलित था और उस समय इसका बहुत आदर था।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विदित् हो कि खरोष्ठी लिपि के अक्षर चिह्नात्मक होने के कारण इन्हें सही-सही पढ-पाना अति कठिन और भ्रामक रहा होगा, अत: इसका चलन अधिक नहीं हो सका। दूसरा एक और प्रमुख कारण यह भी रहा कि यह लिपि अर्बी-पर्सियन लिपियों की तरह दायें से बायें लिखी जाती थी, जिसका अनुकरण संभवत: भारतीय पण्डितों के लिए कठिन रहा होगा। आज भी इस लिपि में उत्कीर्ण प्राप्य लेखों को पढने में पुरातत्त्वविद प्रयासरत हैं लेकिन ब्राह्मी जैसी सफलता प्राप्त नहीं हो सकी है।

हिंदुस्तान में आज प्राप्य प्राचीनतम लिपि अशोक-कालीन ब्राह्मी लगभग ३०० ई.पू. की है। यद्यपि पिपरावा का मटके पर लिखा हुआ लेख तथा बडली का खण्ड लेख ४००-५०० ई.पू. के, हडप्पा तथा मोहनजोदडो की मुद्राएँ १००० ई.पू. की तथा हैदराबाद संग्रहालय के बर्तनों पर उत्कीर्ण ५ चिह्न संभवत: २००० ई.पू. के भी पाए गए हैं, जिनमें मात्राएँ स्पष्ट हैं और अशोककालीन लिपि के सदृश हैं, परन्तु बोधगम्य न होने के कारण इनसे अभी तक कोई महत्त्वपूर्ण परिणाम नहीं निकल सका है।

ब्राह्मी लिपि नामकरण अवधारणा :

ब्राह्मी लिप के उद्भव एवं नामकरण की जब चर्चा करते हैं तो हमें प्रमुखरूप से दो विचारधाराएँ दिखाई पडती हैं- (१) वैदिक और (२) जैन।

(१) वैदिक परंपरानुसार इस लिपि के सर्जक परम पिता परमेश्वर देवादिदेव ब्रह्मा जी हैं। जिन्होंने सृष्टि-रचना के समय इस लिपि की रचना की। और उनके नाम पर ही इस लिपि का ब्राह्मी नाम पडा। एक मान्यता ऐसी भी है कि प्राचीनकाल में लिखने-पढने का काम ब्राह्मण करते थे, अत: ब्राह्मण शब्द पर से इस लिपि का नाम ब्राह्मी पडा हो ऐसी संभावना है।

(२) जैन परंपरा के अनुसार प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेवजी की दो पुत्रीयाँ थीं- ब्राह्मी और सुन्दरी। ऋषभदेवजी ने ही विश्व को सर्वप्रथम असि-मषि-कृषि का सिद्धान्त दिया। उन्होंने मषि[1] सिद्धात के तहत अपनी बडी बेटी ब्राह्मी को यह लिपि सिखाई। अत: इस लिपि का नाम ब्राह्मी पडा।

1. स्याही

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अस्तु यह गंभीर चिन्तन और शोध का विषय है जो आज तक गवेशकों के लिए एक पहेली बना हुआ है।

ब्राह्मी लिपि की विशेषताएँ :

1. ब्राह्मी लिपि हिन्दुस्तान की सबसे प्राचीन लिपि है।
2. अधिकांश भारतीय उपखंड की लिपियाँ इसी लिपि से उद्भूत हुई हैं। अत: ब्राह्मी को समस्त लिपियों की जननी कहा जाता है।
3. इस लिपि का ज्ञान हिन्दुस्तान में प्रचलित अन्य प्राचीन लिपियों को सरलता पूर्वक सीखने-पढने एवं ऐतिहासिक तथ्यों को समझने में अतीव सहायक सिद्ध होता है।
4. यह लिपि अपने समय की सर्वमान्य लिपि होने के कारण इसे राजाश्रय प्राप्त था।
5. वैदिक-जैन-बौद्ध आदि धर्मग्रन्थों का आलेखन सर्व प्रथम इसी लिपि में हुआ और इसे अन्य लिपियों की तुलना में अग्रक्रम में रखा गया।
6. यह लिपि शिलापट्टों अथवा ताम्रपत्र-लोहपत्र आदि पर नुकीली कील द्वारा खोदकर बायें से दायें लिखी जाती थी। संभवतः ब्राह्मीलिपि में कुछ ग्रन्थों का भी आलेखन स्याही द्वारा हुआ होगा। क्योंकि कुछ प्राचीन ग्रन्थों में मुष्टि, गंडी, गुटका, गोटका, गोल, कच्छपी आदि आकारवाली प्रतों का नामोल्लेख मिलता है। इनमें से कुछ ग्रन्थ उत्कीर्ण रहे होंगे व कुछ अवश्य ही स्याही द्वारा भी लिखे गये होंगे।

   विदित् हो कि ब्राह्मी से नि:सृत शारदा, नागरी, मैथिली, ग्रंथ आदि समस्त लिपयाँ भी बायें से दायें ही लिखी जाती हैं, जो ब्राह्मी की परंपरा का ही अनुसरण करती हैं। तत्कालीन ताडपत्र आदि प्राकृतिक संसाधन होने से वातावरण में नमी आदि के प्रभाव से तुलना में शीघ्र नाश होनेवाले होने से वे आजतक सुरक्षित नहीं रह सके हैं। अतः ब्राह्मी लिपिबद्ध ताडपत्र आदि के प्राचीन साक्ष्य नहीं मिलते हैं। दीर्घकाल पर्यन्त इन लेखों को चिरस्थाई बनाए रखने की दृष्टि से शिलाखण्ड ही सबसे उपयुक्त साधन रहे होंगे। अत: तत्कालीन बुद्धिजीवियों ने अन्य साधनों की अपेक्षा इन शिलाखण्डों, ताम्रपत्र-लोहपत्र आदि पर लिखने का निर्णय लिया होगा।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

7. ब्राह्मी लिपि में शिरो-रेखा नहीं होती है, जो इसकी अपनी विशेषता है। विदित् हो कि ग्रंथ एवं गुजराती[1] आदि लिपियाँ भी शिरोरेखा के बिना ही लिखी जाती हैं। लेकिन शारदा, नागरी आदि लिपियों में शिरोरेखा का चलन है।
8. इस लिपि में अधिकांशत: समस्त उच्चारित ध्वनियों हेतु स्वतन्त्र एवं असन्दिग्ध चिह्न विद्यमन हैं। अत: इसे पूर्णत: वैज्ञानिक लिपि कहा जा सकता है।
9. अनुस्वार, अनुनासिक व विसर्ग हेतु स्वतन्त्र चिह्न प्रयुक्त हुए हैं जो आधुनिक लिपियों में भी यथावत स्वीकृत हैं।
10. व्याकरण-सम्मत उच्चारण स्थान के अनुसार वर्णों का ध्वन्यात्मक विभाजन है।
11. इस लिपि का प्रत्येक अक्षर एक ही ध्वनी का उच्चारण प्रकट करत है, जो समझने में सरल और पूर्णरूप से वैज्ञानिक है।
12. अक्षरों का आकार समान व शलाका प्रविधि से अंकित करने का विधान मिलता है।
13. अक्षरों की बनावट अत्यन्त सरल है। समस्त अक्षर सरल ज्यामितिक चिह्नों द्वारा निर्मित हैं।
14. मात्राओं के लिए अलग-अलग चिह्न प्रयुक्त हुए हैं, जो अक्षर के ऊपर या नीचे बायें अथवा दायें लगे हुए मिलते हैं।
15. दीर्घ मात्राओं का प्रयोग अत्यन्त अल्प हुआ है।
16. इस लिपि में संयुक्त अक्षरों का प्रयोग बहुत कम हुआ है।
17. विशेषत: संयुक्ताक्षर लिखते समय जिस अक्षर को पहले बोला जाये उसे ऊपर और बाद में बोले जाने वाले अक्षर को उसके नीचे लिखा जाता था। अर्थात् ब्राह्मी लिपि में संयुक्त अक्षर एक-दूसरे के नीचे लिखे जाते थे। ग्रंथ लिपि में भी इसी पद्धती का अनुसरण किया गया है। प्राचीन-नागरी-लिपिबद्ध पाण्डुलिपियों में भी कुछ संयुक्ताक्षर इसी प्रकार ऊपर से नीचे की ओर लिखे हुए मिलते हैं।

1. गुजराती लिपि देवनागरी की घसीट लिपि से आयी है, अतः इसकी शिरोरेखा हटाई गई है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

18. भारतीय प्राचीन इतिहास और संस्कृति का अध्ययन करने वाले शोधार्थीयों के लिए यह लिपि सर्वश्रेष्ठ मार्गदर्शक की भूमिका अदा करती है।

ब्राह्मी लिपि की वर्णमाला :

मौर्य-वंशी सम्राट अशोक के शिलालेखों में उत्कीर्ण इस लिपि में प्रयुक्त स्वर एवं व्यंजन वर्ण निम्नवत हैं-

स्वर वर्ण लेखन प्रक्रिया

अ	आ	इ	ई	उ	(ऊ ॠ ऌ)
					(अनुपलब्ध)

ए	(ऐ)	ओ	(औ)	अं	अः
	(अनु.)		(अनु.)		

विदित् हो कि ब्राह्मी लिपिबद्ध शिलालेखों में 'ऊ, ॠ, ऐ, औ' आदि दीर्घ स्वर वर्णों का प्रयोग नहीं हुआ है। इन वर्णों की अनुपलब्धि का मुख्य कारण यह है कि ये वर्ण प्राकृत में नहींवत् प्रयुक्त होते है और अधिकांश शिलालेख प्राकृत या पाली भाषा में मिलते है, अत: इन वर्णों के लिखित साक्ष्य नहीं मिलते हैं। लेकिन इन वर्णों के ह्रस्व स्वरूप का प्रयोग हुआ है।

अत: इन ह्रस्व वर्णों के आधार पर दीर्घ वर्णों को निम्नवत् लिखा जा सकता है-

ऊ	ॠ	ऌ	ऐ	औ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्यंजन वर्ण लेखन प्रक्रिया

क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ
𑀓	𑀔, 𑀔	𑀕	𑀖	(अनु.)	𑀘	𑀙	𑀚, 𑀚	𑀛	𑀜
ट	ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न
𑀝	𑀞	𑀟, 𑀟	𑀠	𑀡	𑀢, 𑀢	𑀣	𑀤, 𑀤	𑀥	𑀦
प	फ	ब	भ	म	य	र	ल	व	श
𑀧	𑀨	𑀩	𑀪	𑀫	𑀬, 𑀬, 𑀬	𑀭, 𑀭	𑀮	𑀯	𑀰, 𑀰
ष	स	ह							
𑀱	𑀲, 𑀲	𑀳, 𑀳							

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संयुक्ताक्षर लेखन प्रक्रिया

ब्राह्मी लिपिबद्ध लेखों में 'क्ष, त्र, ज्ञ' आदि संयुक्ताक्षरों तथा 'ङ' वर्ण का प्रयोग भी देखने को नहीं मिलता है। लेकिन जैसा कि हमने ऊपर कहा है कि ब्राह्मी लिपि में संयुक्ताक्षर लिखने हेतु ऊपर से नीचे की ओर लिखा जाता था। अर्थात् जिस अक्षर को आधा लिखना हो उसे ऊपर लिखकर दूसरे अक्षर को उसके नीचे लिख दिया जाता था। अत: इस प्रक्रिया के तहत इन संयुक्त वर्णों को निम्नवत लिखा जा सकता है-

क् + ष = क्ष	त् + र = त्र	ज् + ञ = ज्ञ
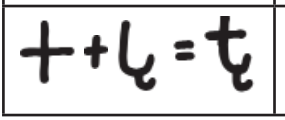	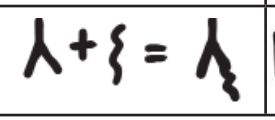	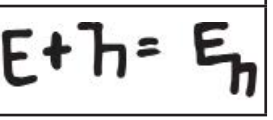

मात्रा लेखन प्रक्रिया :

ब्राह्मी लिपि में मात्रा लेखन हेतु विशेषत: (-), (=) इन दो चिह्नों का प्रयोग हुआ है। ये चिह्न अक्षर के ऊपरी अथवा निचले हिस्से में दायें या बायें लगाये जाते थे, जो अलग-अलग मात्राओं का बोध कराते हैं। यथा-

क	का	कि	की	कु	कू
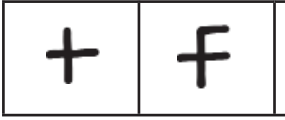	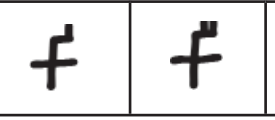	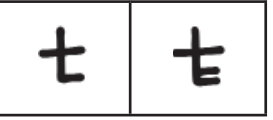	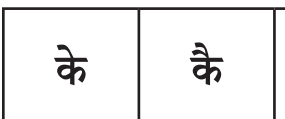	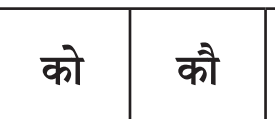	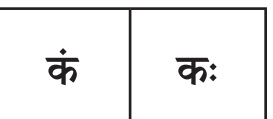

के	कै	को	कौ	कं	कः
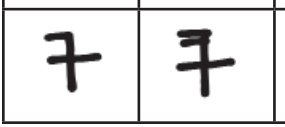	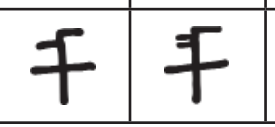	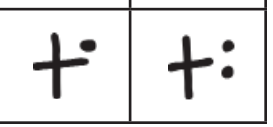		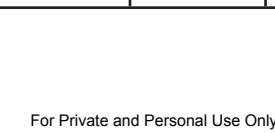	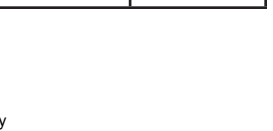

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी लिपि की बाराक्षरी

क	का	कि	की	कु	कू	कृ	के	कै	को	कौ	कं	कः
ख	खा	खि	खी	खु	खू	खृ	खे	खै	खो	खौ	खं	खः
ग	गा	गि	गी	गु	गू	गृ	गे	गै	गो	गौ	गं	गः
घ	घा	घि	घी	घु	घू	घृ	घे	घै	घो	घौ	घं	घः
च	चा	चि	ची	चु	चू	चृ	चे	चै	चो	चौ	चं	चः
छ	छा	छि	छी	छु	छू	छृ	छे	छै	छो	छौ	छं	छः
ज	जा	जि	जी	जु	जू	जृ	जे	जै	जो	जौ	जं	जः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी लिपि की बाराक्षरी

झ	झा	झि	झी	झु	झू	झृ	झे	झै	झो	झौ	झं	झः
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
ट	टा	टि	टी	टु	टू	टृ	टे	टै	टो	टौ	टं	टः
ठ	ठा	ठि	ठी	ठु	ठू	ठृ	ठे	ठै	ठो	ठौ	ठं	ठः
ड	डा	डि	डी	डु	डू	डृ	डे	डै	डो	डौ	डं	डः
ढ	ढा	ढि	ढी	ढु	ढू	ढृ	ढे	ढै	ढो	ढौ	ढं	ढः
ण	णा	णि	णी	णु	णू	णृ	णे	णै	णो	णौ	णं	णः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी लिपि की बाराक्षरी

त	ता	ति	ती	तु	तू	तृ	ते	तै	तो	तौ	तं	तः
थ	था	थि	थी	थु	थू	थृ	थे	थै	थो	थौ	थं	थः
द	दा	दि	दी	दु	दू	द्द	दे	दै	दो	दौ	दं	दः
ध	धा	धि	धी	धु	धू	धृ	धे	धै	धो	धौ	धं	धः
न	ना	नि	नी	नु	नू	नृ	ने	नै	नो	नौ	नं	नः
प	पा	पि	पी	पु	पू	पृ	पे	पै	पो	पौ	पं	पः
फ	फा	फि	फी	फु	फू	फृ	फे	फै	फो	फौ	फं	फः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी लिपि की बाराक्षरी

ब	बा	बि	बी	बु	बू	बृ	बे	बै	बो	बौ	बं	बः
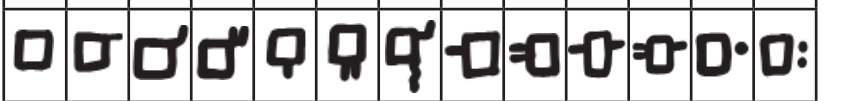												
भ	भा	भि	भी	भु	भू	भृ	भे	भै	भो	भौ	भं	भः
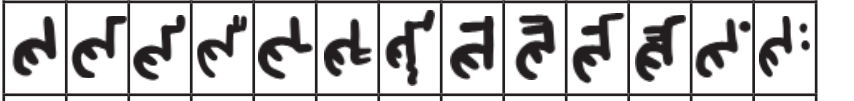												
म	मा	मि	मी	मु	मू	मृ	मे	मै	मो	मौ	मं	मः
य	या	यि	यी	यु	यू	यृ	ये	यै	यो	यौ	यं	यः
र	रा	रि	री	रु	रू	रृ	रे	रै	रो	रौ	रं	रः
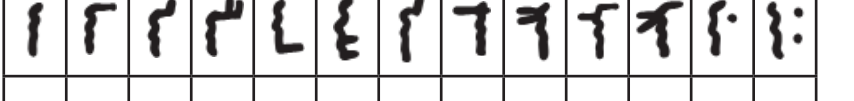												
ल	ला	लि	ली	लु	लू	लृ	ले	लै	लो	लौ	लं	लः
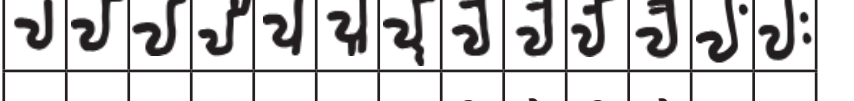												
व	वा	वि	वी	वु	वू	वृ	वे	वै	वो	वौ	वं	वः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी लिपि की बाराक्षरी

श	शा	शि	शी	शु	शू	शृ	शे	शै	शो	शौ	शं	शः
ष	षा	षि	षी	षु	षू	षृ	षे	षै	षो	षौ	षं	षः
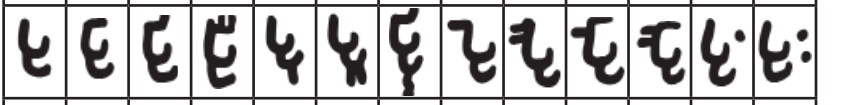												
स	सा	सि	सी	सु	सू	सृ	से	सै	सो	सौ	सं	सः
ह	हा	हि	ही	हु	हू	हृ	हे	है	हो	हौ	हं	हः
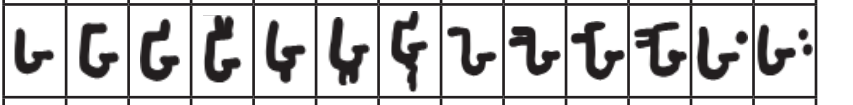												
क्ष	क्षा	क्षि	क्षी	क्षु	क्षू	क्षृ	क्षे	क्षै	क्षो	क्षौ	क्षं	क्षः
त्र	त्रा	त्रि	त्री	त्रु	त्रू	त्रृ	त्रे	त्रै	त्रो	त्रौ	त्रं	त्रः
ज्ञ	ज्ञा	ज्ञि	ज्ञी	ज्ञु	ज्ञू	ज्ञृ	ज्ञे	ज्ञै	ज्ञो	ज्ञौ	ज्ञं	ज्ञः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी लिपि में संयुक्ताक्षरयुक्त शब्द लेखन अभ्यास

तीर्थंकर	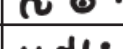	कण्टक	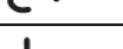
अरिहन्त		वित्त	
सिद्ध	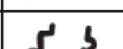	भक्त	
आचार्य		कुल	
ब्राह्मी		पद्म	
सुन्दरी		छद्म	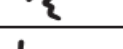
भाष्कर		प्रतिध्वनि	
कनिष्क		धीरेन्द्र	
उत्कल	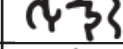	कैवल्य	
मुग्ध		पन्था	
चर्चा		खप्पर	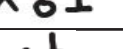
अर्चना		ब्राह्मण	
कच्छप		व्योम	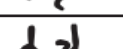
अर्जुन		ज्ञानबिन्दु	
लज्जा	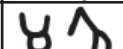	मम्मटाचार्य	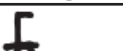
चेन्नई		प्रह्लाद	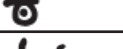
निरञ्जन		पश्चिम	
खड्ग		सरस्वती	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वाक्यार्थ	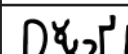	काव्यप्रकाश	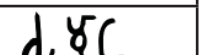
धम्मलिपि	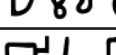	सम्राट	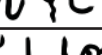
बिन्दुसार	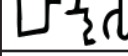	प्रियदर्शी	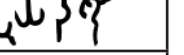
देवानांप्रिय	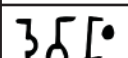	अशोक	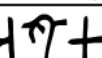
सम्प्रति	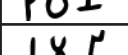	धर्मकीर्ति	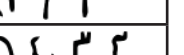
विद्यानन्द	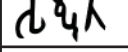	वार्तिक	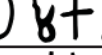
तार्किक	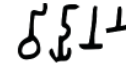	उत्सुक	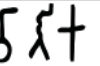
बुद्ध	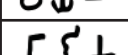	क्षत्रीय	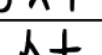
चन्द्रप्रभ	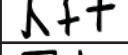	भविष्य	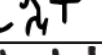
उज्ज्वल		कान्ति	

ब्राह्मी अंकों का विकासक्रम

१		६	
२		७	
३		८	
४		९	
५		०	अनुपलब्ध

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी लिपि में नमस्कार महामंत्र

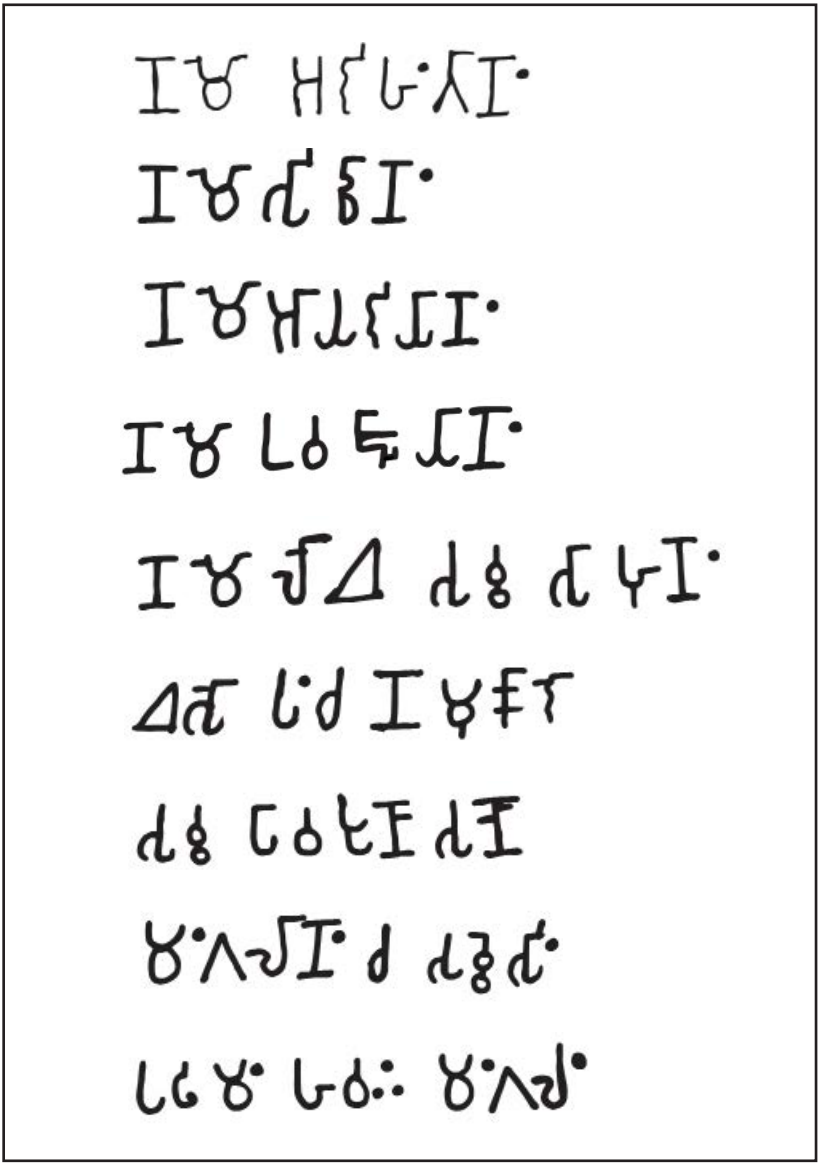

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मीलिपिबद्ध अशोक-कालीन शिलालेख

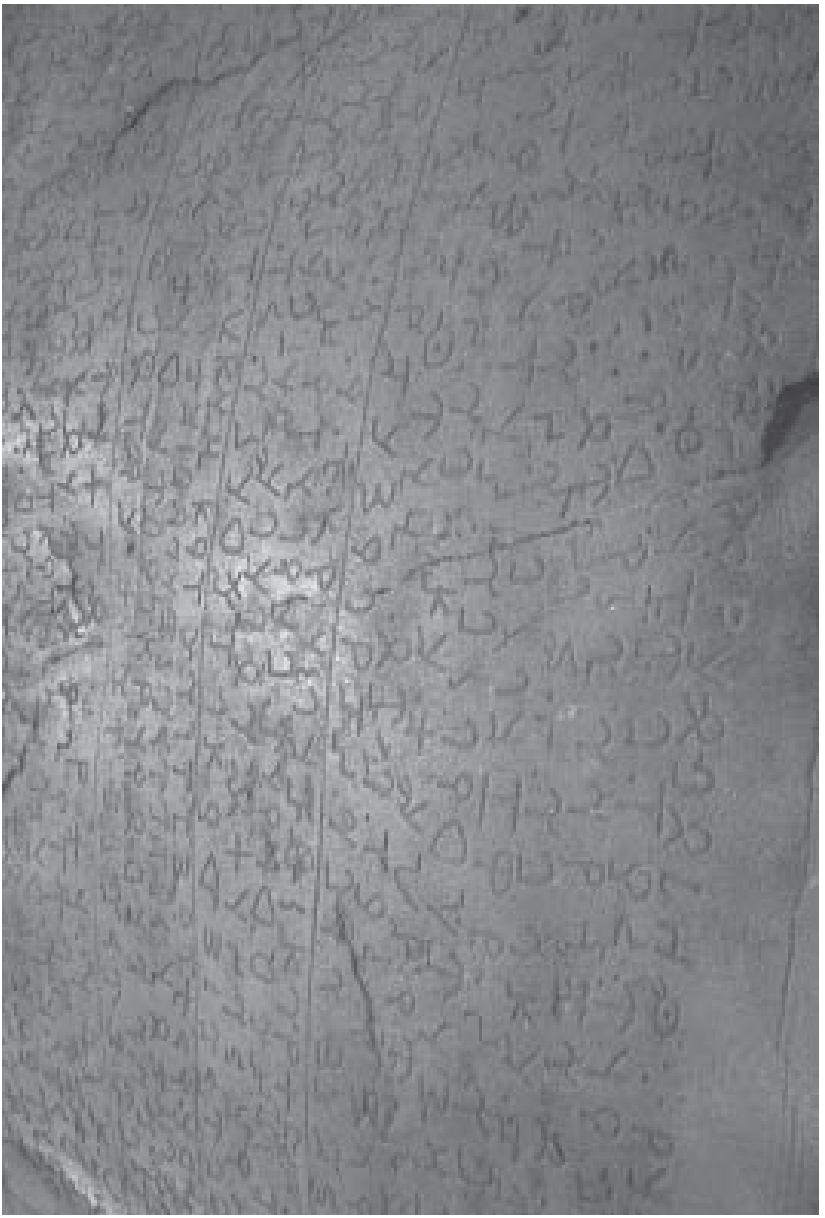

गिरनार शिलालेख

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिल्ही टोपरा का स्तंभलेख

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राचीन भारतीय इतिहास के पुनर्लेखन में ब्राह्मी-लिपि-बद्ध इन अभिलेखों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। इनमें सिक्कों और मुहरों पर प्राप्त लेख भी सम्मिलित हैं। भारत के अनेक राजवंशों का इतिहास इन पुरालेखों के आधार पर ही रचा गया है। अत: स्पष्ट है कि ये लेख न केवल प्राचीन शासन व्यवस्था पर बल्कि संस्कृति के विविध पहलुओं पर भी प्रकाश डालते हैं।

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है- यह लिपि अनेक देशव्यापी लिपि के रूप में देखने को मिलती है। लेकिन देश-काल-परिस्थिति अनुसार इस लिपि के अक्षरों की संरचना में परिवर्तन भी हुआ, जो स्वाभाविक है। कालान्तर में शैली की दृष्टि से इसके उत्तरी तथा दक्षिणी लिपि के रूप में दो भेद हुए।

दक्षिणी ब्राह्मी से दक्षिण भारत की मध्यकालीन तथा आधुनिक कालीन लिपियाँ अर्थात् तामिल, तेलुगु, मलयालम, ग्रंथ, कन्नडी, कलिंग, नंदीनागरी, पश्चिमी तथा मध्यप्रदेशी आदि लिपियों का जन्म हुआ। जबकि उत्तरी ब्राह्मी से शारदा, गुरुमुखी, प्राचीन नागरी, मैथिल, बंगला, उडिया, कैथी, गुजराती, मोडी आदि विविध लिपियों का विकास हुआ।

चौथी शताब्दी में उत्तरी ब्राह्मी लिपि के वर्णों में शिरोरेखा सदृश आकृति बनने लगी, कुछ वर्णों की आकृतियाँ तथा कुछ मात्राओं के चिह्न परिवर्तित होने लगे। गुप्त राजाओं के प्रभाव से ब्राह्मी का यह रूप गुप्त लिपि कहलाने लगा। लगभग चौथी-पाँचवीं शताब्दी में इसका प्रचार समस्त उत्तरी भारत में था। छठी शताब्दी में गुप्त-लिपि के वर्णों की आकृति कुछ कुटिल हो गई। अत: ये वर्ण कुटिलाक्षर और लिपि कुटिल कहलाने लगी। इस लिपि का उत्तरी भारत में खूब प्रचार था। तत्कालीन शिलालेख तथा दानपत्र इसी लिपि में लिखे जाते थे। कुटिल लिपि से ही संभवत: आठवीं-नौवीं शताब्दी में शारदा एवं प्राचीन नागरी लिपयों का विकास हुआ।

अस्तु आज ब्राह्मी लिपि के साथ-साथ शारदा, ग्रंथ, प्राचीन नागरी, नंदीनागरी, नेवारी, कैथी आदि प्राचीन लिपियों का लेखन एवं पठन-पाठन कार्य पूर्णत: लुप्त हो चुका है। और इन लिपियों को जानने वाले भी गिने-चुने ही रह गये हैं। जबकि इन लिपियों में संरक्षित साहित्य हमें शिलालेखों, ताम्रपत्रों,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ताडपत्रों, भूर्जपत्रों, हस्तनिर्मित कागजों, कपडों आदि पर प्रचुर मात्रा में लिखा हुआ मिलता है, जो न केवल भारत के ही ग्रन्थागारों में बल्कि विदेशों में स्थित विविध संग्रहालयों में भी संगृहीत है। एक समय इसी ज्ञान संपदारूपी धरोहर के कारण हिन्दुस्तान को जगद्गुरु का खिताब हाँसिल था।

यद्यपि भारत सरकार के मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय ने इन प्राचीन लिपयों के अध्ययन, संरक्षण एवं पठन-पाठन हेतु लगभग दस वर्ष पूर्व इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र-दिल्ली के प्रांगण में राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन की स्थापना की है, जो समय-समय पर संपूर्ण देश में पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि-विज्ञान अध्ययन कार्यशालाओं का आयोजन कर इन प्राचीन लिपियों को जीवित रखने का प्रयास कर रहा है।

कुछ विश्वविद्यालय एवं संग्रहालय भी इन लिपियों के पठन-पाठन हेतु प्रयासरत हैं। गुजरात के अहमदाबाद एवं गांधीनगर के मध्य स्थित आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर-कोबा में भी प्राचीन लिपियों के पठन-पाठन, हस्तप्रत संरक्षण, सूचिकरण एवं पुरातात्विक सामग्री संरक्षण तथा प्रशिक्षण का कार्य बडे पेमाने पर किया जा रहा है, जो सराहनीय है।

हमने यहाँ ब्राह्मी लिपि का किंचित् परिचय प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। आशा है गवेषक इस प्राचीन भारतीय धरोहर को युग-युगान्तर पर्यन्त जीवित रखते हुए आगे आनेवाली पीढियों तक सुरक्षित पहुँचाते रहेंगे।

For Private and Personal Use Only

शारदा लिपि

उद्भव और विकास :

शारदा लिपि हिन्दुस्तान की पुरातन लिपियों में से एक है। इसका उद्भव लगभग छठी शताब्दी के उत्तरार्ध से आठवीं सदी के अन्तराल में गुप्तकालीन उत्तरी ब्राह्मी तथा कुटिल लिपियों से हुआ है। इस लिपि का चलन मुख्यतः अफगानिस्तान, गान्धार, पाकिस्तान के उत्तरी-पश्चिमी भाग, लद्दाख, जम्मु-काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा एवं दिल्ली के क्षेत्रों में रहा है। इन सभी प्रदेशों से प्राप्त शारदा लिपिबद्ध शिलालेख एवं विविध ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ इसके प्रमुख साक्ष्य हैं।

इनमें से ही शारदा लिपिबद्ध एक पुरातन लेख 'सराहाँ' की प्रशस्ति है। जिसकी लिपि लगभग नौवीं शताब्दी के आस-पास की है। 'मार्तण्ड' का शिलालेख भी अति विस्तृत और प्राचीनतम है। यह लेख महाराजा अवन्तिवर्मा के शासनकाल का है जो लगभग आठवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में लिखा गया है। इसकी लिपि अत्यन्त सुन्दर और पूर्ण विकसित लिपि है। जिससे अनुमान लगाया जा सकता है कि पठन-पाठन में शारदा लिपि का चलन बहुत पहले ही प्रारम्भ हो चुका होगा।

इस लिपि का प्रयोग तत्कालीन मुद्राओं में भी खूब हुआ है। काश्मीर के संग्रहालय में शारदा लिपिबद्ध राजकीय प्राचीन मुद्राओं का अपार कोश विद्यमान है। पाश्चात्य पुरातत्त्वविद श्री वोगेल ने भी अपनी पुस्तक 'ऐंटिक्विटीज ऑफ चंबा स्टेट' में शारदा लिपि के कुछ शिलालेखों, पुरातन ताम्रपत्रों और प्रशस्तियों की प्रतिलिपियाँ संकलित की हैं। इनकी लिपि के स्वरूप तथा लेखनशैली से सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि यह लिपि सेकडों वर्ष पूर्व अस्तित्त्व में आ चुकी थी।

हालाँकि इस लिपि के उत्पत्तिकाल का निश्चित अनुमान लगापाना कठिन है, लेकिन अद्यावधि पर्यन्त उपलब्ध शिलालेखों, ताम्रपत्रों, मुद्रालेखों आदि के आधार पर प्रसिद्ध पुरातत्त्वविदों के अलग-अलग मन्तव्य हैं। ब्युह्लर ने कांगडा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

से प्राप्त अभिलेख 'बैजनाथ प्रशस्ति' के आधार पर शारदा लिपि का समय आठवीं शताब्दी माना है।[1] वोगेल बारहवीं शताब्दी मानते हैं।[2] हॉर्नेल ने सातवीं शताब्दी माना है[3] तो डी.आर. साहनी ने पाकिस्तान से प्राप्त अभिलेख के आधार पर छठी शताब्दी माना है[4]। भूषणकुमार कौल डेंबी सातवीं शताब्दी का उत्तरार्ध मानते हैं।[5] जापान के होरयुजी विहार में विद्यमान 'उष्णीषविजय-धारिणी' नामक ताडपत्रीय ग्रन्थ के अन्तिम पत्र पर शारदा लिपि की संपूर्ण वर्णमाला लिखी हुई मिलती है। अनुमान है कि यह पत्र लगभग पाँचवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से छठी शताब्दी के पूर्वार्ध में लिखा गया होगा।

'गिलगिट' एवं 'तुर्फान' आदि स्थानों से प्राप्त शारदा लिपिबद्ध अत्यन्त प्राचीन हस्तप्रतों से इसकी प्राचीनता एवं व्यापकता स्वयं प्रमाणित है। साथ ही जो शिलालेख तथा अभिलेख प्राप्त हुए हैं उनसे भी इस लिपि की प्राचीनता, मान्यता एवं लेखनशैली की विविधता के साक्षात दर्शन होते हैं। इनमें चांबा अभिलेख, कांगडा का अभिलेख, अटक शिलालेख, काष्टवार शिलालेख, जयसिंह कालीन शिलालेख, तापर का प्रस्तर शिलालेख, विजयेश्वर का शिलालेख, कपटेश्वर शिलालेख, खुनमूह शिलालेख, उस्कर का शिलालेख आदि प्रधान हैं, जो श्रीनगर के संग्रहालय में संग्रहीत हैं। इन शिलालेखों से ज्ञात होता है कि शारदा लिपि लगभग पन्द्रवीं शताब्दी के आसपास सर्वत्र प्रचलित थी और राजकीय कार्यों में भी प्रयुक्त होती थी।

यह लिपि विशेषरूप से काश्मीर में विकसित हुई। यहाँ प्रायः समस्त संस्कृत वाङ्मय शारदा लिपि में ही लिखा गया। काश्मीर को 'शारदा देश' या 'शारदा मण्डल' के नाम से भी जाना जाता है। आज भी यहाँ के ग्रन्थागारों में इस लिपि में निबद्ध हस्तप्रतों को संजोकर रखा गया है। समय-समय पर भारत आनेवाले

---

1. काश्मीर रीपोर्ट, कोलकाता, १९६१, पृ. ७६.
2. एण्टिक्यूटी ऑफ चंबा स्टेट, प्लेट १, पृ. ४४.
3. जर्नल ऑफ दि एशियाटिक सोसायटी, बंगाल जिल्द-६०, पृ. ९०.
4. एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द-२२, पृ.९७-९८.
5. क्रॉप्स ऑफ शारदा इंस्क्रिप्सनस् ऑफ काश्मीर, पृ. ६०.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विदेशी विद्वान इस लिपि में निबद्ध अनेकों ग्रन्थों को अपनी-अपनी लिपियों में लिप्यन्तर कर अपने साथ ले जाते रहे हैं। इन लिप्यन्तरित प्रतियों के साथ मूल प्रतियाँ भी एक स्थान से दूसरे स्थान या एक देश से दूसरे देश तक गई हैं।

वर्तमान में ऐसे कई ग्रन्थों के साक्ष्य हमारे सामने विद्यमान हैं जिनकी शारदा लिपि से अन्य लिपियों में लिप्यन्तरित प्रतिलिपियाँ तो उपलब्ध हैं लेकिन उनकी मूल शारदा लिपिबद्ध प्रतें अनुपलब्ध हैं। ये प्रतें अब कहाँ होंगी और किस दशा में होंगी यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं विचारणीय विषय है। एक योजनाबद्ध सर्वेक्षण द्वारा अन्धकार में निमग्न इन प्राचीन पाण्डुलिपियों को खोजने की महती आवश्यकता है।

हिन्दुस्तान के ग्रन्थागारों में आज भी शारदा लिपिबद्ध हस्तप्रतों की संख्या लगभग एक लाख से अधिक है। यदि योजनाबद्ध सर्वेक्षण किया जाये तो इस संख्या में और भी वृद्धि होने की संभावना निश्चित है। विदेशी भण्डारों में भी कुछ प्रतियाँ होने के साक्ष्य मिल रहे हैं। इस लिपि में निबद्ध हस्तप्रतें पाठ शुद्धता की दृष्टि से अति महत्त्वपूर्ण मानी गई हैं। इतिहासकार कल्हण अपनी राजतरङ्गिणी (वि.सं. १२०५-०७)में प्राचीनतम शारदा लिपि का साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए कहते हैं-

दृष्टैश्च पूर्वभूभर्तृप्रतिष्ठावस्तुशासनैः।
प्रशस्तिपट्टैः शास्त्रैश्च शान्तोऽशेषभ्रमक्लमः ।।[1]

अर्थात् 'प्राचीन राजाओं के द्वारा निर्माण करवाये गये देवमन्दिर, नगर, ताम्रपत्र, शासन तथा प्रशस्तिपत्र एवं सामायिक काव्यादि ग्रन्थों के अध्ययन से मेरा भ्रम नष्ट हो चुका है'। इससे इतना तो सिद्ध हो ही जाता है कि उपरोक्त अभिलेखों में से सब नहीं तो, कुछ की लिपि तो अवश्य ही शारदा रही होगी। लेकिन कालान्तर में इन साक्ष्यों का क्या हुआ एवं कब, कहाँ और कैसे लुप्त हो गये यह एक गहन शोध का विषय है।

चीनी यात्री 'ह्वेनसांग' एवं 'फाह्यान' ने अपने यात्रा वर्णन में काश्मीर में शारदा लिपि के गहन अध्ययन और पठन-पाठन की परम्परा का उल्लेख किया

1. राजतरङ्गिणी, तरङ्ग-१, श्लोक-१५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। भिक्षु ह्वेनसांग तो वर्षों तक काश्मीर के 'जैनेन्द्र विहार' में रहकर शारदा लिपिबद्ध ग्रन्थों का अध्ययन, चिन्तन, लिप्यन्तर एवं चीनी भाषा में अनुवाद करते रहे। निश्चय ही इन ग्रन्थों में संस्कृत, पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश का एक अपार साहित्यकोष रहा होगा।

कश्मीर के शैवदर्शन का आधारभूत ग्रन्थ शैवसूत्र भी आचार्य वसुगुप्त की कठिन तपस्या और खोज के उपरान्त ही 'महादेव घाटी में शंकर उत्पल' पर शारदा लिपि में अंकित मिला, जिस पर ८७ सूत्र निबद्ध हैं। लगभग सातवीं सदी में भूर्जपत्र पर लिखी हुई अभिज्ञानशाकुन्तल की दो पाण्डुलिपियाँ श्रीनगर एवं पूणे के हस्तप्रत भण्डारों से प्रो. वसंतकुमार भट्ट (पूर्व नियामक-भाषा भवन, गु. वि. वि.) को प्राप्त हुई हैं। संभवतः आज तक प्राप्त साक्ष्यों में शारदालिपि के सबसे प्राचीन साक्ष्य के रूप में इन पाण्डुलिपियों को माना जा सकता है।

'अलहिन्द' ग्रन्थ के रचनाकार अल्बेरूनी (१०वीं शताब्दी) ने भी अपने इतिहास में काश्मीर की लिपि शारदा का उल्लेख 'सिद्धमातृका' नामकरण से किया है। इनका मानना है कि 'यह लिपि काश्मीर, मध्यदेश तथा वाराणसी में प्रचलित थी एवं मालवा में 'नागर लिपि' का चलन था'। उस समय 'काश्मीर' तथा 'वाराणसी' शिक्षा के प्रमुख केन्द्र थे। चीन देश के 'तआंग साम्राज्य के इतिहास' में भी काश्मीर की लिपि शारदा का उल्लेख हुआ है, जो इसे अत्यन्त प्राचीनता की ओर ले जाता है।

शारदा लिपि के समकालीन या कुछ उत्तरवर्ती लिपि देवनागरी है। इन दोनों लिपियों में वर्णविन्यास एवं लेखनपरंपरा की दृष्टि से आपसी साम्य भी दिखाई पडता है। अतः देवनागरी को शारदा लिपि की लघु भगिनी कहा जा सकता है। इस पर शारदा लिपि का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पडता है। कालान्तर में शारदा सिर्फ काश्मीर तथा उसके आसपास के क्षेत्रों तक ही सीमित रही जबकि नागरी लिपि धीरे-धीरे संपूर्ण उत्तर भारत में प्रयुक्त होने लगी। जेसलमेर के भंडार में विद्यमान विशेषावश्यक भाष्य की पाण्डुलिपियों में प्रयुक्त वर्णमाला में देवनागरी एवं शारदा के संयुक्त प्रयोग देखने को मिलते हैं, जो इन लिपियों के समकालीन होने का प्रत्यक्ष साक्ष्य हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

टाकरी, डोगरी, गुरुमुखी, पंडवानी, चंदवानी, भटाक्षरी, पाबुची, महाजनी तथा तिब्बत की भोट लिपि भी शारदा लिपि से ही विकसित हुई हैं। अतः इस लिपि को उपरोक्त समस्त लिपियों की जननी कहा गया है। लेकिन यहाँ बडे ही अफ़सोस पूर्वक यह लिखना पड रहा है कि आज शारदा लिपि का चलन हिन्दुस्तान में पूर्णतः बन्द हो चुका है।

शारदा लिपि नामकरण अवधारणा :

शारदा लिपि के नामकरण के विषय में स्पष्ट साक्ष्य उपलब्ध नहीं हैं। लेकिन अनुमान के आधार पर कह सकते हैं कि इस लिपि का उदय काश्मीर प्रान्त में हुआ। काश्मीर की आराध्य देवी भगवती शारदा हैं। इसी कारण इस प्रदेश को 'शारदा देश' भी कहा गया है। अतः शारदा देश की लिपि होने के कारण इसे शारदा लिपि के रूप में प्रसिद्धि मिली।

पाश्चात्य पुरातत्त्वविद एस.वी. शातदा ने अपनी पुस्तक 'कश्मीर वोकाबुलरी' (लंदन संस्करण) में उल्लेख किया है कि 'शारदानन्दन नामक किसी विद्वान् ने कश्मीरी भाषा को लिखने में इस लिपि का प्रयोग किया, अतः इसका नाम शारदा लिपि पडा'। यह अनुमान ऐसा ही है जैसा कि नागरी लिपि के नामकरण के विषय में नागर ब्राह्मणों के द्वारा लेखनकार्य किये जाने के कारण नागरी नाम पडना। लेकिन शारदा लिपि नामकरण विषयक इस अनुमान के सिद्ध होने की संभावना बहुत ही कम है।

रायबहादुर पं. श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'भारतीय प्राचीन लिपिमाला' में शारदा देश में उत्पन्न एवं विकसित होने के कारण ही इस लिपि का शारदा नाम से प्रसिद्ध होना लिखा है जो उचित प्रतीत होता है। पाश्चात्य विद्वान् डॉ. ब्यूह्लर तथा डॉ. एम.ए. स्टॉन ने भी इस लिपि के शारदा देश में प्रचलित तथा उत्पन्न होने के कारण इसका नाम शारदा के रूप में प्रसिद्ध होने की संभावना व्यक्त की है।

जब तक स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलते तब तक शारदा देश में उत्पन्न व प्रचलित होने के कारण तथा शारदा देश की सर्वमान्य लिपि होने के कारण ही इसका नाम शारदा लिपि के रूप में प्रसिद्ध होना सर्वसम्मत प्रतीत होता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि की विशेषताएँ :

1. यह लिपि ब्राह्मी, नागरी, ग्रंथ तथा अन्य भारतीय लिपियों की तरह ही बायें से दायें लिखी जाती है।
2. इस लिपि में नागरी लिपि की तरह शिरोरेखा लगाकर लिखने का विधान है, जो हमें ब्राह्मी तथा ग्रंथ लिपियों में नहीं मिलता।
3. शारदा तथा देवनागरी लिपियों में अत्यन्त साम्य दृष्टिगोचर होने के कारण इन दोनों लिपियों को सगी बहेनों की संज्ञा प्राप्त है।
4. इसका स्वरूप अत्यन्त नेत्राकर्षक एवं किंचित स्थूलाक्षरात्मक है। अतः इसे स्थूलाक्षर लिपि भी कह सकते हैं।
5. मोटी कलम द्वारा अक्षरों के लेखन की परंपरा होने के कारण इस लिपि में निबद्ध हस्तप्रतों को स्पष्टतया पढा जा सकता है। जिस कारण लिप्यन्तर या संपादन आदि में अशुद्धि होने की संभावना कम हो जाती है।
6. यह लिपि हस्तनिर्मित कागजों पर लिखने के लिए उपयोगी लिपि है। हालाँकि इस लिपि में निबद्ध ताडपत्रीय पाण्डुलिपियाँ भी उपलब्ध हैं, लेकिन इसके अक्षरों का आकार स्थूल होने के कारण तथा ताडपत्रों में कागज के मुकावले स्थानाभाव के कारण इसे कश्मीरी कागजों पर लिखने हेतु महत्त्वपूर्ण लिपि माना गया है।
7. यह लिपि काश्मीर तथा पंजाब के राजकीय कार्यालयों में भी प्रयुक्त होती रही है। अतः इसे तत्कालनी राजकीय कामकाज़ की लिपि होने का गौरव प्राप्त है।
8. गिलगिट से प्राप्त प्राचीनतम पाण्डुलिपियाँ (अनुमानित द्वितीय सदी) इसी लिपि में निबद्ध हैं, जिसे शारदा लिपि का गौरव कहा जा सकता है।
9. इस लिपि में संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाबद्ध साहित्य को शत-प्रतिशत शुद्ध लिखा जा सकता है।
10. यह लिपि लेखन एवं वाचन की दृष्टि से सरल व सुगम है। अर्थात् जो बोला जाता है वही लिखा जाता है और फिर वह लिखित पाठ उसी पूर्वोच्चारित ध्वनि का बोध कराता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

11. इस लिपि में समस्त उच्चारित ध्वनियों के लिए स्वतन्त्र एवं असंदिग्ध लिपिचिह्न विद्यमान हैं। अतः इसे पूर्णतः वैज्ञानिक लिपि कहा जा सकता है।

12. प्राचीन ग्रन्थों के समीक्षात्मक संपादन एवं अध्ययन हेतु विद्वानों द्वारा इस लिपि में निबद्ध हस्तप्रतों के पाठों को शुद्धता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण और उपयोगी माना गया है।

13. अपने समय की श्रेष्ठ लिपि होने के कारण तत्कालीन ग्रन्थकारों एवं लहियाओं ने इसे सर्वाधिक आश्रय प्रदान किया।

14. इसकी वर्णमाला में स्वर एवं व्यंजन वर्णों का वर्गीकरण ध्वनि-वैज्ञानिक पद्धति से व्याकरणसम्मत उच्चारण स्थान एवं प्रयत्नों के आधार पर किया गया है।

15. इस लिपि का प्रत्येक वर्ण स्वतन्त्ररूप से एक ही ध्वनि का उच्चारण प्रकट करता है, जो सुगम और पूर्णतः वैज्ञानिक विधान है।

16. इस लिपि में ब्राह्मी की तरह पडीमात्रा का प्रयोग भी देखने को मिलता है।

17. इस लिपि में अनुस्वार, अनुनासिक एवं विसर्ग हेतु स्वतन्त्र लिपिचिह्न प्रयुक्त हुए हैं, जो उत्तरवर्ती लिपियों में भी यथावत् स्वीकृत हैं।

18. इस लिपि में संयुक्ताक्षर लेखन हेतु अक्षरों को ऊपर-नीचे लिखने का विधान मिलता है। अर्थात् जिस अक्षर को आधा करना होता है उसे ऊपर तथा दूसरे अक्षर को उसके नीचे लिखा जाता है।

19. ब्राह्मी, नागरी तथा ग्रंथ लिपियों में भी संयुक्ताक्षर लेखन हेतु यही परंपरा मिलती है। कालान्तर में नागरी लिपि की संयुक्ताक्षर लेखन परंपरा में परिवर्तन हुआ, जिसके परिणामस्वरूप संयुक्ताक्षरों को एक ही शिरोरेखा के नीचे प्रथम अक्षर को आधा तथा दूसरे अक्षर को पूरा समानान्तर भी लिखा जाने लगा। आधुनिक नागरी तथा अन्य आधुनिक लिपियों में अब इसी प्रकार समानान्तर संयुक्ताक्षर लेखनविधान देखने को मिलता है।

20. इस लिपि में कुछ अक्षरों का संयुक्त विधान उपर्युक्त ब्राह्मी, ग्रंथ, नागरी आदि लिपियों से अत्यन्त भिन्न है। अर्थात् कुछ अक्षरों के आपस में संयुक्त

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होने पर एक तीसरा ही नया स्वरूप उभर कर सामने आता है जिसे गहन अध्ययन के बाद ही समझा जा सकता है।

21. इस लिपि में संयुक्ताक्षर लेखनविधा अति विस्तृत और वैविध्यपूर्ण है। जिसके कारण इसमें निबद्ध हस्तप्रतों को पढने अथवा लिप्यन्तर करने वालों को अधिक परिश्रम करना पडता है। लेकिन संयुक्ताक्षरों की यह प्रक्रिया कुछ नियमों के तहत चलती है और जिनको इन नियमों का सम्यक् ज्ञान हो उनके लिए इसे समझना बहुत ही आसान हो जाता है।

22. इस लिपि में रेफ युक्त वर्णों के लेखन हेतु एकाधिक विधान देखने को मिलते हैं, जिनमें से कुछ अति सरल हैं तो कुछ अति कठिन।

23. उत्तरी भारत की प्राचीन तथा आधुनिक लिपियों, दक्षिणी भारत की द्राविड लिपियों तथा भारत के पार्श्ववर्ती देशों की लिपियों का शारदा से बहुत कुछ सादृश्य है। इनमें वर्णमाला, स्वर-व्यंजन भेद, स्वर-क्रम, व्यंजनों का वर्गीकरण, मात्रा नियम आदि सब लगभग समान ही हैं। किसी में कुछ ध्वनियाँ कम हैं तो किसी में अधिक।

24. ब्राह्मी के बाद सर्वाधिक लिपियों की जननी होने का गौरव इस लिपि को प्राप्त है।

25. गुरुमुखी, टाकरी, डोगरी, मोडी, महाजनी, रामजानी, पावुची, भटाक्षरी, तिब्बती आदि अनेक लिपियाँ इसी लिपि से उदित हुई हैं।

26. यह लिपि लेखन, प्रतिलिपिकरण तथा लिप्यन्तरण के पर्याप्त अनुकूल लिपि है।

27. इस लिपि का ज्ञान प्राचीन हस्तप्रतों को सरलतापूर्वक पढने, लिप्यन्तर करने, प्रतिलिपि करने एवं ऐतिहासिक तथ्यों को जानने में अतीव सहायक सिद्ध होता है।

28. इस लिपि के जानकार प्राचीन नागरी लिपि को आसानी से सीख सकते हैं।

29. आज भी इस लिपि में निबद्ध हस्तप्रों की संख्या लगभग एकलाख से अधिक है, जो भारतीय ग्रन्थागारों के गौरव में अभिवृद्धि करती है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि की वर्णमाला :

शिलाखण्ड, ताम्रपत्र, लोहपत्र, ताडपत्र एवं हस्तनिर्मित कश्मीरी कागजों आदि पर निबद्ध प्राप्य साक्ष्यों में प्रयुक्त इस लिपि के स्वर एवं व्यंजन वर्णों की संरचना तथा लेखन विधान निम्नवत है-

स्वर वर्ण लेखन प्रक्रिया

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ
				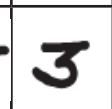	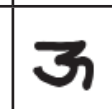	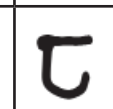	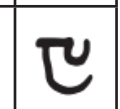
ऌ	ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
		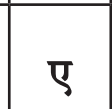		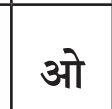		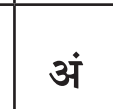	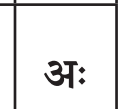

विदित हो कि शारदा लिपिबद्ध पाण्डुलिपियों में दीर्घ 'ई'कार के दो प्रयोग प्राप्त होते हैं जो उपरोक्त तालिका में प्रदर्शित किये गये हैं।

'अनुस्वार' चिह्न भी दो तरह से प्रयुक्त होता है, एक उस अक्षर के ऊपर लगाकर नागरी लिपिवत् तथा दूसरा उस अक्षर के पीछे लगाकर ब्राह्मी व ग्रंथ लिपिवत्।

'विसर्ग' चिह्न अन्य लिपियों की तरह ही अक्षर के पीछे लगाने की परम्परा मिलती है। यह विसर्ग चिह्न कभी-कभी 'पूर्णविराम' चिह्न का भ्रम भी उत्पन्न करता है। अतः शारदा लिपिबद्ध हस्तप्रतों के पठन-पाठन या लिप्यन्तरण करते समय इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए।

For Private and Personal Use Only

व्यंजन वर्ण लेखन प्रक्रिया

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन वर्णों में 'म'कार शिरोरेखा बिना लिखा जाता है जो हस्तप्रत पढते समय नागरी लिपि के 'भ' वर्ण का भ्रम करता है। 'श'कार नागरी लिपि के 'म' वर्ण जैसा होने के कारण 'म'कार का भ्रम उत्पन्न करता है। मूर्धन्य 'ष'कार शिरोरेखा के बिना लिखा जाता है तथा 'स'कार नागरी लिपि के 'भ' वर्ण की तरह लिखा जाता है।

विदित हो कि 'स'कार तथा 'म'कार दोनों ही एक समान दिखते हैं, लेकिन इन दोनों में सूक्ष्म अन्तर है जिसे ध्यान में रखना चाहिए। वह अन्तर सिर्फ इतना ही है कि 'म'कार के नीचे की ओर का भाग गोलाकार होता है जबकि 'स'कार के नीचे का भाग त्रिभुजाकार होता है। 'थ' वर्ण नागरी लिपि के मूर्धन्य 'ष' की तरह लिखा जाता है।

इसी प्रकार 'ब' तथा 'व' वर्णों में भी साम्य दिखाई देता है। इन दोनों में अन्तर सिर्फ इतना ही है कि 'व' की खडीपाई नीचे तक निकली हुई होती है जबकि 'ब' की खडीपाई बाईं ओर मुडकर त्रिकोणाकार गोल हो जाती है।

'घ' वर्ण भी नागरी लिपि के 'ध' वर्ण का भ्रम उत्पन्न करता है। 'छ' वर्ण ब्राह्मी के 'छ' तथा नागरी के 'ळ' वर्ण जैसा होता है। 'उ'कार एवं 'त'कार भी एक-जैसे होने के कारण परस्पर एक-दूसरे का भ्रम उत्पन्न करते हैं। अतः हस्तप्रत पढते समय इन वर्णों का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

हलन्त-चिह्न लेखन प्रक्रिया

इस लिपि में हलन्त के लिए ( ) चिह्न प्रयुक्त हुआ है, जो अन्तिम वर्ण की शिरोरेखा के साथ जोडकर ऊपर से नीचे की ओर किंचित दाईं ओर घुमाकर लगाया जाता है। यह चिह्न कभी-कभी पूर्णविराम अथवा 'आ' की मात्रा का भ्रम भी उत्पन्न करता है। उदाहरण स्वरूप यहाँ कुछ वर्णों में हलन्त चिह्न लगाकर इस प्रक्रिया को निम्नवत समझा जा सकता है-

क्	ट्	त्	न्	म्
क	ट	त	न	म

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'क्ष, त्र, ज्ञ' आदि संयुक्ताक्षरों के लिए प्रयुक्त स्वतंत्र वर्णों की लेखन प्रक्रिया निम्नवत् है-

क् + ष = क्ष	त् + र = त्र
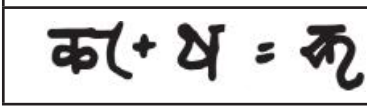	

ज् + ञ = ज्ञ
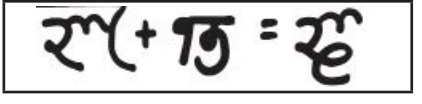

विदित हो कि हलन्त चिह्न युक्त वर्णों के साथ जब 'र' जोडते हैं तो उस वर्ण के नीचे की ओर (ऱ) इस प्रकार का चिह्न लगाकर लिखा जाता है। यथा-

क्र	ख्र	ग्र	घ्र	च्र	छ्र
	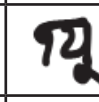	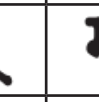	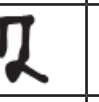		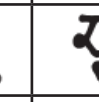
ज्र	ट्र	ठ्र	ड्र	ढ्र	त्र
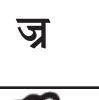	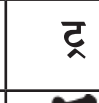	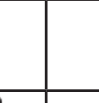	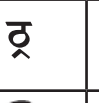		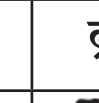
थ्र	द्र	ध्र	प्र	फ्र	ब्र
	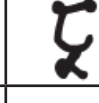	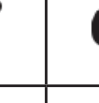	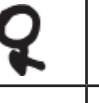		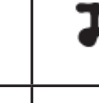
भ्र	म्र	व्र	श्र	स्र	ह्र
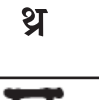	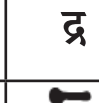		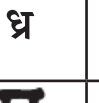		

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अवग्रह चिह्न लेखन प्रक्रिया

इस लिपि में अवग्रह के लिए (ऽ) चिह्न प्रयुक्त हुआ है जो आधुनिक देवनागरी में अद्यपर्यन्त प्रचलित है। यथा-

अनुनासिक चिह्न लेखन प्रक्रिया

यह चिह्न नागरी लिपि में प्रयुक्त चन्द्रबिन्दु जैसा ही होता है, जो वर्ण की शिरोरेखा पर लगाया जाता है। कहीं-कहीं यह उलटा भी लिखा हुआ मिलता है। यहाँ दोनों ही प्रकार निम्नवत् हैं -

ॐ	चँ	पँ	यँ

मात्रा लेखन प्रक्रिया

इस लिपि में प्रयुक्त मात्राओं के लेखन हेतु निम्नोक्त चिह्नों का प्रयोग हुआ है-

आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ
	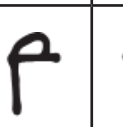	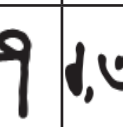	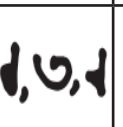		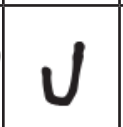	
ए	ऐ	ओ	औ	अनुस्वार	विसर्ग	
	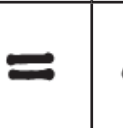			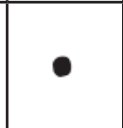	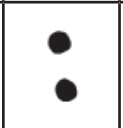	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इनमें से 'आ' स्वर की मात्रा के तीन प्रकार मिलते हैं। यह मात्रा व्यंजन की शिरोरेखा के अन्त में कभी एक छोटी सी बिन्दी, कभी छोटा दण्ड और कभी त्रिकोणाकार के रूप में प्रयुक्त होती है। विदित हो कि स्वतन्त्र 'आ' लिखते समय ह्रस्व 'अ' के नीचे एक छोटा सा गोलाकार चिह्न लगाकर लिखने का विधान है जो ह्रस्व 'उ'कार की मात्रा जैसा दिखता है। ह्रस्व 'इ' एवं दीर्घ 'ई' की मात्राएँ देवनागरीवत् ही प्रयुक्त हुई हैं। ह्रस्व 'उ' एवं दीर्घ 'ऊ' की मात्राओं के अनेकविध प्रयोग देखने को मिलते हैं, जिनका उल्लेख हम आगे करेंगे।

'ए' व 'ऐ' की मात्राएँ शिरोरेखा पर क्रमशः एक व दो पडीपाई के रूप में लगती हैं। 'ओ' व 'औ' की मात्राओं में सिर्फ इतना ही अन्तर है कि 'ओ' की मात्रा के पीछे एक छोटीसी 'आ' की मात्रा लगा देने से वह 'औ' की मात्रा बन जाती है। 'ऋ' की मात्रा लगभग नागरीवत् ही है।

यहाँ 'क' वर्ण के साथ सभी मात्राओं का प्रयोग निम्नवत है-

क	का	कि	की	कु	कू	कृ
कॄ	के	कै	को	कौ	कं	कः

विदित् हो कि 'ङ, ज, ट तथा ण' के साथ जब 'आ' की मात्रा लगती है तो इनके आकार में किंचित परिवर्तन हो जाता है, 'ङा' तथा 'जा' तो एक समान ही दिखते हैं, यथा-

ङ	ङा	ज	जा	ट	टा	ण	णा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ह्रस्व 'उ'कार एवं दीर्घ 'ऊ'कार की मात्राओं के विविध प्रयोग :

'उ' एवं 'ऊ' की मात्राओं के ब्राह्मी, ग्रंथ, नागरी आदि लगभग सभी लिपियों में एकाधिक वैकल्पिक प्रयोग देखने को मिलते हैं। शारदा लिपि भी इस नियम से अछूती नहीं रही। यहाँ ह्रस्व 'उ'कार मात्रा के लगभग तीन प्रयोग व दीर्घ 'ऊ'कार की मात्रा के दो प्रयोग प्रदर्शित किये जा रहे हैं, जो व्यंजन वर्णों के नीचे की ओर लगाने का विधान है। यथा-

कु	कू	छु	छू
		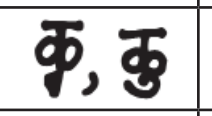	
दु	दू	भु	भू
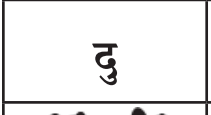			

ठु	ठू	तु	तू
	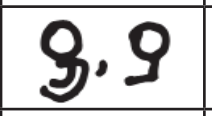	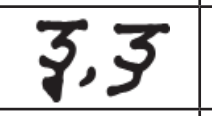	
मु	मू	शु	शू

विदित् हो कि शारदा लिपि में जब 'क' वर्ण के साथ ह्रस्व या दीर्घ 'उ'कार की मात्रा का प्रयोग होता है तो इसका स्वरूप किंचित परिवर्तित हो जाता है जैसा कि ऊपर दर्शाया गया है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसी प्रकार जब 'क' के साथ ह्रस्व या दीर्घ 'ऋ'कार की मात्रा का प्रयोग होता है तो भी इसका स्वरूप परिवर्तित होता है।[1]

यथा-

कृ	कॄ
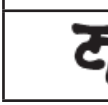	

रेफसूचक चिह्न :

इस लिपि में रेफ के लिए ग्रंथ या नागरीवत् अलग से कोई चिह्न प्रयुक्त नहीं हुआ है। लेकिन रेफ के अनेकविध प्रयोग अलग-अलग वर्णों की प्रकृति अनुसार देखने को मिलते हैं।

कुछ वर्णों को 'र' के नीचे लिखकर रेफ का प्रयोग किया जाता है[2] तो कुछ वर्णों के साथ ऊपर की ओर रिक्त स्थान छोडकर इसका प्रयोग दर्शाया जाता है।

कुछ वर्णों का तो रेफ लगने के कारण स्वरूप ही बदल जाता है और वे एक तीसरा ही नया स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं। यहाँ रेफ के समस्त प्रयोगों को क्रमानुसार प्रदर्शित किया जा रहा है।

मध्यस्थ हलन्त 'र' वर्ण प्रायः अपने अग्रिम वर्ण के आरम्भ में शीर्ष पर लिखकर रेफ चिह्न के रूप में प्रयुक्त होता है। अर्थात् ऊपर 'र' लिखकर उसके नीचे दूसरा वर्ण जिस पर रेफ का प्रयोग दर्शाना हो वह लिख दिया जाता है। इसके अलावा एक प्रयोग ऐसा भी मिलता है जिसके तहत जिस वर्ण पर रेफ लगाना हो उस वर्ण को लिखकर, उसके आगे एक गोलाकार चिह्न बना दिया जाता है; जो रेफ के रूप में उच्चारित होता है।

---

1. ग्रंथ, प्राचीन देवनागरी एवं आधुनिक देवनागरी लिपियों में भी यह परिवर्तन देखने को मिलता है।
2. ब्राह्मी लिपि में भी यही प्रयोग देखने को मिलता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यहाँ इन दोनों ही प्रकारों को निम्नवत दर्शाया जा रहा है -

र् + क = र्क	र् + क = र्क
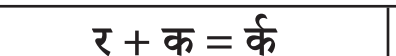	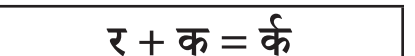

अर्क		
आर्त		
कार्त		
कर्ता		
हर्ता		
वार्ता		
मार्तण्ड		
अर्पण		
प्रत्यर्पण		
नर्त्तन्		

जब भी 'ख, ग, च, ज, ध एवं श' इन छः वर्णों में रेफ लगता है तो हलन्त 'र' का सीधा प्रयोग न कर केवल उस स्थान को रिक्त अथवा खाली रखकर नीचे की ओर द्वितीय अक्षर को लिख दिया जाता है। ऐसी स्थिती में उपरोक्त इन छः वर्णों की पृष्ठ मात्रा (खडीपाई) ऊपर की ओर से, अर्थात् शिरोरेखा से नीचे की ओर स्पष्टतः रिक्त दिखाई पडती है। अतः यदि इन वर्णों को ध्यान में

For Private and Personal Use Only

रखा जाये तो उपरोक्त शिरोरेखा से संलग्न ऊपर से नीचे की ओर खडीपाई वाले रिक्तस्थान को देखते ही इस प्रक्रिया का बोध हो जाता है। यथा-

र् + ख = र्ख - सुर्ख, सुर्खियाँ
र् + च = र्च - अर्चना, चर्चा
र् + ध = र्ध - उत्तरार्ध, ऊर्ध्व
र् + ग = र्ग - मार्ग, दुर्गा
र् + ज = र्ज - आर्जव, अर्जुन
र् + श = र्श - दर्शन, विमर्श

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'ण' पर रेफ रगाकर 'र्ण' लिखते समय ये दोनों वर्ण आपस में मिलकर एक तीसरा ही नया स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं, जो देखने में तो लगभग 'ल' वर्ण जैसा होता है लेकिन उसे 'र्ण' पढा जाता है। यथा-

र् + ण = र्ण

कर्ण		कर्णाटक	
वर्ण		निर्णय	
जीर्ण		निर्णायक	
वर्णित		वर्णनम्	
पूर्णिमा		कर्णी	

इसी प्रकार जब 'य' वर्ण पर रेफ लगता है तो भी 'र्' और 'य' दोनों संयुक्त होकर एक नया स्वरूप धारण कर लेते हैं, जो देखने में तो नागरी लिपि के 'द' वर्ण जैसा होता है लेकिन 'र्य' पढा जाता है।

हस्तप्रत लिप्यन्तर एवं पठन-पाठन के समय 'र्य' का यह स्वरूप सदैव 'द' का भ्रम करता है। अतः इस चिह्न को विशेषरूप से ध्यान में रखना चाहिए।

यथा-

र् + य = र्य
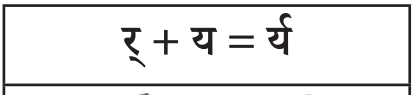

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आर्य		धार्य	
वर्य	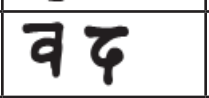	कार्यालय	
धैर्य	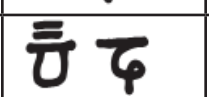	पर्यङ्क	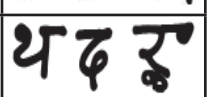
मौर्य	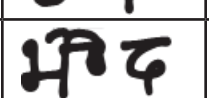	पर्युपासते	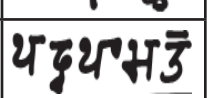
पर्याय	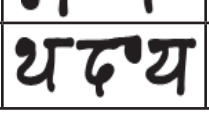	पर्याप्त	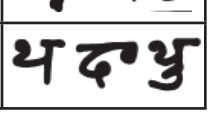

जब भी अग्र हलन्त 'र्' के बाद 'व' वर्ण आता है तो भी 'र्व' लिखने के लिए एक नये आकार का संयुक्ताक्षर उभरकर आता है, जो देखने में तो नागरी लिपि के 'च' वर्ण जैसा होता है लेकिन पढा जाता है 'र्व'। यथा-

र् + व = र्व

सर्व	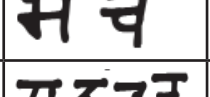	गर्वित	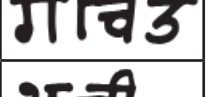
चतुर्वर्ग	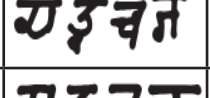	पूर्वी	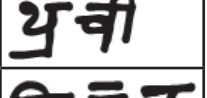
चतुर्वर्ण	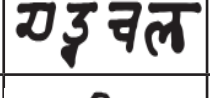	निर्वेद	
पर्वाधिराज	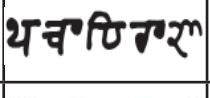	सर्वोदय	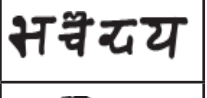
निर्वाचनम्	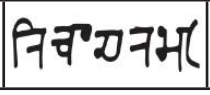	सर्वौषद	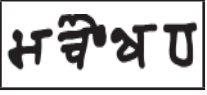

जब भी हलन्त 'र्' के बाद 'थ' वर्ण आता है तो 'र्थ' के लिए एक नये आकार का संयुक्त व्यंजन उभरकर आता है। यह वर्ण लगभग नागरी लिपि के दीर्घ 'ऊ'कार सदृश होता है, जो शारदा लिपि में सर्वदा 'र्थ' का बोध कराता

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। यथा-

र् + थ = र्थ

पार्थ	
सार्थ	
सिद्धार्थ	
तीर्थोदक	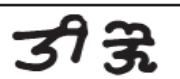
प्रार्थना	
कार्यार्थम्	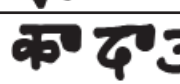
पुरुषार्थ	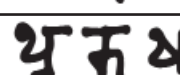
अर्थात्	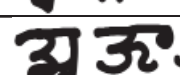
अर्थाय	
समर्थ	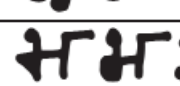

शारदा लिपि में अंक लेखन

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०	१००

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि की बाराक्षरी

क	का	कि	की	कु	कू	कृ	कॄ	के	कै	को	कौ	कं	कः
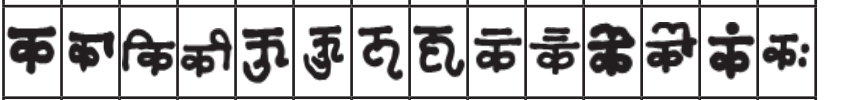													
ख	खा	खि	खी	खु	खू	खृ	खॄ	खे	खै	खो	खौ	खं	खः
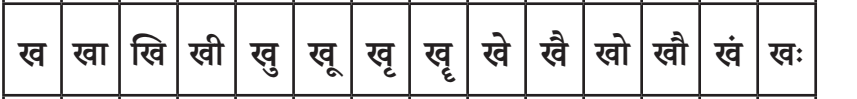													
ग	गा	गि	गी	गु	गू	गृ	गॄ	गे	गै	गो	गौ	गं	गः
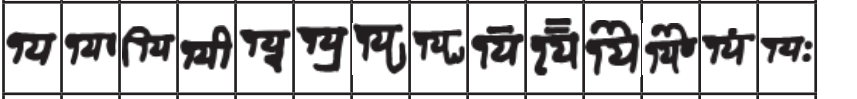													
घ	घा	घि	घी	घु	घू	घृ	घॄ	घे	घै	घो	घौ	घं	घः
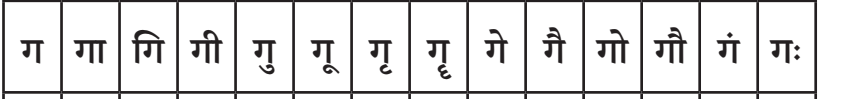													
च	चा	चि	ची	चु	चू	चृ	चॄ	चे	चै	चो	चौ	चं	चः
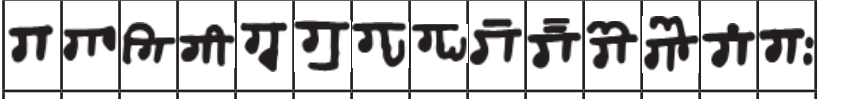													
छ	छा	छि	छी	छु	छू	छृ	छॄ	छे	छै	छो	छौ	छं	छः
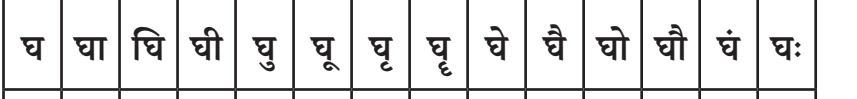													
ज	जा	जि	जी	जु	जू	जृ	जॄ	जे	जै	जो	जौ	जं	जः
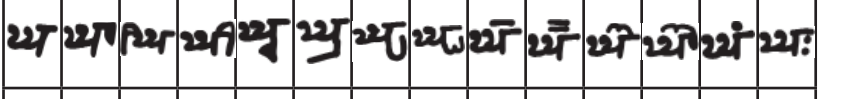													

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि की बाराक्षरी

झ	झा	झि	झी	झु	झू	झृ	झॄ	झे	झै	झो	झौ	झं	झः
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
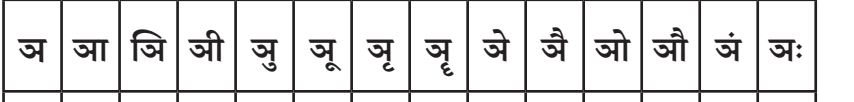													
ट	टा	टि	टी	टु	टू	टृ	टॄ	टे	टै	टो	टौ	टं	टः
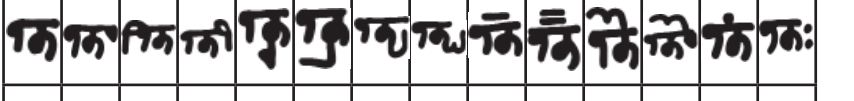													
ठ	ठा	ठि	ठी	ठु	ठू	ठृ	ठॄ	ठे	ठै	ठो	ठौ	ठं	ठः
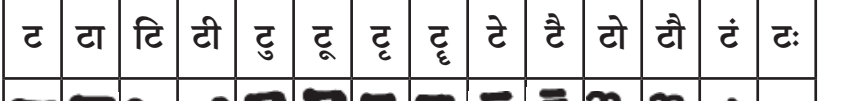													
ड	डा	डि	डी	डु	डू	डृ	डॄ	डे	डै	डो	डौ	डं	डः
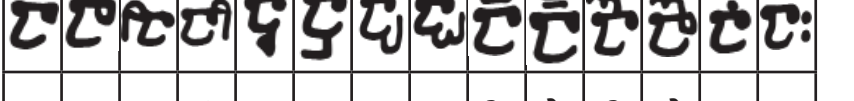													
ढ	ढा	ढि	ढी	ढु	ढू	ढृ	ढॄ	ढे	ढै	ढो	ढौ	ढं	ढः
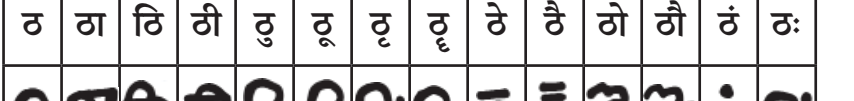													
ण	णा	णि	णी	णु	णू	णृ	णॄ	णे	णै	णो	णौ	णं	णः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि की बाराक्षरी

त	ता	ति	ती	तु	तू	तृ	तॄ	ते	तै	तो	तौ	तं	तः
थ	था	थि	थी	थु	थू	थृ	थॄ	थे	थै	थो	थौ	थं	थः
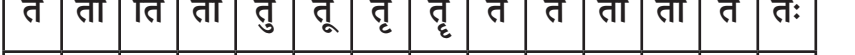													
द	दा	दि	दी	दु	दू	द्द	दृ	दे	दै	दो	दौ	दं	दः
ध	धा	धि	धी	धु	धू	धृ	धॄ	धे	धै	धो	धौ	धं	धः
न	ना	नि	नी	नु	नू	नृ	नॄ	ने	नै	नो	नौ	नं	नः
प	पा	पि	पी	पु	पू	पृ	पॄ	पे	पै	पो	पौ	पं	पः
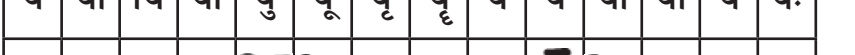													
फ	फा	फि	फी	फु	फू	फृ	फॄ	फे	फै	फो	फौ	फं	फः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि की बाराक्षरी

ब	बा	बि	बी	बु	बू	बृ	बॄ	बे	बै	बो	बौ	बं	बः
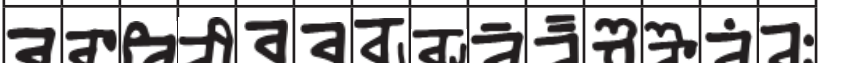													
भ	भा	भि	भी	भु	भू	भृ	भॄ	भे	भै	भो	भौ	भं	भः
म	मा	मि	मी	मु	मू	मृ	मॄ	मे	मै	मो	मौ	मं	मः
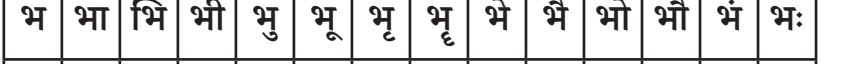													
य	या	यि	यी	यु	यू	यृ	यॄ	ये	यै	यो	यौ	यं	यः
र	रा	रि	री	रु	रू	रृ	रॄ	रे	रै	रो	रौ	रं	रः
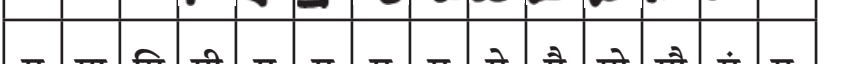													
ल	ला	लि	ली	लु	लू	लृ	लॄ	ले	लै	लो	लौ	लं	लः
व	वा	वि	वी	वु	वू	वृ	वॄ	वे	वै	वो	वौ	वं	वः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि की बाराक्षरी

श	शा	शि	शी	शु	शू	शृ	शॄ	शे	शै	शो	शौ	शं	शः
ष	षा	षि	षी	षु	षू	षृ	षॄ	षे	षै	षो	षौ	षं	षः
स	सा	सि	सी	सु	सू	सृ	सॄ	से	सै	सो	सौ	सं	सः
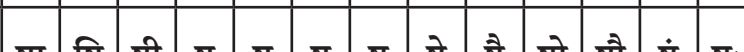													
ह	हा	हि	ही	हु	हू	हृ	हॄ	हे	है	हो	हौ	हं	हः
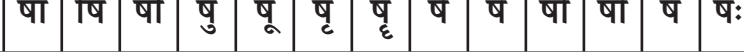													
क्ष	क्षा	क्षि	क्षी	क्षु	क्षू	क्षृ	क्षॄ	क्षे	क्षै	क्षो	क्षौ	क्षं	क्षः
त्र	त्रा	त्रि	त्री	त्रु	त्रू	त्रृ	त्रॄ	त्रे	त्रै	त्रो	त्रौ	त्रं	त्रः
ज्ञ	ज्ञा	ज्ञि	ज्ञी	ज्ञु	ज्ञू	ज्ञृ	ज्ञॄ	ज्ञे	ज्ञै	ज्ञो	ज्ञौ	ज्ञं	ज्ञः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि में संयुक्ताक्षर लेखन विधान

शारदा लिपिबद्ध पाण्डुलिपियों में प्रयुक्त संयुक्ताक्षरों का ज्ञान संपादनकार्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। जैसा की हम उपरोक्त प्रक्रिया में देख चुके हैं कि इस लिपि में कुछ अक्षर ऐसे हैं जो दूसरे वर्णों के साथ संयुक्त होने पर पूर्णतः परिवर्तित हो जाते हैं। यदि उस परिवर्तित स्वरूप का ज्ञान न हो तो हस्तप्रत पढते समय या लिप्यन्तर करते समय अनेकविध अशुद्धियाँ होने की संभावना बढ जाती है। यहाँ हम उरोक्त संयुक्ताक्षरों के अलावा मिलनेवाले संयुक्त वर्णों की प्रक्रिया एवं उनके स्वरूप का उल्लेख करेंगे।

जब हलन्त 'स्' के साथ 'थ' वर्ण जुडता है तो 'स्थ' लिखने के लिए 'स' को पूरा लिखकर उसके नीचे शारदा लिपि में 'र्थ' के लिए प्रयुक्त नागरी लिपि के 'ऊ'कार सदृश वर्ण को लिखा जाता है जिसका उच्चारण 'स्थ' होता है।[1] यथा-

स् + थ = स्थ

स्थान		स्थानीय	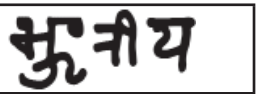
स्थापना		प्रस्थान	
अवस्था		स्थित	
आस्था		स्थूल	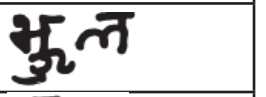
संस्थापित		स्थैर्य	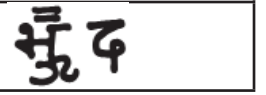

इसी प्रकार जब हलन्त 'त्' एवं 'न्' वर्णों के पश्चात् 'थ' वर्ण आता है तो 'त्थ' एवं 'न्थ' लिखने के लिए 'त' व 'न' वर्णों को पूरा लिखकर उनके नीचे भी

1. प्राचीन देवनागरी लिपि में भी 'स्थ, ज्ञ व ज्झ' के लिए नये ही परिवर्तित स्वरूप वाले संयुक्ताक्षर प्रयुक्त हुए हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'ऊ'कार सदृश वर्ण लिखा जाता है। यथा-

त् + थ = त्थ	न् + थ = न्थ
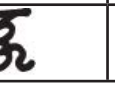	

अश्वस्थ		ग्रन्थागार	
उत्थान	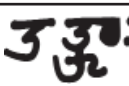	आत्ममन्थन	

जब 'ग्, द्, ब्' के साथ 'ध' वर्ण जुडता है तो ऐसी स्थिति में उस अक्षर को पूरा लिखकर उसके नीचे एक (ू) ऐसा चिह्न लगा दिया जाता है जिसका उच्चारण 'ग्ध, द्ध, ब्ध' होता है। यथा-

ग् + ध = ग्ध	द् + ध = द्ध	ब् + ध = ब्ध
	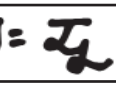	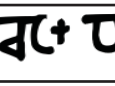

समृद्ध		वृद्धि	
श्रद्धा	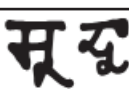	सिद्धि	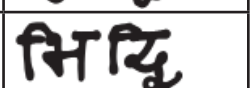
सिद्धार्थ	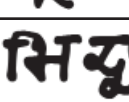	सिद्धू	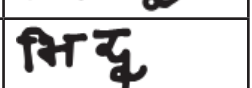

'द्' के साथ 'य' वर्ण जोडकर 'द्य' लिखने के लिए पूरा 'द' लिखकर उसके नीचे आधा 'य' जोडा जाता है जो नागरी लिपि में प्रचलित 'ऋ'कार की मात्रावत् दिखता है। यथा-

द् + य = द्य
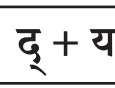

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अद्य		विद्यालय	
विद्या		विद्योपासना	

विदित् हो कि अन्य हलन्ताक्षरों में भी जब 'य' वर्ण जुडता है तो इसका स्वरूप उपरोक्त नागरी लिपि के ऋकार की मात्रावत् हो जाता है[1] यथा-

ध्यान	
रम्य	
वाक्य	
ख्याति	
योग्य	
ज्योति	
आदित्य	
अभ्यास	
काव्य	
विशेष्य	
स्याद्वाद	
न्यायदर्शन	

1. ग्रंथ लिपि में भी यकार जोडकर लिखने के लिए लगभ ऐसा ही चिह्न और यही प्रक्रिया देखने को मिलती है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मूर्धन्य 'ष्' के साथ जब 'ट' या 'ठ' वर्ण जुडते हैं तो दो प्रकार से लिखने का विधान मिलता है। एक तो 'ष' के नीचे 'ट' या 'ठ' वर्ण को यथावत् लिख दिया जाता है। जबकि दूसरी प्रक्रिया के तहत मूर्धन्य 'ष' लिखकर उसके नीचे नागरी लिपि में प्रचलित दीर्घ 'ऊ'कार की मात्रा सदृश चिह्न लगाया जाता है जो 'ष्ट' एवं 'ष्ठ' दोनों के लिए एक समान प्रयुक्त होता है। इस कारण यह एक-दूसरे का भ्रम भी उत्पन्न करता है।

ऐसी स्थिती में हस्तप्रत पढते समय आनुपूर्वी-अनानुपूर्वी विधान का प्रयोग कर योग्य पाठ का अवगाहन करना चाहिए। विदित हो कि शारदा लिपिबद्ध पाण्डुलिपियों में 'ष्ट' या 'ष्ठ' लिखने के लिए यह द्वितीय प्रयोग ही अधिक देखने को मिलता है। अतः इसे ध्यान में रखना चाहिए। ये दोनों प्रयोग निम्नवत् हैं-

ष् + ट = ष्ट	ष् + ठ = ष्ठ

हृष्ट	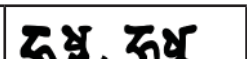	ओष्ठ	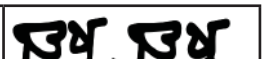
पुष्ट	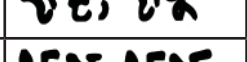	पृष्ठ	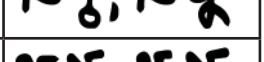
दृष्टि		घनिष्ठ	
वृष्टि		उत्तिष्ठ	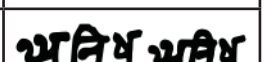
दृष्टांत	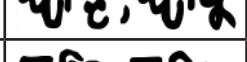	प्रतिष्ठा	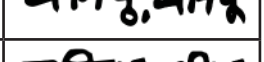

उपर्युक्त संयुक्ताक्षरों सहित शारदा लिपि में प्रयुक्त विविध संयुक्त व्यंजन वर्णों के परिवार की एक तालिका यहाँ प्रस्तुत की जा रही है। जिसके माध्यम से इस लिपि को सीखनेवाले जिज्ञासुओं को संपूर्ण प्रक्रिया का बोध हो सके।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संयुक्ताक्षर तालिका

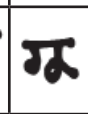

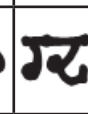

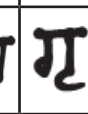

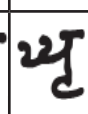

क्क	क्ख	क्व	क्त	क्य	क्व	क्थ	क्र	क्म	क्ल
क्व्य	ख्य	ख्र	ख्व	ग्र	ग्ण	ग्द	ग्ध	ग्म	ग्य
ग्व	ग्ल	घ्र	घ्न	घ्य	घ्म	ङ्क	ङ्ग	ङ्ख	च्च
च्छ	च्छ्र	च्म	च्ञ	च्र	च्य	च्ल	छ्र	छ्य	च्छ्व
ज्र	ज्य	ज्व	ज्वा	ज्ज्व	ञ्च	ट्ट	ट्ठ	ट्र	ट्य
ठ्र	ठ्य	ड्य	ड्ढ	ड्ग	ढ्य	ढ्र	ण्ट	ण्ठ	ण्ठ्य

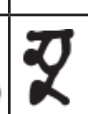

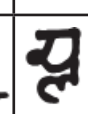

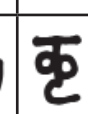

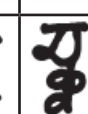

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ण्ढ	ण्ड	ण्य	ण्म	ण्व	त्क	त्त	त्य	त्त्व	त्थ
								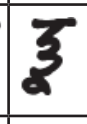	
त्र	त्प	त्म	त्स	त्य	त्रि	द्ग	द्द	द्ध	द्ध
							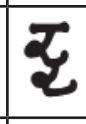	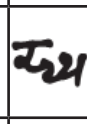	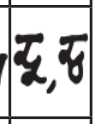
द्य	द्र	द्व	ध्न	ध्य	ध्म	ध्व	न्क	न्त	न्थ
न्द्र	न्त्य	न्न	न्य	न्म	प्त	प्र	प्प	प्य	प्व
								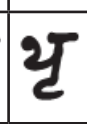	
प्ल	ब्य	ब्ज	ब्द	ब्ब	ब्भ	ब्य	ब्र	भ्य	भ्र
भ्व	म्य	म्म	म्ल	म्न	म्र	य्य	य्व	र्च	र्ज

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

र्ट	र्ठ	र्क	र्ख	र्ण	र्थ	र्द	र्ध	र्म	र्भ

र्य	र्व	र्ष	र्ह	ल्व	ल्म	ल्य	ल्ल	ल्र	लृ

व्व	व्य	व्र	व्ल	श्र	श्ल	श्च	श्व	ष्ट	ष्ठ

ष्ट्र	ष्ट्व	ष्ण	ष्य	ष्ठ्य	ष्ट्र	स्त	स्थ	स्य	स्व

स्स	स्म्य	स्त्व	स्र	ह्न	ह्ल	ह्व	ह्म	ह्य	ह्र

हृ	क्ष	क्ष्म	क्ष्य	त्र	त्र्य	ज्ञ	भ्व	भ्व	भ्व

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि में संयुक्ताक्षरयुक्त शब्द लेखन अभ्यास

तीर्थङ्कर		वृष्टि	
अरिहन्त		तीर्थ	
सिद्ध		ईहा	
आचार्य		ईषा	
ब्राह्मी		वित्त	
शारदा		सत्य	
सुन्दरी		पद्म	
स्वच्छ		श्लोक	
मुग्ध		ज्वलन्त	
चर्चा		भविष्य	
अर्जुन		क्षत्रीय	
प्रार्थना		उज्ज्वल	
अर्चना		उवज्झाय	
इच्छा		संस्थान	
लज्जा		वक्तृत्वम्	
पूजा		स्तवनम्	
कृष्ण		शक्तिः	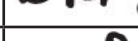
निरञ्जन		पाण्डुलिपि	
शूल		हस्तप्रत	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तूल		सल्लेखना	
सूर्य		गुञ्जारव	
स्तूप	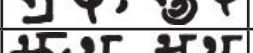	रूपम्	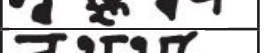
सूक्ष्म	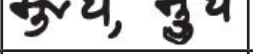	स्थान	
शून्य		स्वाध्याय	
स्थूल		उत्थान	
ओष्ठ		शुद्धि	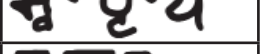
इष्ट		द्वयम्	
भक्तः		व्याख्यानम्	
द्वन्द्व	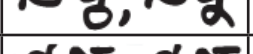	बुद्धि	
चञ्चलाक्षी		विद्वान्	
प्रतिष्ठा		पन्था	
ध्वनि		उत्तम	
धीरेन्द्र		ध्वनि	
चैत्य		ध्यान	
घृत	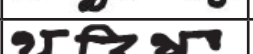	विद्या	
कैवल्यम्		पल्लवित	
ज्ञानबिन्दु		विष्णुः	
वैद्य		कल्याणम्	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मम्मटाचार्य		आञ्जनेय	
धर्मकीर्ति		सौष्ठव	
अर्चट		ओदनम्	
आह्लाद		औषधालय	
औषधालय		फलश्रुति	
सरस्वतीस्तोत्र		पूज्य	
कश्मीरदेशो		पच्चक्खाण	
भूस्वर्गः		आज्ञाकारी	
प्रकाशस्य		अधस्तात्	
आत्मविश्रान्ति		औचित्य	
अहंभावो हि		अतिकृच्छ्र	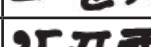
कीर्तितः		श्रद्धा	
पङ्कज		अध्यापक	
क्वचित्		अब्ज	
तत्त्वार्थ		व्याप्ति	
स्वास्थ्य	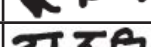	अयोध्या	
श्रुति		ब्रह्मर्षीणाम्	
अश्र	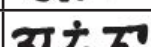	साधुष्वपि	
अश्रु	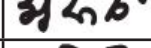	ऋषि	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्रणु		भूत्वा	
ज्येष्ठ		नेतृत्त्व	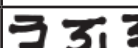
श्रेष्ठ		अखण्ड	
अहिफेन		ताण्डव	
अष्टाध्यायी		अमृत	
अर्थात्		उच्च	
अर्ध		तस्यैव	
अस्मिन		दैवम्	
अधोऽधः		आत्मैव	
ग्रन्थित		द्रोणाचार्य	
पितृन		योगस्थः	
जीर्ण		औपचारिक	
पर्युषण		कौन्तेय	
कार्यालय		अभ्युत्थानम्	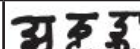
निर्द्वन्द्व		आनन्दपूर्वक	
इन्द्रीयार्थ		पाराशर्य	
ऐरावत		सांख्यदर्शन	
आचार्य		गुरुवासरः	
ईश्वर		उत्कर्ष	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा लिपि में नमस्कार महामन्त्र लेखन अभ्यास[1]

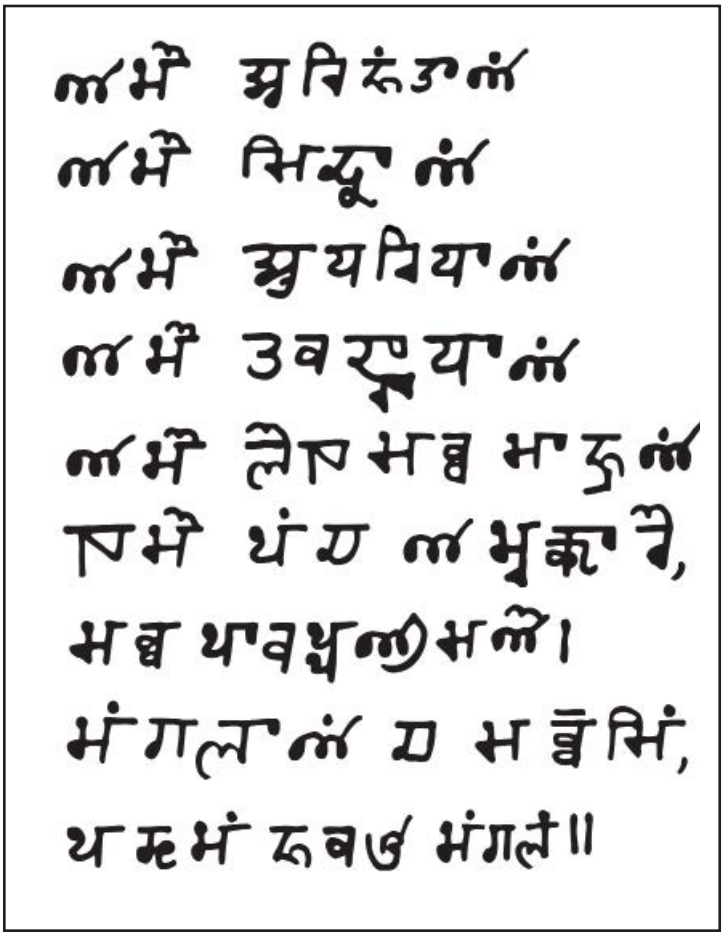

1. हमने इस पुस्तक में ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ एवं प्राचीन देवनागरी लिपियों में नमस्कार महामंत्र का लेखन किया है, जिससे लिपि अध्येताओं को इन चारों लिपियों का तुलनात्मक अध्ययन करने में सुविधा रहें। इसकी भाषा प्राकृत है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा-लिपिबद्ध पाण्डुलिपि ।। गौरीदशकम् ।।

(देवनागरी लिप्यन्तर सहित)

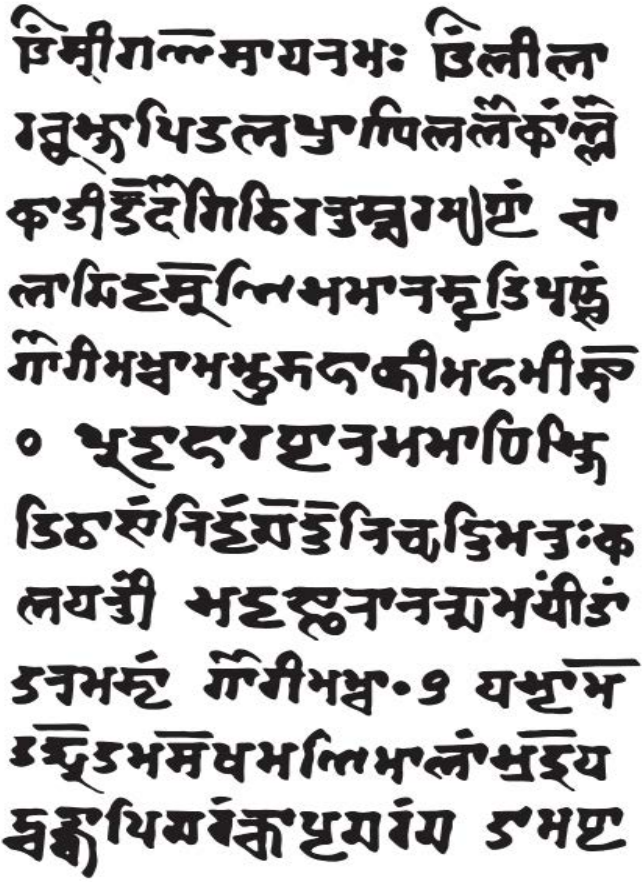

ॐ श्रीगणेशायनमः ॐ लीलारब्धस्थापितलुप्ताखिललोकाल्लोकातीतैर्योगि भिरन्तश्चरमृग्यां। बालादित्यश्रेणिसमानद्युतिपुञ्जां गौरीमम्बामम्भुरुहाक्षीमहमीडे ॥१॥ प्रत्याहारध्यानसमाधिस्थितिभाजां नित्यं चेत्ते निर्वृत्तिमन्तःकलयन्तीं । सत्यज्ञानानन्दमयीं तां तनुमद्यां(ध्यां) गौरीमम्बा० ॥२॥ यस्यामेतत्प्रेतमशेषमणिमालां सूत्रे यद्वत्क्वापि चरं क्वाप्यचरं च । तामध्या-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

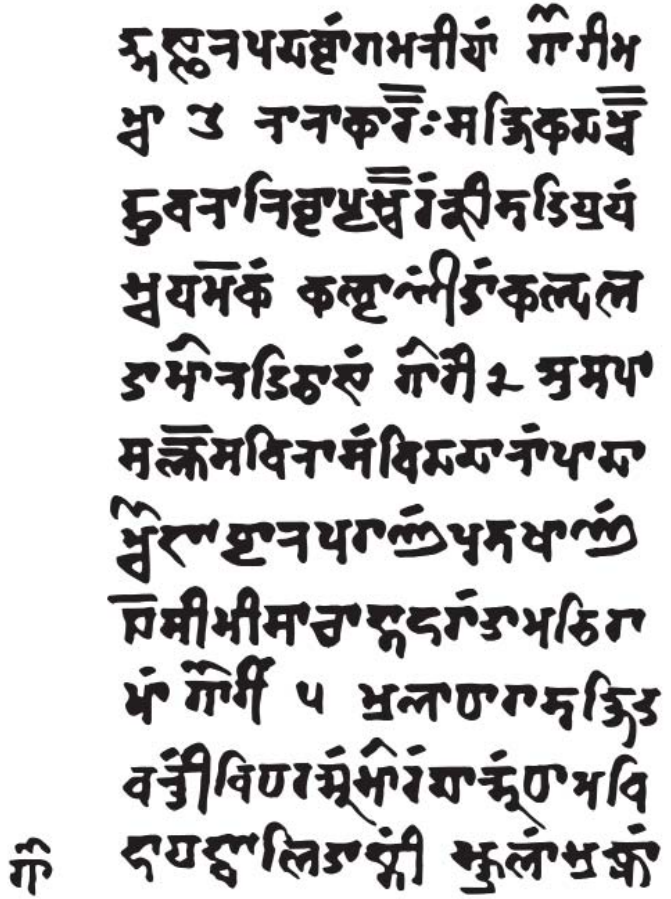

त्मज्ञानपदव्यां गमनीयां गौरीम्बा० ॥३॥ नानाकारैः शक्तिकदम्बैर्भुवनानि व्याप्यस्वैरं क्रीडति यूयं स्वयमेकं । कल्याणीं तां कल्पलतामौ(मा)नतिभाजां गौरीं० ॥४॥ आश(शा)पाशक्लेशविनाशं विददानां पादाम्बोजध्यानपराणां पुरुषाणां । ऐशीमीशार्धाङ्गहरां तामभिरामां गौरीं० ॥५॥ मूलाधारादुत्थितवन्तीं विधरन्ध्रं सौरं चान्द्रं धामविहाय ज्वलिताङ्गीं । स्थूलां सूक्ष्मां -

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

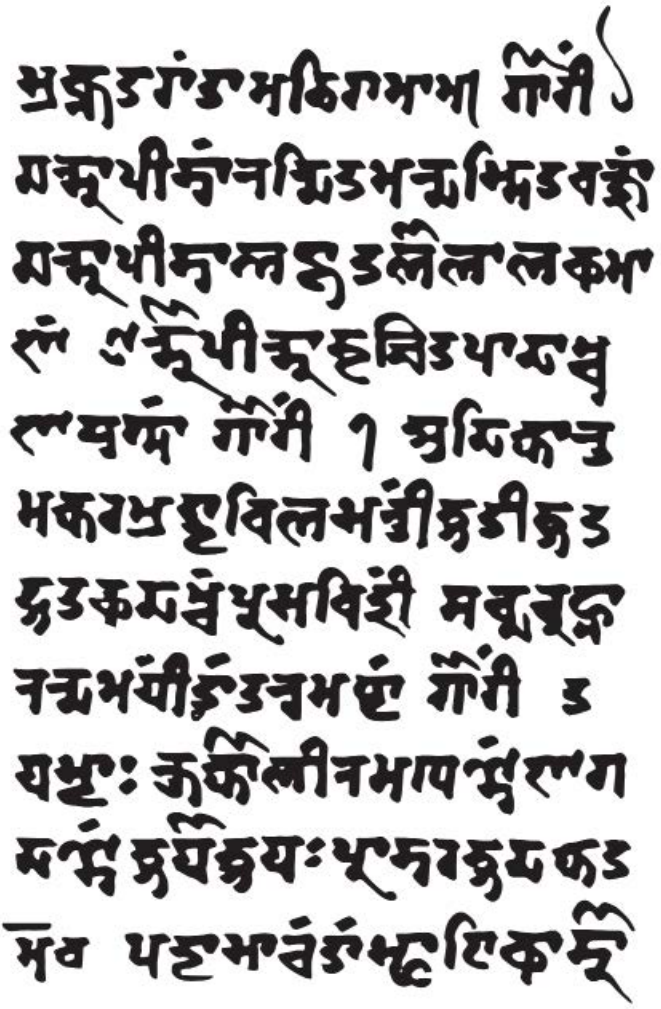

सूक्ष्मतरां तामभिरामाम् गौरीं० ॥६॥ चन्द्रापीडां नन्दितमन्दस्मितवक्त्रां चन्द्रापीडालङ्कृतलोलालकमा(भा)जं। इन्द्रोपीन्द्राभ्यर्चितपादाम्बुजयुग्मां गौरीं० ॥७॥ आदिक्षान्तमक्षरमूर्त्त्या विलसन्तीं भूतीभूतदुतकदम्बं प्रसविलीं। शब्दब्रह्मानन्दमयीं तां तनुमध्यां गौरीं० ॥८॥ यस्याः कुक्षौ लीनमखण्डं जगदण्डं भूयो भूयः प्रादुरभूदक्षतमेव। पत्यासार्धं तां स्फाटिकाद्रौ -

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

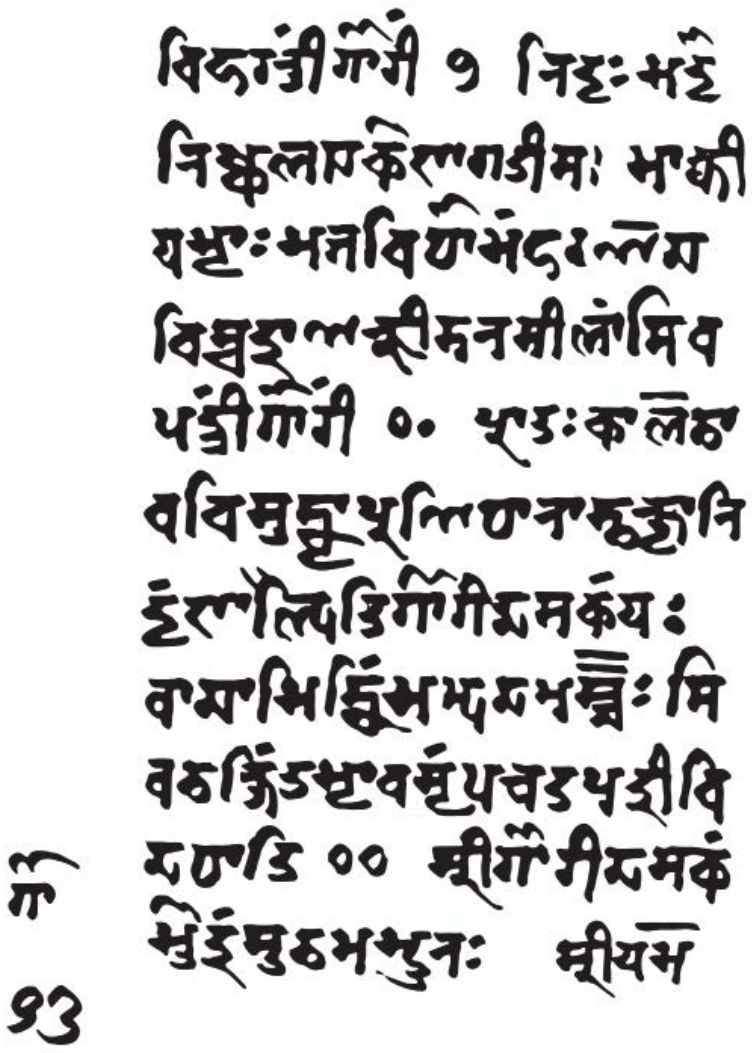

विहरन्तीं गौरीं० ॥९॥ नित्यः सत्यो निष्कल एको जगतीशः साक्षी यस्याः सर्गविधौ संहरणे च। विश्वत्राणक्रीडनमीलां शिवपत्नीं गौरीं० ॥१०॥ प्रातःकाले भावविशुद्ध्या प्रणिधानाद्भक्त्या नित्यं जल्पति गौरीदशकं यः। वाचासिद्धिं सम्पदमुच्चैः शिवभक्तिं तस्यावश्यं पर्वतपुत्री विदधाति ॥११॥ ॥ श्री गौरीदशकं स्तोत्रं शुभमस्तु नः श्रीयसे ॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नागरी-लिपिबद्ध पाण्डुलिपि ॥ गौरीदशकम् ॥

(आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर-कोबा के हस्तप्रत भण्डार में संगृहीत)

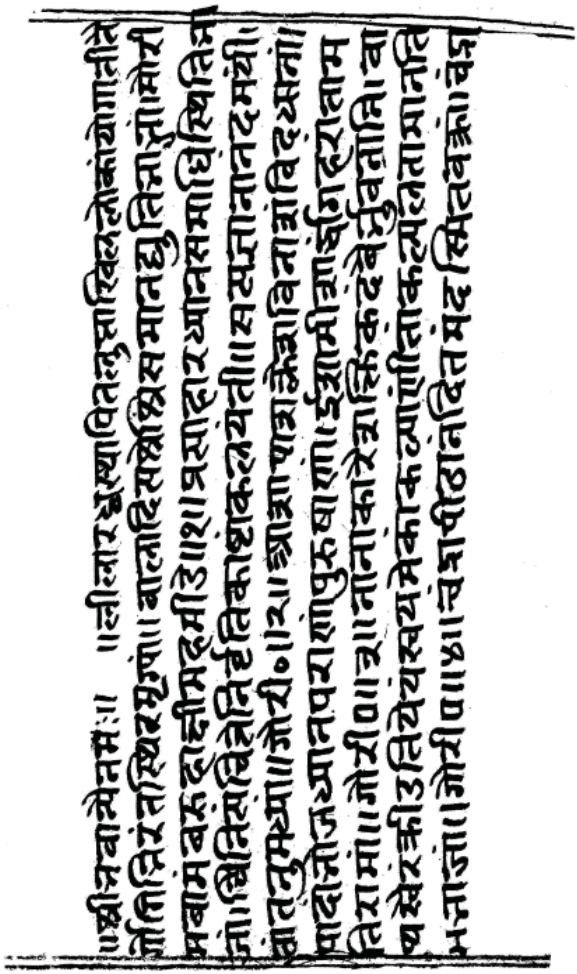

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

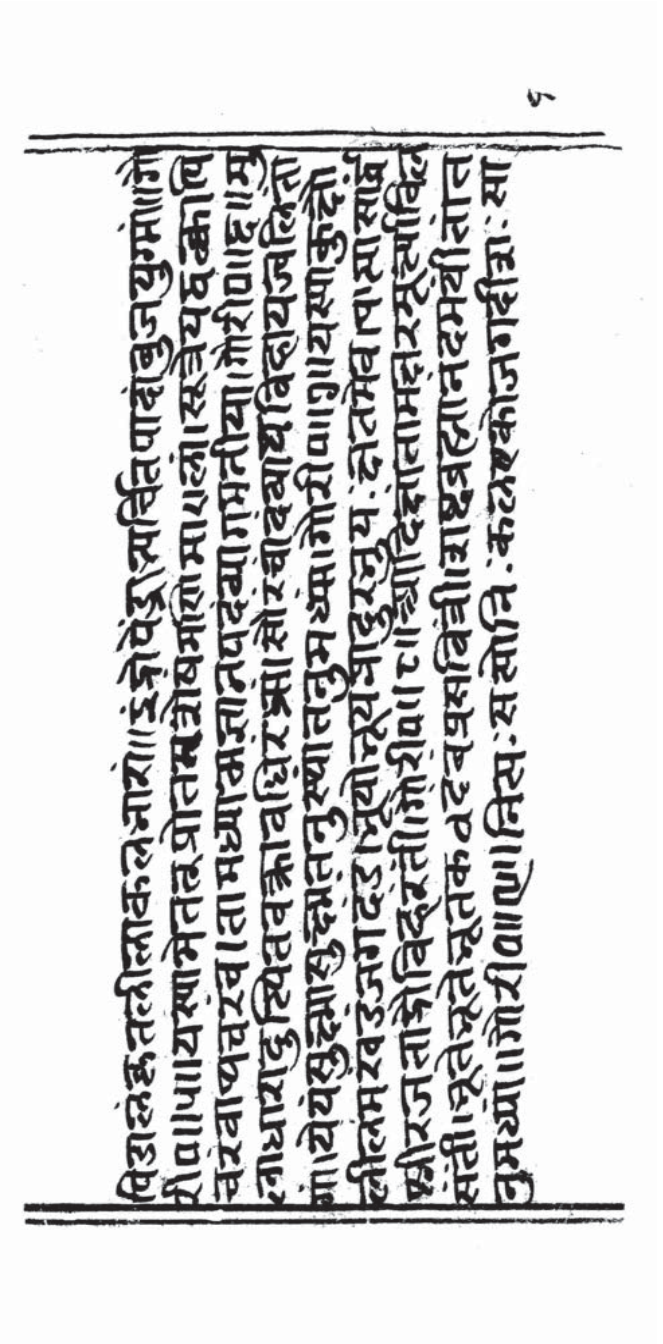

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

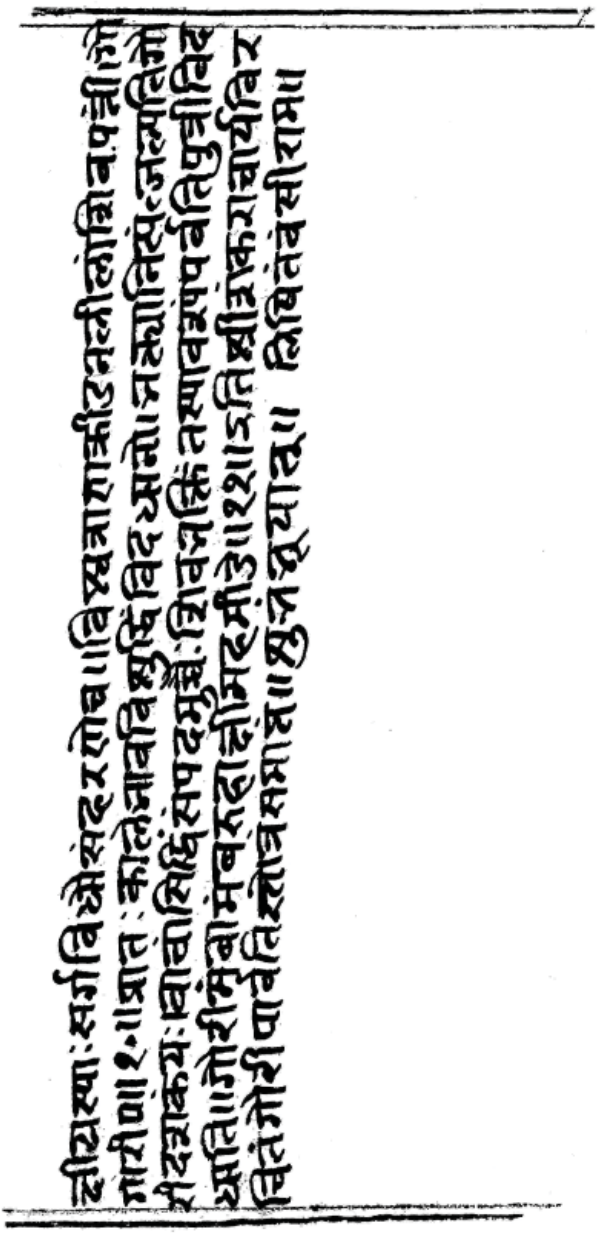

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शारदा एवं प्राचीन देवनागरी लिपियों के तुलनात्मक अध्ययन हेतु ऊपर प्रदर्शित शारदा लिपिबद्ध गौरीदशकम् की एक नागरी लिपिबद्ध संपूर्ण प्रति यहाँ दी जा रही है, जो 'श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा' के 'आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ग्रन्थागार' में संरक्षित है।

इससे लिपियों के तुलनात्मक अध्ययन में रुचि रखनेवाले गवेषकों को इन दोनों लिपियों के साम्य-वैषम्य को जानने में सुविधा होगी। नागरी लिपिबद्ध प्रति के सहयोग से शारदा लिपिबद्ध प्रति का लिप्यन्तर, पठन-पाठन एवं समीक्षात्मक संपादन भी सरलतया किया जा सकता है।

शारदा-लिपिबद्ध एक शिलालेख

(काश्मीर संग्रहालय की वेबसाईट से साभार)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारतीय प्राचीन श्रुतसंपदा को जीवित रखने में इस लिपि का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। प्राचीन इतिहास के पुनर्लेखन में भी शारदा लिपिबद्ध शिलालेखों, दस्तावेजों, सिक्कों, पाण्डुलिपियों, अभिलेखों एवं अन्य साक्ष्यों की अहम भूमिका रही है।

काश्मीर सहित भारतीय विविध संग्रहालयों में संगृहीत शारदा लिपिबद्ध इन पुरालोखों के गहन अध्ययन की आवश्यकता है, जिसके माध्यम से अवश्य ही प्रगति के नये पथ प्रकाशित होंगे। इस लिपि में निबद्ध पाण्डुलिपियों के पाठ अत्यन्त शुद्ध प्राप्त होते हैं, जिस कारण इस लिपि में उपलब्ध प्रतें आज भी आधुनिक समीक्षकों की प्रथम पसन्द बनी हुई हैं।

हालाँकि वर्तमान में भारतीय ग्रन्थागारों में प्राप्य शारदा लिपिबद्ध पाण्डुलिपियों की संख्या लगभग एक लाख के करीब है। लेकिन जो भी है वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और हमारे ग्रन्थागारों की शोभा में अभिवृद्धि करनेवाला है। इनमें ताडपत्र, भोजपत्र एवं कश्मीरी कागज पर लिखित चित्रित व सादा हस्तप्रतों का समावेश है।

यदि एक सुनियोजित सर्वेक्षण किया जाये तो इस संख्या में वृद्धि होने की भी पूरी संभावना है। मुझे पूरा विश्वास है कि एकदिन 'गिलगिट' व 'तुर्फान' की तरह अन्य स्थानों पर भी शारदा लिपिबद्ध प्राचीन खजाना अवश्य मिलेगा, जो हिन्दुस्तान के इतिहास को नई दिशा प्रदान करेगा।

इस लिपि ने अपने समान कई अन्य लिपियों को जन्म दिया है, जिनमें से गुरुमुखी, डोगरी, तिब्बती आदि कुछ लिपियाँ तो आज भी प्रचलित हैं। कुछ लिपियाँ शारदा की तरह ही लुप्त हो चुकी हैं और आज उनको जाननेवाले विद्वान भी नहीं रहे हैं, जो चिन्ता का विषय है।

शारदा लिपि के पठन-पाठन की परंपरा को जारी रखने के उद्देश्य से राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन-दिल्ही द्वारा आयोजित 'पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि अध्ययन कार्यशालाओं' में इस लिपि को भी पढाया जा रहा है, जो सराहनीय है। मुझे भी इन कार्यशालाओं में अध्ययन एवं अध्यापन हेतु समय-समय पर सम्मिलित होने का अवसर प्राप्त होता रहा है, जिसे मैं अपना सौभाग्य समझता हूँ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस अवसर पर मैं काश्मीर प्रान्तीय शारदालिपि विशारद गुरुवर प्रो. त्रिलोकीनाथ गञ्जू महोदय को सादर स्मरण करना चाहता हूँ, जिन्होंने विविध कार्यशालाओं के माध्यम से हमें इस लिपि का गहन अध्ययन कराया।

प्रो. गञ्जू महोदय अस्सी वर्ष की उम्र में भी एक नौजवान की तरह शारदा लिपि के संरक्षणार्थ आजीवन कृत् संकल्पित हैं। इस संकलन में यहाँ जो कुछ भी मैं संकलित कर सका हूँ वह सब उनके ही आशीर्वाद का फल है। यह संकलन उन्हें सादर समर्पित करते हुए भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि उनको सुदीर्घ आयुष्य प्रदान करे, जिससे शारदा लिपि के गूढ रहस्यों को प्रकाश में लाया जा सके।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस संकल के माध्यम से समाज में शारदा लिपि के प्रति जागृति आयेगी और इसे पढने-पढाने वालों की संख्या एवं रुचि में अभिवृद्धि होगी। आशा है गणमान्य विद्वज्जन इस लिपि को जीवित रखने के लिए योग्य प्रयास करते रहेंगे और हमारी यह प्राचीन थाती युग-युगान्तरों तक पुष्पित-पल्लवित होती रहेगी।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रंथ लिपि

उद्भव और विकास :

ग्रंथ लिपि हिंदुस्तान की प्राचीन लिपियों में से एक है। इसका उद्भव लगभग सातवीं-आठवीं सदी में ब्राह्मी लिपि से हुआ। जैसा हम पूर्व में उल्लेख कर चुके हैं कि हिंदुस्तान की समस्त प्राचीन लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से ही नि:सृत हुई हैं[1] अत: ब्राह्मी को समस्त लिपियों की जननी कहा गया है।

कालान्तर में ब्राह्मी लिपि के दो प्रवाह हुए-एक उत्तरी ब्राह्मी तथा दूसरा दक्षिणी ब्राह्मी। उत्तरी ब्राह्मी से शारदा, गुरुमुखी, प्राचीन नागरी, मैथिल, नेवारी, बंगला, उडिया, कैथी, गुजराती आदि विविध लिपियों का विकास हुआ।

जबकि दक्षिणी ब्राह्मी से दक्षिण भारत की मध्यकालीन तथा आधुनिक कालीन लिपियाँ अर्थात् तामिळ, तेळुगु, मळयाळम, ग्रंथ, कन्नडी, कलिंग, तुळु, नंदीनागरी, पश्चिमि तथा मध्यप्रदेशी आदि लिपियों का विकास हुआ। अत: ग्रंथ लिपि को शारदा लिपि के समकालीन अथवा कुछ समय पूर्व की लिपि कहा जा सकता है। इसका चलन विशेषरूप से दक्षिण भारत के मद्रास रियासत, तमिलनाडु व सीमावर्ती कर्नाटक, केरला, आंध्रप्रदेश आदि प्रदेशों में अधिक रहा। जिस समय उत्तर भारत में विशेषकर काश्मीर प्रान्त में शारदा लिपि फल-फूल रही थी उसी समय दक्षिण भारत में इस लिपि में ग्रन्थलेख कार्य हो रहा था।

ग्रंथ लिपि ताडपत्रों पर लिखने के लिए सबसे उपयुक्त लिपि मानी गई है। विदित् हो कि यह लिपि ताडपत्र पर शिलालेख, ताम्रलेख आदि की तरह नुकीली कील द्वारा खोदकर लिखी जाती थी। तत्पश्चात उन अक्षरों में काली स्याही भरने अथवा पोतने का विधान था।

इस लेखन-पद्धति का सबसे बडा फायदा यह है कि यदि उन ताडपत्रों की स्याही फीकी पड जाये अथवा उड जाये तो भी अक्षर विद्यमान रहते हैं। उन अक्षरों में पुन: स्याही भरी जा सकती है। आज भी कई ग्रन्थागारों में ग्रंथ-लिपिबद्ध अनेकों ग्रन्थ ऐसे मिलते हैं जिनके अक्षरों में स्याही नहीं भरी है, केवल

---

1. देखें पृष्ठ ३६, ब्राह्मी लिपि।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ताडपत्र पर अक्षरों को खोदकर लिख दिया गया है। लेकिन उन्हें पढा जा सकता है, विषय-वस्तु का लिप्यन्तर भी किया जा सकता है।

संभवत: ऐसी स्थिती में ग्रन्थ लिखने अथवा लिखवाने वाले के पास स्याही या समय का अभाव रहा होगा, जिस कारण ताडपत्रों पर ग्रन्थ लिखकर छोड दिया गया होगा और अक्षरों में स्याही नहीं भरी जा सकी होगी। क्योंकि उस समय ग्रन्थ लेखन हेतु स्याही, ताडपत्र, भोजपत्र, कागज, कपडा, कलम आदि लेखन-सामग्री एकत्रित करना इतना सरल नहीं था। अर्थात् साधन-सामग्री का बहुत अभाव था।

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र कोबा के आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ग्रन्थागार में ऐसे अनेकों ग्रंथलिपिबद्ध प्राचीन ताडपत्रीय ग्रन्थ विद्यमान हैं जिनके अक्षरों में स्याही नहीं भरी है, लेकिन उन्हें पढा जा सकता है।

ग्रंथलिपिबद्ध ताडपत्रों की एक खासियत यह है कि, यदि इन ग्रन्थों पर लंबे समय से बेदरकारी के कारण अत्यन्त धूल-मिट्टी अथवा कालिख जमा हो गई हो तो इन्हें पानी से धोया भी जा सकता है।

विदित् हो कि ऐसा करने से लिखे हुए अक्षरों को किसी प्रकार की हानि नहीं होती है। लेकिन ऐसा करते समय पाण्डुलिपि विशेषज्ञों का मार्गदर्शन लेना चाहिए। क्योंकि इस प्रक्रिया में विशेष ध्यान रखना होता है कि उन पत्रों को धोने के बाद सुखाने के लिए आवश्यकतानुसार योग्य ताप एवं नमी प्रदान किया जाये।

अस्तु प्राचीन भारतीय इतिहास एवं सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण, संपादन एवं पुन:लेखन में ग्रंथलिपिबद्ध पाण्डुलिपियों की अहम भूमिका रही है। इस लिपि में लिखित सामग्री मूल पाठ के निर्धारण एवं कर्तु:अभिप्रेत शुद्ध आशय तक पहुँचने में प्रामाणिक और महत्त्वपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत् करती है। इसके नामकरण एवं उद्भव और विकास विषयक विविध अवधारणाएँ निम्नवत् हैं-

ग्रंथ लिपि नामकरण अवधारणा :

ग्रंथ लिपि का निर्माण दक्षिण भारत में संस्कृत, प्राकृत व पाली के ग्रन्थ लिखने के लिए हुआ। क्योंकि वहाँ प्रचलित तामिळ लिपि में अक्षरों की न्यूनता के कारण संस्कृत भाषा लिखी नहीं जा सकती।

प्राचीन तामिळ लिपि में सिर्फ अठारह व्यंजन वर्णों का चलन है, जिनसे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तामिळ भाषा का साहित्य तो लिखा जा सकता है लेकिन संस्कृत भाषाबद्ध साहित्य लिखना संभव नहीं। अत: संस्कृत के ग्रन्थ लिखने के लिए इस लिपि का आविष्कार हुआ। इसे ग्रंथलिपि का संक्षिप्तिकरण कहा जा सकता है।

संभवत: इसी कारण इसे ग्रंथम् या ग्रंथ लिपि (ग्रन्थों को लिखने की लिपि) नाम दिया गया। इस लिपि के अक्षरों का लेखन करते समय एक ग्रन्थि (गाँठ) जैसी संरचना बनाकर अक्षर लिखने की परंपरा मिलती है, जिसके कारण भी इसका नाम ग्रंथ लिपि पडने की संभावना है।

विदित् हो कि दक्षिण क्षेत्र के लेखक अपने अक्षरों में सुन्दरता लाने के लिए अक्षर-लेखन में प्रयुक्त होनेवाली लकीरों (खडीमात्रा एवं पडीमात्रा) को वक्र और मरोडदार बनाते थे। इन लकीरों के आरंभ, मध्य या अन्त में कहीं-कहीं ग्रन्थियाँ भी बनाई जाती थीं।

इन ग्रन्थियों के कारण ताडपत्रों को लंबे समय तक सुरक्षित रखने में भी सहायता मिलती हैं। इन्हीं कारणों से इस लिपि के अक्षरों की संरचना ग्रन्थि (गाँठ) के समान बनने लगी और धीरे-धीरे इसके अक्षर अपनी मूल ब्राह्मी लिपि से भिन्न होते चले गये।

ग्रंथ लिपि की विशेषताएँ :

1. यह लिपि ब्राह्मी तथा अन्य भारतीय लिपियों की तरह बायें से दायें लिखी जाती है।
2. ताडपत्रों पर लिखने के लिए यह लिपि सर्वाधिक उपयोगी, सरल और सटीक लिपि मानी गयी है।
3. यह लिपि ताडपत्रों पर शिलालेख एवं ताम्रलेख आदि की तरह लोहे की नुकीली कील द्वारा खोदकर लिखी जाती है।
4. इस लिपि में शिरोरेखा का चलन नहीं है।
5. इस लिपि में समस्त उच्चारित ध्वनियों के लिए स्वतन्त्र एवं असंदिग्ध चिह्न विद्यमान हैं। अत: इसे पूर्णत: वैज्ञानिक लिपि कहा जा सकता है।
6. इस लिपि में अनुस्वार, अनुनासिक एवं विसर्ग हेतु स्वतन्त्र चिह्न प्रयुक्त हुए हैं, जो आधुनिक लिपियों में भी यथावत् स्वीकृत हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

7. इस लिपि में व्याकरण-सम्मत उच्चारण स्थानों के अनुसार वर्णों का ध्वन्यात्मक विभाजन है।
8. इस लिपि का प्रत्येक अक्षर स्वतन्त्ररूप से एक ही ध्वनि का उच्चारण प्रकट करता है, जो सुगम और पूर्णरूप से वैज्ञानिक है।
9. इस लिपि के अक्षरों का आकार समान है व शलाका प्रविधि से टंकित करने का विधान मिलता है।
10. अक्षरों की बनावट ग्रन्थि के आकार की है। प्रत्येक अक्षर में एक सूक्ष्म ग्रन्थि बनाकर लिखने की परंपरा है।
11. इस लिपि के अक्षर लेखन की दृष्टि से सरल माने गये हैं, जिन्हें ताडपत्रों पर नुकीली कील द्वारा गतिपूर्वक लिखा जा सकता है।
12. इस लिपि के समस्त अक्षर सलंग समानान्तर और अलग-अलग लिखे जाते हैं तथा मात्राओं का प्रयोग भी इसी प्रकार होता है।
13. इस लिपि में अनुस्वार को अक्षर के ऊपर न लिखकर उसके सामने लिखा जाता है।[1]
14. इस लिपि में '**आ, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ**' की मात्राएँ अक्षर के आगे या पीछे समानान्तर लगाई जाती हैं। अर्थात् उपरोक्त मात्राओं में से कोई भी मात्रा अक्षर के ऊपर या नीचे नहीं लगती है।
15. इस लिपि में संयुक्ताक्षर लेखन हेतु अक्षरों को बहुधा ऊपर-नीचे लिखने की परंपरा मिलती है। अर्थात् संयुक्ताक्षर लिखते समय जिस अक्षर को पहले बोला जाये या जिस अक्षर को आधा करना हो उसे ऊपर तथा बाद में बोले जानेवाले दूसरे अक्षर को उसके नीचे लिखा जाता है।
    ब्राह्मी लिपि में भी संयुक्ताक्षर लेखन हेतु यही परंपरा मिलती है। प्राचीन-नागरी-लिपिबद्ध पाण्डुलिपियों में भी कुछ संयुक्ताक्षर इसी प्रकार ऊपर से नीचे की ओर लिखे हुए मिलते हैं।
16. इस लिपि में रेफ सूचक चिह्न उस अक्षर के नीचे से ऊपर की ओर लगाया जाता है।
    जबकि दीर्घ 'ई' की मात्रा आधुनिक नागरी लिपि में प्रचलित रेफ की तरह

1. ब्राह्मी लिपि में भी यही प्रक्रिया अपनाई गई है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लगती है तथा ह्रस्व 'इ' की मात्रा आधुनिक नागरी में प्रचलित दीर्घ 'ई' की मात्रा की तरह लगती है।

17. इस लिपि का ज्ञान हिंदुस्तान में प्रचलित अन्य प्राचीन लिपियों को सरलतापूर्वक सीखने-पढने एवं ऐतिहासिक तथ्यों को समझने में अतीव सहायक सिद्ध होता है।
18. इस लिपि में लिखित ग्रन्थसंपदा को शुद्ध पाठ की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। क्योंकि यह लिपि कागज पर लिखने की परंपरा से प्राचीन है तथा इसमें निबद्ध पाण्डुलिपियों में पाठान्तरों की संभावना कम रहती है।
19. इस लिपि में विपुल साहित्य लिखा हुआ मिलता है। आज भी हिंदुस्तान का शायद ही कोई ऐसा बडा ग्रन्थागार होगा जिसमें ग्रंथलिपिबद्ध पाण्डुलिपियों का संग्रह न हो।
20. इस लिपि में निबद्ध ग्रन्थ अमूल्य निधि के रूप में माने गये हैं, जो अपने संग्रहालय की शोभा में चार-चाँद लगा देते हैं।
21. इस लिपि में संस्कृत, प्राकृत, पालि, अपभ्रंश आदि भाषाबद्ध साहित्य को शतप्रतिशत शुद्ध लिखा जा सकता है।

ग्रंथ लिपि की वर्णमाला :

शिलाखण्ड, ताडपत्र, ताम्रपत्र एवं लोहपत्र आदि प्राचीन साधनो पर उत्कीर्ण इस लिपि में प्रयुक्त स्वर एवं व्यंजन वर्णों की संरचना निम्नवत् है-

स्वर वर्ण लेखन प्रक्रिया

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ
𑌅	𑌆	𑌇	𑌈	𑌉	𑌊	𑌋	𑍠
ऌ	ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
𑌌	𑍡	𑌏	𑌐	𑌓	𑌔	𑌂	𑌃

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्यंजन वर्ण लेखन प्रक्रिया

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संयुक्ताक्षर लेखन प्रक्रिया

जैसा कि हमने ऊपर ग्रंथ लिपि की विशेषता वर्णित करते हुए कहा है कि इस लिपि में संयुक्ताक्षर लिखने हेतु ऊपर से नीचे की ओर लिखा जाता था। अर्थात् जिस अक्षर को आधा लिखना हो उसे ऊपर लिखकर दूसरे अक्षर को उसके नीचे या किंचित समानान्तर लिख दिया जाता था। अतः इस प्रक्रिया के तहत इन संयुक्ताक्षरों को निम्नवत् लिखने का विधान है-

क् + ष = क्ष	त् + र = त्र	ज् + ञ = ज्ञ

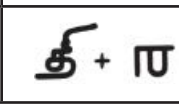

हलन्त चिह्न लेखन प्रक्रिया

इस लिपि में शुद्ध हलन्त के लिए ( ) चिह्न प्रयुक्त हुआ है। विदित् हो कि यह चिह्न अक्षर के ऊपर लगाया हुआ मिलता है। अर्थात् नागरी लिपि में जिस प्रकार किसी वर्ण के ऊपर रेफ का चिह्न लगाया जाता है, उसी प्रकार ग्रंथ लिपि में यह हलन्त चिह्न लगाया जाता है। उदाहरण स्वरूप यहाँ कुछ वर्णों में हलन्त चिह्न लगाकर इस प्रक्रिया को निम्नवत् समझा जा सकता है-

च्	छ्	ख्	प्	फ्	थ्	स्	ह्
य्	र्	ल्	व्	ज्	ड्	ण्	

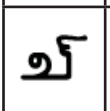

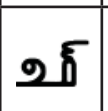

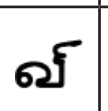

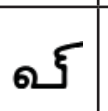

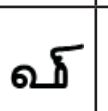

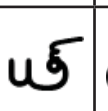

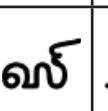

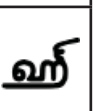

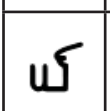

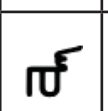

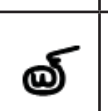

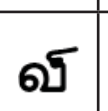

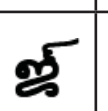

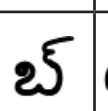

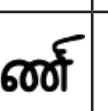

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसके अलावा **'क् ट् त् न् म्'** आदि इन पाँच वर्णों में अपवादस्वरूप हलन्त चिह्न लगाने का विधान उपरोक्त चिह्न से कुछ भिन्न है, जो निम्नवत् है-

क्	ट्	त्	न्	म्

अवग्रह चिह्न लेखन प्रक्रिया

इस लिपि में अवग्रह के लिए (ऽ) चिह्न प्रयुक्त हुआ है। यथा-

उद्धरेदात्मनाऽऽत्मानम् = 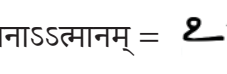

मात्रा लेखन प्रक्रिया

इस लिपि में माला लेखन हेतु विशेषत: निम्नोक्त चिह्नों का प्रयोग हुआ है-

आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ

ए	ऐ	ओ	औ	अनुस्वार	विसर्ग

इनमें से 'आ, उ, ऊ, ऋ, ए ,ऐ, ओ, औ, अनुस्वार तथा विसर्ग' की मात्राएँ वर्ण के आगे या पीछे समानान्तर लगाई जाती हैं। अर्थात् उपरोक्त मात्राओं में से कोई भी मात्रा उस वर्ण के ऊपर या नीचे नहीं लगती है। जबकि ह्रस्व 'इ' की मात्रा नागरी लिपि में प्रयुक्त दीर्घ 'ई' की मात्रा की तरह लगती है तथा दीर्घ 'ई' की मात्रा नागरी लिपि में प्रयुक्त 'रेफ चिह्न' की तरह लगती है। तथा 'रेफ चिह्न' उस वर्ण के आगे (दायीं ओर) नीचे से ऊपर की ओर लगता है। यहाँ 'क' वर्ण

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के साथ सभी मात्राओं का प्रयोग निम्नवत् है -

क	का	कि	की	कु	कू	कृ
कृ	के	कै	को	कौ	कं	कः

रेफसूचक चिह्न

इस लिपि में रेफ के लिए (_) चिह्न प्रयुक्त हुआ है जो उस वर्ण में नीचे से ऊपर की ओर लगाने का विधान है। यथा-

र्क	र्का	र्कि	र्की	र्कु
र्कू	र्के	र्कै	र्को	र्कौ
क्र	ग्र	श्र	श्री	त्र
द्र	ज्र	प्र	ह्र	स्र

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रंथ लिपि की बाराक्षरी

क	का	कि	की	कु	कू	कृ	कॄ	के	कै	को	कौ	कं	कः
ക	കാ	കി	കീ	കു	കൂ	കൃ	കൄ	കെ	കൈ	കൊ	കൗ	കം	കഃ
ख	खा	खि	खी	खु	खू	खृ	खॄ	खे	खै	खो	खौ	खं	खः
ഖ	ഖാ	ഖി	ഖീ	ഖു	ഖൂ	ഖൃ	ഖൄ	ഖെ	ഖൈ	ഖൊ	ഖൗ	ഖം	ഖഃ
ग	गा	गि	गी	गु	गू	गृ	गॄ	गे	गै	गो	गौ	गं	गः
ഗ	ഗാ	ഗി	ഗീ	ഗു	ഗൂ	ഗൃ	ഗൄ	ഗെ	ഗൈ	ഗൊ	ഗൗ	ഗം	ഗഃ
घ	घा	घि	घी	घु	घू	घृ	घॄ	घे	घै	घो	घौ	घं	घः
ഘ	ഘാ	ഘി	ഘീ	ഘു	ഘൂ	ഘൃ	ഘൄ	ഘെ	ഘൈ	ഘൊ	ഘൗ	ഘം	ഘഃ
ङ	ङा	ङि	ङी	ङु	ङू	ङृ	ङॄ	ङे	ङै	ङो	ङौ	ङं	ङः
ങ	ങാ	ങി	ങീ	ങു	ങൂ	ങൃ	ങൄ	ങെ	ങൈ	ങൊ	ങൗ	ങം	ങഃ
च	चा	चि	ची	चु	चू	चृ	चॄ	चे	चै	चो	चौ	चं	चः
ച	ചാ	ചി	ചീ	ചു	ചൂ	ചൃ	ചൄ	ചെ	ചൈ	ചൊ	ചൗ	ചം	ചഃ
छ	छा	छि	छी	छु	छू	छृ	छॄ	छे	छै	छो	छौ	छं	छः
ഛ	ഛാ	ഛി	ഛീ	ഛു	ഛൂ	ഛൃ	ഛൄ	ഛെ	ഛൈ	ഛൊ	ഛൗ	ഛം	ഛഃ
ज	जा	जि	जी	जु	जू	जृ	जॄ	जे	जै	जो	जौ	जं	जः
ജ	ജാ	ജി	ജീ	ജു	ജൂ	ജൃ	ജൄ	ജെ	ജൈ	ജൊ	ജൗ	ജം	ജഃ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

झ	झा	झि	झी	झु	झू	झृ	झॄ	झे	झै	झो	झौ	झं	झः
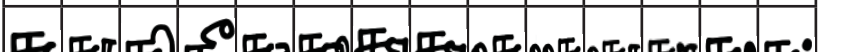													
ञ	ञा	ञि	ञी	ञु	ञू	ञृ	ञॄ	ञे	ञै	ञो	ञौ	ञं	ञः
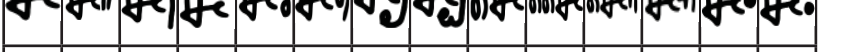													
ट	टा	टि	टी	टु	टू	टृ	टॄ	टे	टै	टो	टौ	टं	टः
ठ	ठा	ठि	ठी	ठु	ठू	ठृ	ठॄ	ठे	ठै	ठो	ठौ	ठं	ठः
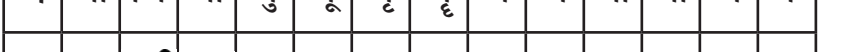													
ड	डा	डि	डी	डु	डू	डृ	डॄ	डे	डै	डो	डौ	डं	डः
ढ	ढा	ढि	ढी	ढु	ढू	ढृ	ढॄ	ढे	ढै	ढो	ढौ	ढं	ढः
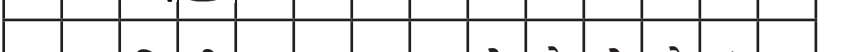													
ण	णा	णि	णी	णु	णू	णृ	णॄ	णे	णै	णो	णौ	णं	णः
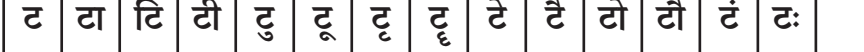													

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त	ता	ति	ती	तु	तू	तृ	तॄ	ते	तै	तो	तौ	तं	तः
थ	था	थि	थी	थु	थू	थृ	थॄ	थे	थै	थो	थौ	थं	थः
द	दा	दि	दी	दु	दू	द्र	दृ	दे	दै	दो	दौ	दं	दः
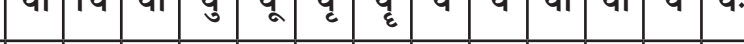													
ध	धा	धि	धी	धु	धू	धृ	धॄ	धे	धै	धो	धौ	धं	धः
न	ना	नि	नी	नु	नू	नृ	नॄ	ने	नै	नो	नौ	नं	नः
प	पा	पि	पी	पु	पू	पृ	पॄ	पे	पै	पो	पौ	पं	पः
फ	फा	फि	फी	फु	फू	फृ	फॄ	फे	फै	फो	फौ	फं	फः
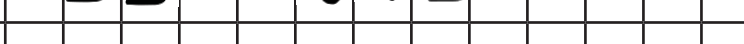													

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब	बा	बि	बी	बु	बू	बृ	बॄ	बे	बै	बो	बौ	बं	बः
भ	भा	भि	भी	भु	भू	भृ	भॄ	भे	भै	भो	भौ	भं	भः
म	मा	मि	मी	मु	मू	मृ	मॄ	मे	मै	मो	मौ	मं	मः
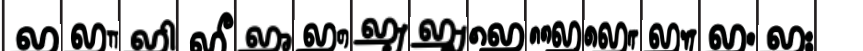													
य	या	यि	यी	यु	यू	यृ	यॄ	ये	यै	यो	यौ	यं	यः
र	रा	रि	री	रु	रू	रृ	रॄ	रे	रै	रो	रौ	रं	रः
ल	ला	लि	ली	लु	लू	लृ	लॄ	ले	लै	लो	लौ	लं	लः
व	वा	वि	वी	वु	वू	वृ	वॄ	वे	वै	वो	वौ	वं	वः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श	शा	शि	शी	शु	शू	शृ	शॄ	शे	शै	शो	शौ	शं	शः
ष	षा	षि	षी	षु	षू	षृ	षॄ	षे	षै	षो	षौ	षं	षः
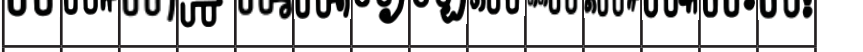													
स	सा	सि	सी	सु	सू	सृ	सॄ	से	सै	सो	सौ	सं	सः
ह	हा	हि	ही	हु	हू	हृ	हॄ	हे	है	हो	हौ	हं	हः
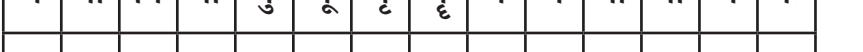													
क्ष	क्षा	क्षि	क्षी	क्षु	क्षू	क्षृ	क्षॄ	क्षे	क्षै	क्षो	क्षौ	क्षं	क्षः
त्र	त्रा	त्रि	त्री	त्रु	त्रू	त्रृ	त्रॄ	त्रे	त्रै	त्रो	त्रौ	त्रं	त्रः
ज्ञ	ज्ञा	ज्ञि	ज्ञी	ज्ञु	ज्ञू	ज्ञृ	ज्ञॄ	ज्ञे	ज्ञै	ज्ञो	ज्ञौ	ज्ञं	ज्ञः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रंथ लिपि संयुक्ताक्षर तालिका

क्क	क्ख	त्थ	क्य	त्य	श्व	भ्य	द्ध
	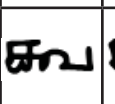	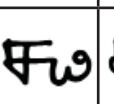	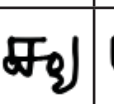	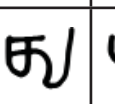	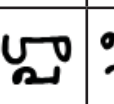	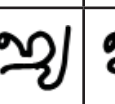	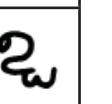
द्व	न्द्व	न्द	न्त	ञ्च	ञ्च	त्व	क्त
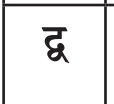	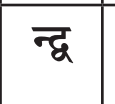	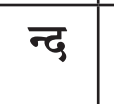	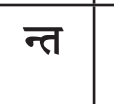	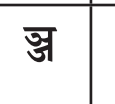	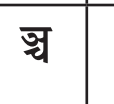	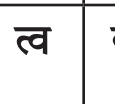	
ल्ल	त्र	र्द्ध	द्य	ज्ज्व	श्ल	श्र	ष्ट
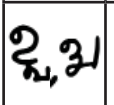	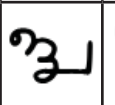	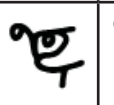	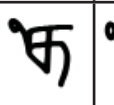	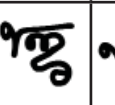	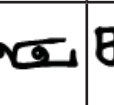	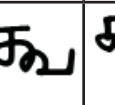	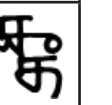

ग्रथ लिपि में अंक लेखन

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
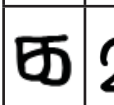	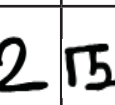	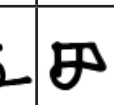		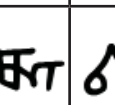	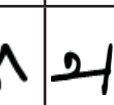	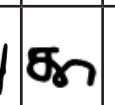	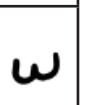		
१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०	१००
	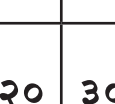								

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रंथ लिपि में नमस्कार महामन्त्र लेखन अभ्यास

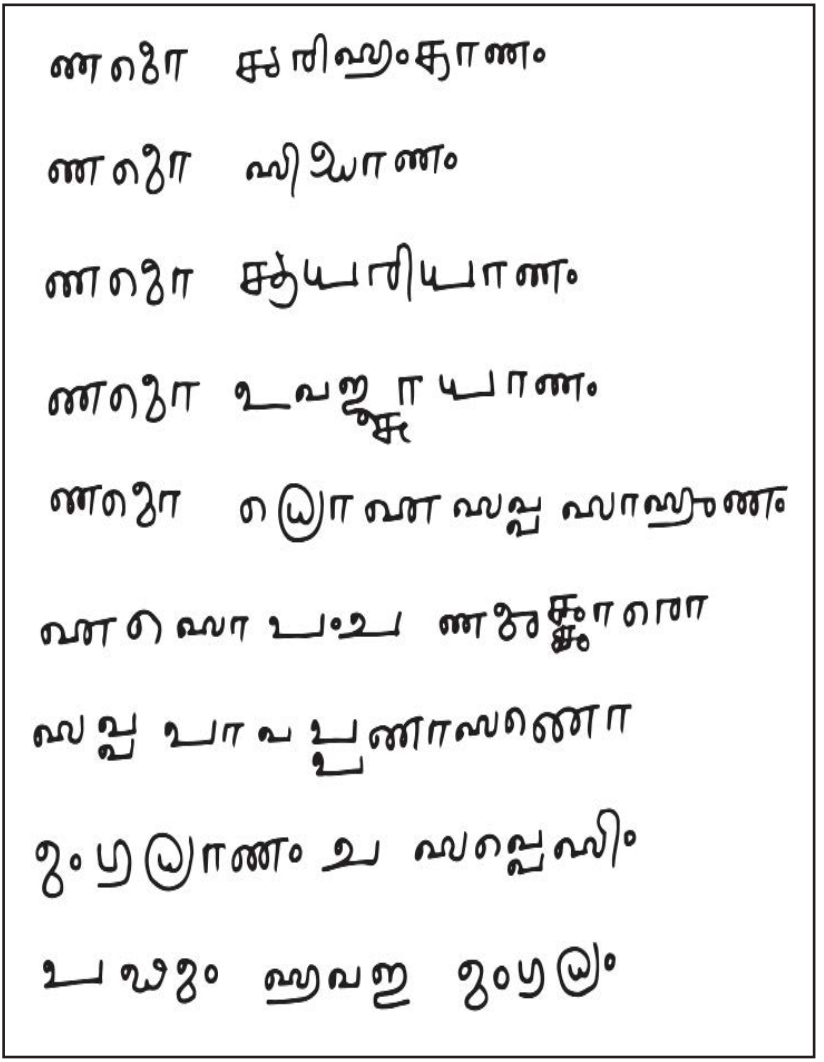

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रंथ लिपि में संयुक्ताक्षरयुक्त शब्द लेखन अभ्यास

तीर्थंकर		भविष्य	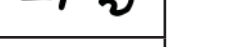
अरिहन्त		क्षत्रप	
सिद्ध	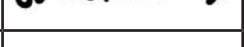	उज्ज्वल	
आचार्य		ज्वलन्त	
ब्राह्मी		चिक्कण	
सुन्दरी		क्लेश	
कनिष्क		वक्तृत्वम्	
मुग्ध		स्तवनम्	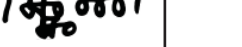
चर्चा	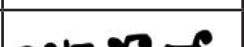	शक्तिः	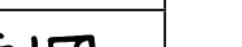
अर्चना		पाण्डुलिपि	
प्रार्थना	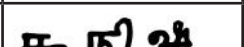	हस्तप्रत	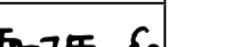
अर्जुन		सल्लकी	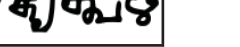
लज्जा		गुञ्जारव	
निरञ्जन	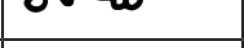	रूपम्	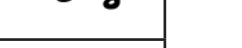

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ईश्वर		रुष्ट	
खड्ग		वञ्चना	
वित्त	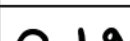	उत्थान	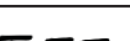
भक्त		शुद्धिः	
ग्रंथ		द्वयम्	
पद्म		क्रय	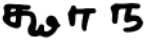
श्लोक		विक्रय	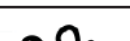
प्रतिध्वनि		चञ्चलाक्षी	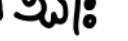
धीरेन्द्र		बुद्धि	
दर्शन		विद्वान्	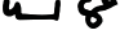
स्मृति	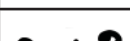	आज्ञा	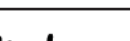
कैवल्यम्		पन्था	
ज्ञानबिन्दु	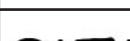	प्रश्न	
विद्यालय		उत्तर	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मम्मटाचार्य		मार्ग	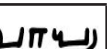
अर्चट	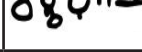	अर्धम्	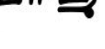
आह्लाद	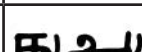	वञ्चना	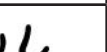
पश्चिम	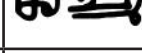	द्वन्द्वम्	
सरस्वती	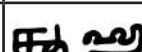	यजः	
पङ्कज	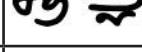	विष्णुः	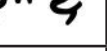
क्वचित		कल्याणम्	
शान्ति		अञ्जनशलाका	
तथ्य		कार्यालय	
स्नान	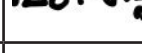	पल्लव	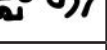
वह्नि		बल्लभेन्द्र	
उत्कृष्ट	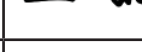	पन्ना	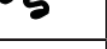
प्रशिष्य		कन्नौज	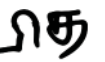
नृपेन्द्र	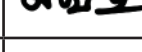	पूज्य	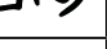
व्याख्याता		पुण्यम्	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रंथलिपिबद्ध भक्तामरस्तोत्र की ताडपत्रीय प्रत

(आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर कोबा के हस्तप्रत भण्डार में संगृहीत)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रंथलिपिबद्ध एक शिलालेख

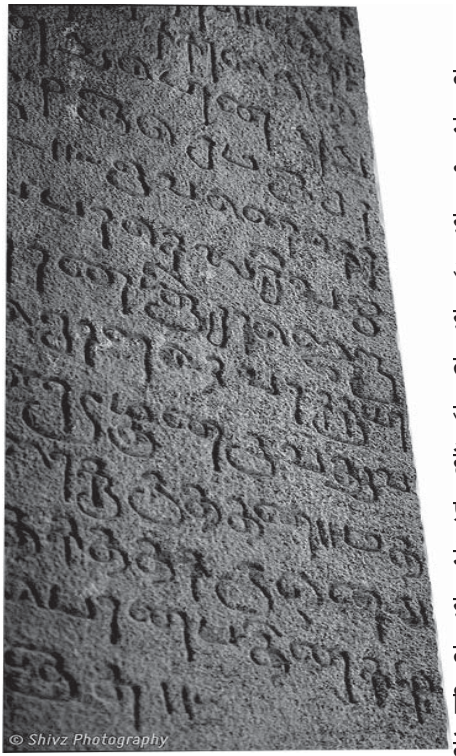

प्राचीन भारतीय श्रुतपरंपरा को जीवित रखने में इस लिपि का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। दक्षिण भारत के अनेकों राजवंशों का इतिहास ग्रंथ-लिपिबद्ध पुरालेखों के आधार पर ही रचा गया है। आज इस लिपि का पठन-पाठन पूर्णत: लुप्त हो चुका है और इस लिपि के जानने वाले भी गिने-चुने ही रह गये हैं। जबकि इस लिपि में संरक्षित प्राचीन साहित्य हमें प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो रहा है। विदित् हो कि इस लिपि का चलन तो विशेषकर दक्षिण भारत में रहा लेकिन इसमें निबद्ध साहित्य आज भी हिंदुस्तान के कई भण्डारों में मिल जाता है। गौरव की बात यह है कि हिंदुस्तान का शायद ही कोई ऐसा बडा ग्रंथागार होगा जिसमें ग्रंथ-लिपिबद्ध साहित्य संगृहीत न हो। इससे पता चल जाता है कि यह लिपि अपने समय में कितनी अधिक प्रचलित और प्रामाणिक लिपि रही होगी।

यद्यपि राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन-नई दिल्ली द्वारा भारत के विविध शिक्षाकेन्द्रों में समय-समय पर आयोजित होनेवाली 'पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि अध्ययन कार्यशालाओं' के माध्यम से इस लिपि को जीवित रखने के प्रयास किये जा रहे हैं, जो सराहनीय हैं। लेकिन इस क्षेत्र में यदि और भी शिक्षण संस्थाएँ एवं समाजसेवी विद्वान् आगे आयें तो भारतीय श्रुतपरंपरा को सदियों तक जीवित रखनेवाली इस पुरातन धरोहर को लुप्त होने से बचाया जा सकता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राचीन नागरी लिपि

उद्भव और विकास :

नागरी लिपि हिंदुस्तान की पुरातन लिपियों में से एक है। इसका उद्भव लगभग आठवीं-नवमी सदी में ब्राह्मी लिपि से हुआ। विदित हो कि हिंदुस्तान की समस्त लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से ही नि:सृत हुई हैं; अत: ब्राह्मी को समस्त लिपियों की जननी कहा गया है। कालान्तर में ब्राह्मी लिपि के दो प्रवाह हुए- १. उत्तरी ब्राह्मी तथा २. दक्षिणी ब्राह्मी।

उत्तरी ब्राह्मी से गुप्त एवं कुटिल लिपि सहित शारदा, गुरुमुखी, टाकरी, प्राचीन नागरी, मैथिली, नेवारी, बंगला, उडिया, कैथी, गुजराती आदि विविध लिपियों का विकास हुआ। जबकि दक्षिणी ब्राह्मी से दक्षिण भारत की मध्यकालीन तथा आधुनिक कालीन लिपियाँ अर्थात् तामिळ, तेळुगु, मळयाळम, ग्रंथ, कन्नडी, तुळु, नंदीनागरी, पश्चिमी तथा मध्यप्रदेशी आदि विविध लिपियों का विकास हुआ।

लगभग नवमी सदी के पूर्वार्ध में एक ओर दक्षिणी भारत में ग्रंथ लिपि से नंदीनागरी लिपि का उद्भव हुआ तो दूसरी ओर उसी समय उत्तरी भारत में कुटिल एवं शारदा लिपियों से नागरी लिपि का उदय हुआ।[1] यह लिपि अपनी विशेषताओं के कारण एक समर्थ एवं पूर्णत: वैज्ञानिक लिपि के रूप में विकसित होने लगी और देखते ही देखते समग्र उत्तर-मध्य भारत में फैल गई।

विविध भाषाओं में निबद्ध साहित्य को इस लिपि में लिपिबद्ध किया जाने लगा। संस्कृत-प्राकृत-पालि-हिंदी-मराठी-नेपाली आदि भाषाओं ने तो जैसे इस लिपि को अपने वाहक के रूप में अपना लिया। आज भी ये भाषाएँ इस लिपि पर आधारित-सी दिखाई पडती हैं; जो इसके पूर्णत: वैज्ञानिक लिपि होने का स्पष्ट एवं साक्षात प्रमाण है।

कालान्तर में यह लिपि उत्तरी भारत के प्रत्येक नगर, शहर, गाँव-गाँव में

---

1. इस लिपि का प्राचीनतम रूप कन्नौज के प्रतिहारवंशी राजा महेन्द्रपाल प्रथम (वि.सं. ९१४ ई.) के एक दानपत्र में मिलता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खूब फलने-फूलने लगी। संपूर्ण संस्कृत-प्राकृत-पालि आदि भाषाबद्ध साहित्य इस लिपि में लिखा जाने लगा। लहियाओं ने भी इस लिपि को अपनी आजीविका का प्रमुख आधार बना लिया।

उनके द्वारा शिलाखण्डों, लोहपत्रों, ताडपत्रों, हस्तनिर्मित कागज एवं कपडा आदि पर राजप्रशस्तियाँ तथा संपूर्ण साहित्य भी इसी लिपि में लिपिबद्ध किया जाने लगा; जो आज हमारे ग्रन्थागारों में पाण्डुलिपियों के रूप में संरक्षित है।

आज हिन्दुस्तान ही नहीं बल्कि देश-विदेश का शायद ही कोई ऐसा ग्रन्थागार होगा जहाँ प्राचीन नागरी लिपिबद्ध पाण्डुलिपियाँ संगृहीत न हों। इस लिपि में निबद्ध प्राप्य साहित्य की पाण्डुलिपियों की इस विपुलता के आधार पर अनुमान लगाया जा सकता है कि इसका प्रचलन कितना अधिक और सर्वग्राह्य रहा होगा।

जबसे इस लिपि का उदय हुआ तबसे ही यह निरन्तर प्रगतिपथ पर गतिशील है। कालान्तर में देश-काल-परिस्थिति अनुसार परिवर्तित होते-होते आज हमें आधुनिक देवनागरी लिपि के रूप में प्राप्त होती है, जो हिंदुस्तान की 'राष्ट्रीय लिपि' घोषित की गई है। इस लिपि के नामकरण विषयक विविध अवधारणाएँ निम्नवत् हैं-

नागरी लिपि नामकरण अवधारणा :

इस लिपि को विविध नामों से जाना जाता है; यथा- नागरी, प्राचीन नागरी, देवनागरी, प्राचीन देवनागरी आदि।

नागरी - कालान्तर में नगर-नगर में मुख्यतया इस लिपि में लिखने का चलन होने के कारण एवं नागर ब्राह्मणों द्वारा लहिया के रूप में इस लिपि में अत्यधिक ग्रन्थ-लेखनकार्य करने के कारण इसका नाम नागरी लिपि प्रकाशित हुआ।

प्राचीन नागरी - प्राचीन लिपि होने के कारण इसे प्राचीन नागरी कहा जाने लगा।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

देवनागरी - संस्कृत भाषाबद्ध साहित्य इस लिपि में विपुल मात्रा में निबद्ध होने के कारण तथा संस्कृत भाषा को देवभाषा कहे जाने के कारण इस लिपि का नाम देवनागरी प्रचलित हुआ।

प्राचीन देवनागरी - प्राचीनकाल से चलन में होने के कारण देवनागरी नाम के आगे प्राचीन शब्द जुडकर प्राचीन देवनागरी नाम ख्यात हुआ। कालान्तर में यह नाम आधुनिक देवनागरी के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

नागरी लिपि के समकालीन ही जैन देवनागरी लिपि भी है। इन दोनों लिपियों के कुछ अक्षरों में साम्य भी है। यहाँ जैन देवनागरी लिपि का परिचय भी साथ में दिया जा रहा है।

जैन देवनागरी - विक्रम संवत् नवमी शताब्दी के उत्तरार्ध में गुजरात के वल्लभीपुर में देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण के नेतृत्त्व में 'वल्लभी वाचना' हुई, जिसमें समस्त जैन आगम साहित्य को इस लिपि में निबद्ध करने का निर्णय लिया गया। अत: नागरी लिपि में प्राकृत-भाषा-सम्मत लिपिचिह्नों एवं कुछ विशिष्ट संयुक्ताक्षरों का समावेश कर इस लिपि में समस्त जैन साहित्य लिपिबद्ध किया गया। संभवत: इसी कारण इस लिपि को जैन नागरी अथवा जैन देवनागरी के नाम से संबोधित किया जाने लगा। लगभग १२वीं सदी में नवांगी टीकाकार अभयदेवसूरि को प्राचीन आदर्शों की लिपियों को पढ़ने में बडी दिक्कत हुई थी। विविध काल की प्रतों में अक्षर भिन्न-भिन्न मिलते थे। अतः उन्होंने अक्षरपाटी स्थिर की जो कि २०वीं सदी तक प्रायः समान चली। इस कक्कापाटी में निबद्ध वर्णाक्षरों को जैनदेवनागरी लिपि के नाम से जाना जाने लगा।

अस्तु! नागरी लिपि के नाम स्थापन विषयक ये सभी मत केवल अनुमान एवं तद्विषयक चिन्तन पर आधारित हैं, जो शोध का विषय है। इनमें से किसे प्रामाणिक माना जाय और किसे नहीं; यह निश्चित कर पाना गवेषकों के लिए एक पहेली बना हुआ है।

नागरी लिपि की विशेषताएँ

1. यह लिपि ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ एवं अन्य भारतीय लिपियों की तरह ही बायें से दायें लिखी जाती है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

2. इस लिपि में लिखित प्राचीन ग्रन्थसंपदा सर्वाधिक मात्रा में प्राप्त होती है। अत: इसे भारतीय श्रुतसंपदा को अद्यावधिपर्यन्त जीवित रखने का गौरव प्राप्त है।

3. इस लिपि में किसी भी भाषा को शतप्रतिशत शुद्ध लिखा जा सकता है।

4. यह लेखन एवं वाचन दोनों ही दृष्टियों से सरल एवं सुगम लिपि है।

5. राष्ट्र का प्राचीनतम वैभवशाली वाङ्मय इसी लिपि में सर्वाधिक लिखा हुआ मिलता है।

6. कागज व ताडपत्र पर कलम एवं स्याही द्वारा लिखने के लिए यह लिपि सर्वाधिक श्रेष्ठ, उपयोगी, सरल और सटीक लिपि मानी गई है।

7. इसमें खडी-पाई तथा पडी-पाई के साथ शिरोरेखा का विशेषरूप से चलन है, जबकि ब्राह्मी लिपि में शिरोरेखा का चलन नहीं है। गुजराती लिपि भी शिरोरेखा के बिना ही लिखी जाती है।

8. इस लिपि में समस्त उच्चारित ध्वनियों के लिए स्वतन्त्र एवं असंदिग्ध लिपि-चिह्न विद्यमान हैं। अत: इसे पूर्णत: वैज्ञानिक लिपि कहा जा सकता है।

9. यह लिपि अपने समय की श्रेष्ठ लिपि होने के कारण तत्कालीन ग्रन्थकारों एवं लहियाओं ने इसे लेखन हेतु सर्वाधिक आश्रय प्रदान किया।

10. इस लिपि में अनुस्वार, अनुनासिक एवं विसर्ग हेतु स्वतन्त्र चिह्न प्रयुक्त हुए हैं, जो आधुनिक लिपियों में भी यथावत् स्वीकृत हैं।

11. इसकी वर्णमाला में स्वर एवं व्यंजनों का वर्गीकरण ध्वनि-वैज्ञानिक पद्धति से व्याकरण-सम्मत उच्चारण-स्थान एवं प्रयत्नों के आधार पर किया गया है।

12. इस लिपि का प्रत्येक वर्ण स्वतन्त्ररूप से एक ही ध्वनि का उच्चारण प्रकट करता है, जो सुगम और पूर्णरूप से वैज्ञानिक है।

13. इस लिपि के अक्षरों का आकार एक समान होता है व अक्षरों को सौन्दर्यात्मक प्रविधि से लिखने का विधान है।

14. इस लिपि के अक्षर लेखन की दृष्टि से सरल व नेत्राकर्षक हैं, जिन्हें हस्तनिर्मित कागजों पर स्याही एवं कलम द्वारा गतिपूर्वक लिखा जा सकता है।

15. इस लिपि के समस्त अक्षर क्रमश: समानान्तर और शिरोरेखा लगाकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिखे जाते हैं।

16. इस लिपि में अनुस्वार को अक्षर के ऊपर लगाया जाता है, जबकि ब्राह्मी तथा ग्रंथ लिपियों में अनुस्वार उस वर्ण के पीछे समानान्तर लगाने का विधान मिलता है।

17. इस लिपि में 'ए' की मात्रा अक्षर के आगे शिरोरेखा से एक 'खडीपाई' (अग्रमात्रा) जो नीचे से उस वर्ण की ओर मुडी हो, जोडकर लगाई जाती है व 'ओ' की मात्रा उस अक्षर के आगे एक 'ए' की मात्रा तथा पीछे 'अ' की मात्रा लगाकर लिखी जाती है। जबकि 'उ, ऊ' की मात्राएँ अक्षर के पीछे मध्यभाग में पृष्ठमात्रा लगाकर अथवा उस अक्षर के नीचे लिखकर लगाने का विधान मिलता है।

18. ऋकार की मात्रा अक्षर के नीचे की ओर लगाने का विधान है, जो आधुनिक नागरी में भी ज्यों का त्यों देखने को मिलता है।

19. इस लिपि में रेफसूचक चिह्न उस अक्षर के ऊपर बायें से दायीं ओर 'ई' की मात्रा की तरह लगता है जो आधुनिक नागरी में आज भी प्रचलित है।

20. इस लिपि में संयुक्ताक्षर लेखन हेतु अक्षरों को ऊपर-नीचे लिखने का विधान मिलता है। अर्थात् संयुक्ताक्षर लिखते समय जिस अक्षर को आधा करना हो उसे ऊपर तथा दूसरे अक्षर को उसके नीचे लिखा जाता है। ब्राह्मी एवं ग्रंथ लिपियों में भी यही परम्परा मिलती है।

    कालान्तर में इस प्रक्रिया में परिवर्तन हुआ जिसके परिणामस्वरूप कुछ संयुक्ताक्षर एक शिरोरेखा के नीचे प्रथम अक्षर आधा तथा द्वितीय अक्षर पूरा क्रमशः आगे-पीछे लिखे जाने लगे, जो आधुनिक देवनागरी लिपि में आज भी प्रचलित है।

21. इस लिपि का ज्ञान प्राचीन पाण्डुलिपियों को सरलतापूर्वक पढने, लिप्यन्तर करने, प्रतिलिपि करने एवं ऐतिहासिक तथ्यों को जानने में अतीव सहायक सिद्ध होता है।

22. इस लिपि में निबद्ध श्रुतसंपदा विपुल मात्रा में प्राप्त होती है, जो गवेषकों की

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिज्ञासा पूर्ण करने, ऐतिहासिक तथ्यों को जानने तथा ग्रन्थों के समीक्षात्मक संपादन हेतु प्रमुख स्रोतस्वरूप है।

23. यह लिपि जहाँ संस्कृत-प्राकृत-पालि जैसी प्राचीन भाषाओं की सफल लिपि रही है, वहीं यह हिन्दी, मराठी, नेपाली आदि कतिपय आधुनिक देशी एवं विदेशी भाषाओं की भी सफल वाहिका है।

24. इस लिपि में उपरोक्त विविध भाषाबद्ध साहित्य को शतप्रतिशत शुद्ध लिखने की क्षमता विद्यमान है। एक प्रकार से देखें तो ये समस्त भाषाएँ इस लिपि पर आधारित-सी दिखाई देती हैं।

25. इस लिपि में जैसा लिखा जाता है; वह वैसा ही संशय रहित, निश्चयपूर्वक पढा जाता है। अत: इसकी वर्णमाला पूर्णत: वैज्ञानिक एवं श्रेष्ठ है।

26. इसमें प्रत्येक ध्वनि के लिए अलग-अलग ऐसे स्वतन्त्र वर्ण हैं, जिनमें परस्पर भ्रम की कोई संभावना नहीं रहती।

27. उत्तरी भारत की आधुनिक लिपि, दक्षिणी भारत की द्राविड लिपि तथा भारत के पार्श्ववर्ती देशों की लिपियों का नागरी से बहुत कुछ सादृश्य है। इन सब में वर्णमाला, स्वर-व्यंजन भेद, स्वर-क्रम, व्यंजनों का वर्गीकरण, मात्रा-नियम आदि सब लगभग समान ही हैं, किसी में दो-एक ध्वनियाँ कम हैं तो किसी में अधिक।

28. किसी भी भाषा में उच्चारित प्रत्येक शब्द को इस लिपि के स्वतन्त्र वर्ण द्वारा लिपिबद्ध किया जा सकता है।

29. उपयोगिता की दृष्टि से यह लिपि अव्याप्ति अथवा अतिव्याप्ति दोष से रहित है। विदित हो कि किसी भी लिपि की उपयोगिता देखने के लिए यह जानना आवश्यक होता है कि उसमें अव्याप्ति अथवा अतिव्याप्ति दोष तो नहीं है। अर्थात् उसमें आवश्यक ध्वनियों के द्योतक लिपि-चिह्नों का अभाव या एक ही ध्वनि के द्योतक कई अनावश्यक चिह्नों की उपस्थिति तो नहीं है।

अत: अनेक ध्वनियों के लिए एक ही लिपि-चिह्न अथवा एक ध्वनि के लिए

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनेक लिपि-चिह्न नहीं होने चाहियें। यह लिपि इन दोषों से लगभग मुक्त है।

30. यह लिपि ध्वन्यात्मक तथा वर्णात्मक प्रतिलिपिकरण (प्रतिलेखन) एवं लिप्यन्तरण के पर्याप्त अनुकूल लिपि है।

31. इसमें स्वरों की मात्राओं का वैज्ञानिक विधान एक ऐसी अनोखी विशेषता है, जो इसे संसार की समस्त लिपियों से अधिक विकसित दशा की लिपि सिद्ध करती है।

32. लिपि-विज्ञान के आचार्यों ने इस बात को मुक्त कण्ठ से घोषित किया है कि नागरी में आदर्श वैज्ञानिक लिपि के प्राय: सभी गुण विद्यमान हैं।

33. इसकी वर्णमाला और वर्तनी को सीख लेने पर शब्दों को रटने की आवश्यकता नहीं रहती, केवल अक्षरों का शुद्ध उच्चारण जानने मात्र से उन्हें शुद्ध-शुद्ध पढा जा सकता है।

34. इसमें प्रत्येक स्वर वर्ण के लिए अलग से स्वतन्त्र मात्रा-चिह्न निश्चित हैं, जिनके प्रयोग द्वारा स्वरयुक्त व्यंजनों अर्थात् अक्षरों को उच्चारण के अनुरूप ही स्वतन्त्र रूप में लिपिबद्ध किया जा सकता है। इसी गुण के कारण इस लिपि द्वारा कम स्थान में अधिक शब्द लिखे जा सकते हैं।

35. इस लिपि पर किसी भाषाविशेष का एकाधिकार नहीं है। यह संस्कृत, प्राकृत, पालि, अपभ्रंश, हिंदी, महाराष्ट्री (मराठी), नेपाली आदि अनेक भाषाओं की लिपि है और अन्य किसी भी भाषा की लिपि हो सकती है।

36. इसमें विभिन्न स्थानीय अनुनासिक ध्वनियों के लिए तो अलग-अलग स्वतन्त्र वर्ण (ङ्, ञ्, ण्, न्, म्) हैं ही, साथ ही अनुस्वार और चन्द्रबिन्दु जैसे अयोगवाहों की उपस्थिति इसकी ध्वनि-वैज्ञानिक पूर्णता को पराकाष्ठा तक पहुँचा देती है।

37. इसमें संयुक्त वर्ण-रचना की विलक्षण क्षमता है, जो इसके वैज्ञानिक सन्तुलन एवं पूर्णता का ज्वलन्त प्रमाण है।

38. इसमें रोमन लिपि की तरह छोटे-बडे (केपिटल-स्मॉल) वर्णों को अलग-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अलग रूप में लिखने की उलझन नहीं रहती है। इस कारण लेखन, मुद्रण एवं टंकण आदि में इसके वर्ण (आदि-मध्य-अन्त) एक समान रहते हैं।

38. इस लिपि का उदय लगभग आठवीं नवमी शताब्दी में हुआ और कालान्तर में देश-काल-परिस्थिति अनुसार परिवर्तित होते-होते आज हमें आधुनिक देवनागरी लिपि के रूप में प्राप्त होती है; जिसे व्यापक प्रचार एवं विशिष्ट वैज्ञानिक विशेषताओं के कारण वर्तमान युग में हिंदुस्तान की राष्ट्रीय लिपि होने का गौरव प्राप्त है।

39. संसार की समस्त लिपियों में से अन्तरराष्ट्रीय लिपि बनने की सबसे अधिक योग्यता यदि किसी लिपि में है, तो वह लिपि नागरी ही है।

नागरी लिपि की वर्णमाला :

शिलाखण्ड, ताम्रपत्र, लोहपत्र, ताडपत्र, वस्त्र एवं हस्तनिर्मित कागजीय पाण्डुलिपियों आदि पर निबद्ध इस लिपि में प्रयुक्त स्वर एवं व्यंजन वर्णों की संरचना निम्नवत् है-

स्वर वर्ण लेखन प्रक्रिया

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ
ऌ	ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्यंजन वर्ण लेखन प्रक्रिया

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संयुक्ताक्षर लेखन प्रक्रिया :

इस लिपि में संयुक्ताक्षर लेखन हेतु ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ आदि प्राचीन लिपियों की तरह ही ऊपर से नीचे की ओर लिखने का विधान मिलता है। अर्थात् जिस अक्षर को आधा लिखना हो उसे ऊपर लिखकर दूसरे अक्षर को उसके नीचे या किंचित् समानान्तर लिख दिया जाता था।

कालान्तर में इस प्रक्रिया में किंचित् परिवर्तन हुआ और संयुक्ताक्षर हेतु पहले अक्षर को आधा तथा दूसरे अक्षर को पूरा समानान्तर लिखकर एक ही शिरोरेखा के नीचे लिखा जाने लगा। कुछ संयुक्ताक्षरों के लिए स्वतन्त्र वर्ण भी प्रयुक्त होने लगे। ऐसे संयुक्ताक्षरों को निम्नवत् लिखने का विधान है-

क् + ष = क्ष	त् + र = त्र	ज् + ञ = ज्ञ
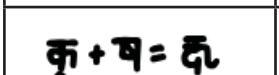	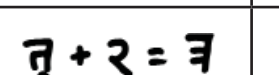	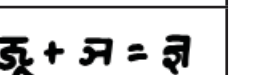

हलन्त-चिह्न लेखन प्रक्रिया

इस लिपि में हलन्त के लिए (◌्) चिह्न प्रयुक्त हुआ है; जो किसी भी वर्ण की खडीपाई के नीचे की ओर किंचित् रिक्त स्थान छोडकर लगाने का विधान मिलता है। यह चिह्न पाण्डुलिपि पढते समय अथवा लिप्यन्तर करते समय दीर्घ 'ऊ'कार की माला का भ्रम भी उत्पन्न करता है। उदाहरण स्वरूप यहाँ कुछ वर्णों में हलन्त चिह्न लगाकर इस प्रक्रिया को निम्नवत् समझा जा सकता है-

क्	त्	न्	म्
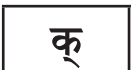			

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विदित हो कि 'क्, त्, द्, श्, ह्' आदि वर्णों में जब हलन्त के साथ 'र' लगाकर 'क्र, त्र, द्र, श्र, ह्र' लिखा जाता है तो इनके आकार में किंचित् परिवर्तन हो जाता है और निम्नवत् स्वरूप ग्रहण करते हैं-

क्र =	
त्र =	
द्र =	
श्र =	
ह्र =	

अवग्रह-चिह्न लेखन प्रक्रिया

इस लिपि में अवग्रह के लिए (ε) चिह्न प्रयुक्त हुआ है; जो आधुनिक नागरी में किंचित् परिवर्तित होकर (ऽ) रूप में प्रचलित है। यथा-

विदित हो कि यह अवग्रहचिह्न जब 'भ' वर्ण के साथ जुडकर एक ही शिरोरेखा के नीचे प्रयुक्त होता है तो संयुक्ताक्षर 'ष्ण' पढा जाता है, और जब 'त्र' के साथ प्रयुक्त होता है तो 'ल्ल' पढा जाता है। यथा-

ष्ण =	(कृष्ण =)
ल्ल =	(उल्लास =)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मात्रा लेखन प्रक्रिया

इस लिपि में मात्रा लेखन हेतु विशेषत: निम्नोक्त चिह्नों का प्रयोग हुआ है-

आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ

ए	ऐ	ओ	औ	अनुस्वार	विसर्ग

इनमें से आ, इ, ई, ऋ की मात्राएँ तो आधुनिक देवनागरी में भी लगभग ज्यों-की-त्यों प्रयुक्त हुई हैं; लेकिन उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ की मात्राओं में विविधता दिखाई पडती है। यथा-

क	का	कि	की	कु	कू	कृ
कृ	के	कै	को	कौ	कं	कः

विदित हो कि ह्रस्व 'उ'कार एवं दीर्घ 'ऊ'कार की मात्राओं का प्रयोग दो प्रकार से चलन में रहा है।[1] इनमें से एक प्रकार तो आधुनिक नागरीवत् किंचित्

1. ब्राह्मी, शारदा एवं ग्रंथ लिपियों में भी ह्रस्व 'उ'कार एवं दीर्घ 'ऊ'कार की मात्राओं के अनेकविध प्रयोग देखने को मिलते हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परिवर्तित रूप में अक्षर के नीचे मात्रा लगाकर लिखने का मिलता है, तथा दूसरा प्रकार पृष्ठ-मात्रा (पडी मात्रा) लगाकर लिखने का मिलता है। 'क्, त्, ज्, द्' आदि कुछ अक्षरों में जब ये मात्राएँ लगती हैं तो उनका स्वरूप भी किंचित् परिवर्तित हो जाता है। यथा-

कु = कु, कु, कु, क्कु, क्कु	जु = जु, जु, जु, ज्जु, ज्जु
कू = कू, कू, कू, क्कू, क्कू	जू = जू, जू, जू, ज्जू, ज्जू
तु = तु, तु, तु, त्तु, त्तु	दु = दु, दु, दु, द्दु
तू = तू, तू, तू, त्तू, त्तू	दू = दू, दू द्दू

रेफसूचक चिह्न

इस लिपि में रेफ के लिए (८) चिह्न प्रयुक्त हुआ है। यह चिह्न उस अक्षर के ऊपर बायें से दायीं ओर 'ई' की मात्रा की तरह लगाया जाता है, जो आधुनिक नागरी में भी समानरूप से प्रचलित है। पाण्डुलिपि पढते समय एवं लिप्यन्तर करते समय यह चिह्न दीर्घ 'ई'कार की मात्रा का भ्रम भी उत्पन्न करता है। विदित हो कि हस्तप्रतों में रेफयुक्त वर्ण को द्वित्व लिखने की परंपरा मिलती है। यथा-

धर्म =	ध८र्म्म
चर्चा =	च८र्च्चा
वर्णन =	व८र्ण्ण न
दुर्लभ =	द८र्ल्ल भ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जैन देवनागरी-लिपिबद्ध कक्कापाटी काष्ठपट्टिका[1]

पश्चिमी राजस्थान एवं गुजरात के तत्कालीन शिक्षणकेन्द्रों में प्राचीन नागरी एवं जैन देवनागरी लिपि की वर्णमाला सीखने एवं पाण्डुलिपि लिप्यन्तर कार्य हेतु इन काष्ठपाटियों का उपयोग होता था, इन्हें 'कक्कापाटी' या 'स्वर-व्यंजनपट्टिका' भी कहते हैं।

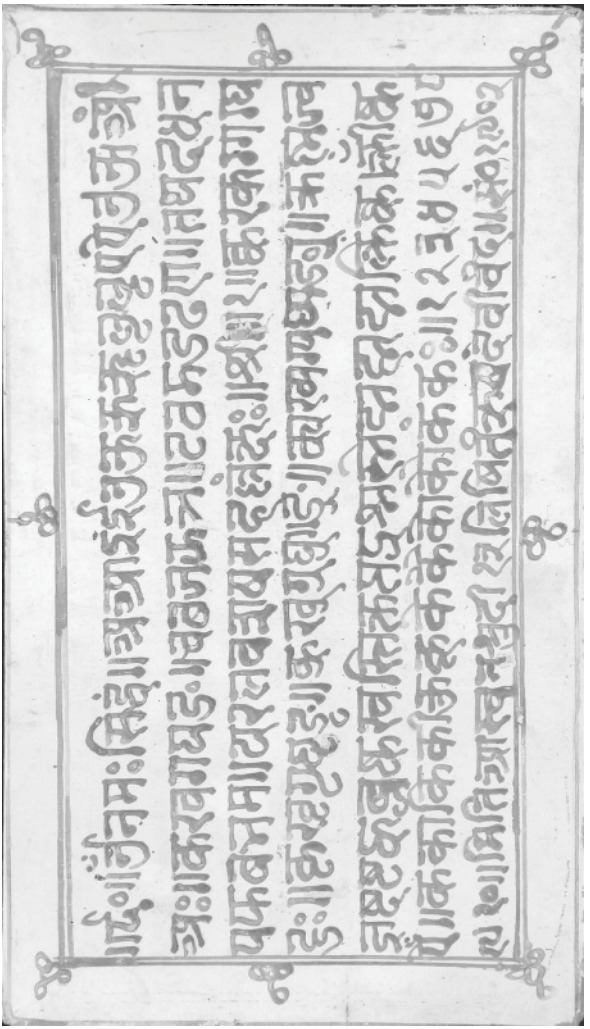

1. श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा के **सम्राट् संप्रति संग्रहालय** में प्रदर्शित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नागरी लिपि की बाराक्षरी

क	का	कि	की	कु	कू	कृ	कॄ	के	कै	को	कौ	कं	कः
क	का	कि	की	कु	कू	कृ	कॄ	के	कै	को	कौ	कं	कः
ख	खा	खि	खी	खु	खू	खृ	खॄ	खे	खै	खो	खौ	खं	खः
ख	खा	खि	खी	खु	खू	खृ	खॄ	खे	खै	खो	खौ	खं	खः
ग	गा	गि	गी	गु	गू	गृ	गॄ	गे	गै	गो	गौ	गं	गः
ग	गा	गि	गी	गु	गू	गृ	गॄ	गे	गै	गो	गौ	गं	गः
घ	घा	घि	घी	घु	घू	घृ	घॄ	घे	घै	घो	घौ	घं	घः
घ	घा	घि	घी	घु	घू	घृ	घॄ	घे	घै	घो	घौ	घं	घः
ङ	ङा	ङि	ङी	ङु	ङू	ङृ	ङॄ	ङे	ङै	ङो	ङौ	ङं	ङः
ङ	ङा	ङि	ङी	ङु	ङू	ङृ	ङॄ	ङे	ङै	ङो	ङौ	ङं	ङः
च	चा	चि	ची	चु	चू	चृ	चॄ	चे	चै	चो	चौ	चं	चः
च	चा	चि	ची	चु	चू	चृ	चॄ	चे	चै	चो	चौ	चं	चः
छ	छा	छि	छी	छु	छू	छृ	छॄ	छे	छै	छो	छौ	छं	छः
ब	बा	बि	बी	बु	बू	बृ	बॄ	बे	बै	बो	बौ	बं	बः
ज	जा	जि	जी	जु	जू	जृ	जॄ	जे	जै	जो	जौ	जं	जः
ङ	ङा	ङि	ङी	ङु	ङू	ङृ	ङॄ	ङे	ङै	ङो	ङौ	ङं	ङः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

झ	झा	झि	झी	झु	झू	झृ	झॄ	झे	झै	झो	झौ	झं	झः
ञ	ञा	ञि	ञी	ञु	ञू	ञृ	ञॄ	ञे	ञै	ञो	ञौ	ञं	ञः
ट	टा	टि	टी	टु	टू	टृ	टॄ	टे	टै	टो	टौ	टं	टः
ठ	ठा	ठि	ठी	ठु	ठू	ठृ	ठॄ	ठे	ठै	ठो	ठौ	ठं	ठः
ड	डा	डि	डी	डु	डू	डृ	डॄ	डे	डै	डो	डौ	डं	डः
ढ	ढा	ढि	ढी	ढु	ढू	ढृ	ढॄ	ढे	ढै	ढो	ढौ	ढं	ढः
ण	णा	णि	णी	णु	णू	णृ	णॄ	णे	णै	णो	णौ	णं	णः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त	ता	ति	ती	तु	तू	तृ	तॄ	ते	तै	तो	तौ	तं	तः
त	ता	ति	ती	तु	तू	तृ	तॄ	ते	तै	तो	तौ	तं	तः
थ	था	थि	थी	थु	थू	थृ	थॄ	थे	थै	थो	थौ	थं	थः
घ	घा	घि	घी	घु	घू	घृ	घॄ	घे	घै	घो	घौ	घं	घः
द	दा	दि	दी	दु	दू	द	दृ	दे	दै	दो	दौ	दं	दः
द	दा	दि	दी	दु	दू	दृ	दॄ	दे	दै	दो	दौ	दं	दः
ध	धा	धि	धी	धु	धू	धृ	धॄ	धे	धै	धो	धौ	धं	धः
ध	धा	धि	धी	धु	धू	धृ	धॄ	धे	धै	धो	धौ	धं	धः
न	ना	नि	नी	नु	नू	नृ	नॄ	ने	नै	नो	नौ	नं	नः
न	ना	नि	नी	नु	नू	नृ	नॄ	ने	नै	नो	नौ	नं	नः
प	पा	पि	पी	पु	पू	पृ	पॄ	पे	पै	पो	पौ	पं	पः
प	पा	पि	पी	पु	पू	पृ	पॄ	पे	पै	पो	पौ	पं	पः
फ	फा	फि	फी	फु	फू	फृ	फॄ	फे	फै	फो	फौ	फं	फः
फ	फा	फि	फी	फु	फू	फृ	फॄ	फे	फै	फो	फौ	फं	फः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब	बा	बि	बी	बु	बू	बृ	बॄ	बे	बै	बो	बौ	बं	बः
भ	भा	भि	भी	भु	भू	भृ	भॄ	भे	भै	भो	भौ	भं	भः
ञ	ञा	ञि	ञी	ञु	ञू	ञृ	ञॄ	ञे	ञै	ञो	ञौ	ञं	ञः
म	मा	मि	मी	मु	मू	मृ	मॄ	मे	मै	मो	मौ	मं	मः
य	या	यि	यी	यु	यू	यृ	यॄ	ये	यै	यो	यौ	यं	यः
र	रा	रि	री	रु	रू	रृ	रॄ	रे	रै	रो	रौ	रं	रः
ल	ला	लि	ली	लु	लू	लृ	लॄ	ले	लै	लो	लौ	लं	लः
व	वा	वि	वी	वु	वू	वृ	वॄ	वे	वै	वो	वौ	वं	वः

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श	शा	शि	शी	शु	शू	शृ	शॄ	शे	शै	शो	शौ	शं	शः
ष	षा	षि	षी	षु	षू	षृ	षॄ	षे	षै	षो	षौ	षं	षः
स	सा	सि	सी	सु	सू	सृ	सॄ	से	सै	सो	सौ	सं	सः
ह	हा	हि	ही	हु	हू	हृ	हॄ	हे	है	हो	हौ	हं	हः
क्ष	क्षा	क्षि	क्षी	क्षु	क्षू	क्षृ	क्षॄ	क्षे	क्षै	क्षो	क्षौ	क्षं	क्षः
त्र	त्रा	त्रि	त्री	त्रु	त्रू	त्रृ	त्रॄ	त्रे	त्रै	त्रो	त्रौ	त्रं	त्रः
ज्ञ	ज्ञा	ज्ञि	ज्ञी	ज्ञु	ज्ञू	ज्ञृ	ज्ञॄ	ज्ञे	ज्ञै	ज्ञो	ज्ञौ	ज्ञं	ज्ञः

For Private and Personal Use Only

नागरी लिपि में अंक लेखन

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०	१००

नागरी लिपि में संयुक्ताक्षरों की स्थिति :

प्राचीन नागरी लिपिबद्ध पाण्डुलिपियों में मिलनेवाले संयुक्ताक्षरों का ज्ञान संपादनकार्य में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। विदित हो कि इस लिपि में कुछ अक्षर ऐसे हैं जो दूसरे वर्णों के साथ जुडनेपर पूर्णत: परिवर्तित हो जाते हैं और अन्य वर्णों का भ्रम भी उत्पन्न करते हैं। उस परिवर्तित स्वरूप का ज्ञान यदि न हो तो अनेकविध अशुद्धियाँ होने की संभावना बढ जाती है। यथा-

ज्ज =   ('ज्झ' का भ्रम उत्पन्न करता है)

क्ख =   ('रक, रवु या खु' का भ्रम उत्पन्न करता है)

ओ =   ('उ' वर्ण को डिलीट करने अथवा 'न' वर्ण का भ्रम उत्पन्न करता है)

ऋ =   ('क्ष' या 'कृ' वर्ण का भ्रम उत्पन्न करता है)

गे =   (अग्रमात्रा के कारण 'ण' अथवा 'ए' वर्ण का भ्रम उत्पन्न करता है)

ए =   ('ग' अथवा 'ण' वर्णों का भ्रम उत्पन्न करता है)

ण =   ('ऐ' अथवा 'ग' वर्णों का भ्रम उत्पन्न करता है)

य =   ('व्व' का भ्रम उत्पन्न करता है)

श =   ('त्न' अथवा 'ऋ' का भ्रम उत्पन्न करता है)

च्छ =   ('त्य' का भ्रम उत्पन्न करता है)

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन संयुक्त अक्षरों में विशेषकर 'ज्ज' जो कि 'ज्झ' का भ्रम करता है। 'क्ख' जो कि 'रक', 'रवु' या 'खु' का भ्रम करता है। 'ओ' जो कि 'उ' वर्ण को रद्द (डीलिट) करने अथवा 'न' वर्ण का भ्रम करता है। 'ऋ' वर्ण 'क्ष' या 'कृ' का भ्रम करता है। यदि 'ग' वर्ण में 'ए' की अग्रमात्रा लगाकर 'गे' लिखा हो तो अग्रमात्रा के कारण 'ण' या 'ऐ' वर्णों का भ्रम करता है। 'थ' वर्ण 'व्व' एवं 'घ' का भ्रम करता है। 'श' वर्ण 'ल' या 'ऋ' का भ्रम करता है। 'च्छ' वर्ण 'त्थ' का भ्रम उत्पन्न करता है।

विदित हो कि 'छ' वर्ण के साथ जब 'च्' वर्ण जुडता है तो उसे 'च्छ' पढा जाता है, लेकिन जब उसी 'छ' वर्ण के साथ 'त्' वर्ण जुडता है तो 'छ' वर्ण 'थ' में परिवर्तित हो जाता है और संयुक्ताक्षर 'त्थ' पढा जाता है। यदि उसी 'छ' वर्ण के साथ 'स्' वर्ण जुडता है तो उसे 'स्थ' पढा जाता है, और यदि 'छ' वर्ण दो पूर्णविरामों के मध्य ॥ ब ॥ इस प्रकार लिखा हो तो उसे गाथा, श्लोक, अध्याय अथवा ग्रंथ-पूरक या विषय समाप्ति सूचक चिह्न के रूप में पढा जाता है। ऐसा ही एक वर्ण ॥ळ॥ है जो ग्रंथ समाप्ति अथवा अध्याय या पाठ की समाप्ति का द्योतक है। यह अंतिम मंगल सूचक चिह्न के रूप में भी प्रयुक्त होता है। इसके अलावा अंतिम मंगल हेतु पूर्णकुंभ अथवा सूर्य या चंद्र की प्रतिकृति आदि चिह्न भी प्रयुक्त हुए है।

च्छ = ब	त्थ = ब	स्थ = स्ब
॥ ब ॥ (पूरक या समाप्ति सूचक चिह्न)		

इसी प्रकार जब 'प' वर्ण के साथ 'भ्' वर्ण जुडा हो तो उसे 'ब्भ' पढा जाता है। तथा मूर्धन्य 'ष' के साथ जब 'भ' वर्ण जुडा हो तो 'ज्झ' पढा जाता है। यथा-

प् + भ = ब्भ	प्+ न = प्न
ष् + भ = ज्झ	ष्+ न = ष्न

For Private and Personal Use Only

ऐसे और भी कई वर्ण हैं जो संयुक्त होने पर अपना स्वरूप बदल लेते हैं और वाचक को भ्रमित करते हैं। अत: ऐसे संयुक्ताक्षरों की एक तालिका यहाँ संलग्न की जा रही है :

क्क	क्ख	त्य	क्य	त्व	ख्य	म्य	क्त

द्व	द्ध	न्द्व	ज्ज	ज्झ	ञ्च	न्त	ल्ल

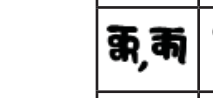

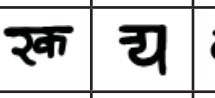

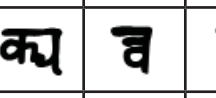

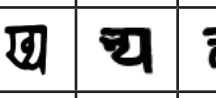

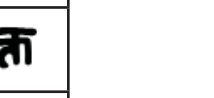

ज्ज्व	ध्व	श्ल	श्न	ष्ट	ष्ठ	ह्व	ह्न

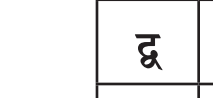

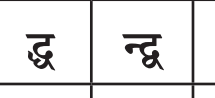

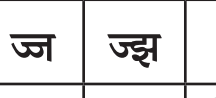

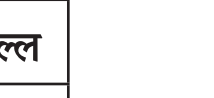

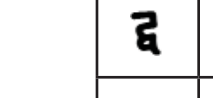

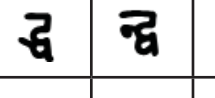

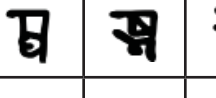

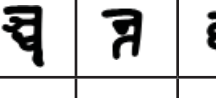

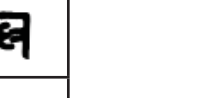

च्छ्व	ष्ण	स्थ	त्स	त्थ	च्छ	द	त्स्य

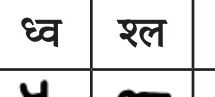

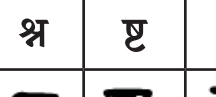

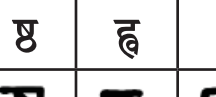

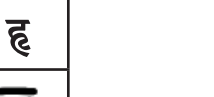

श्च	श्व	च्च	ण्य	ट्ठ	ण्ण	त्त	प्त

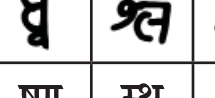

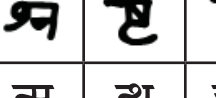

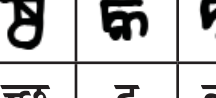

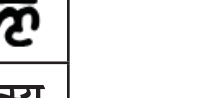

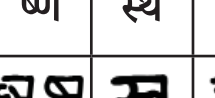

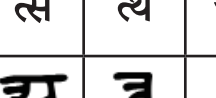

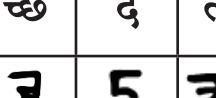

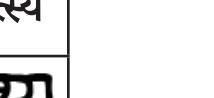

धा	ब्ब	व्व	त्क	त्ख	त्न	स्त	ग्ग

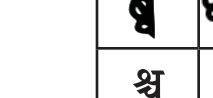

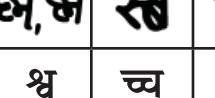

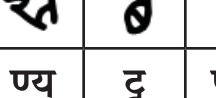

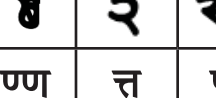

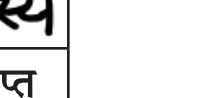

ब्भ	र्य	ट्य	ग्य	क्ल	ॐ	ह्रीँ	ऐँ

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नागरी लिपि में नमस्कार महामन्त्र लेखन अभ्यास

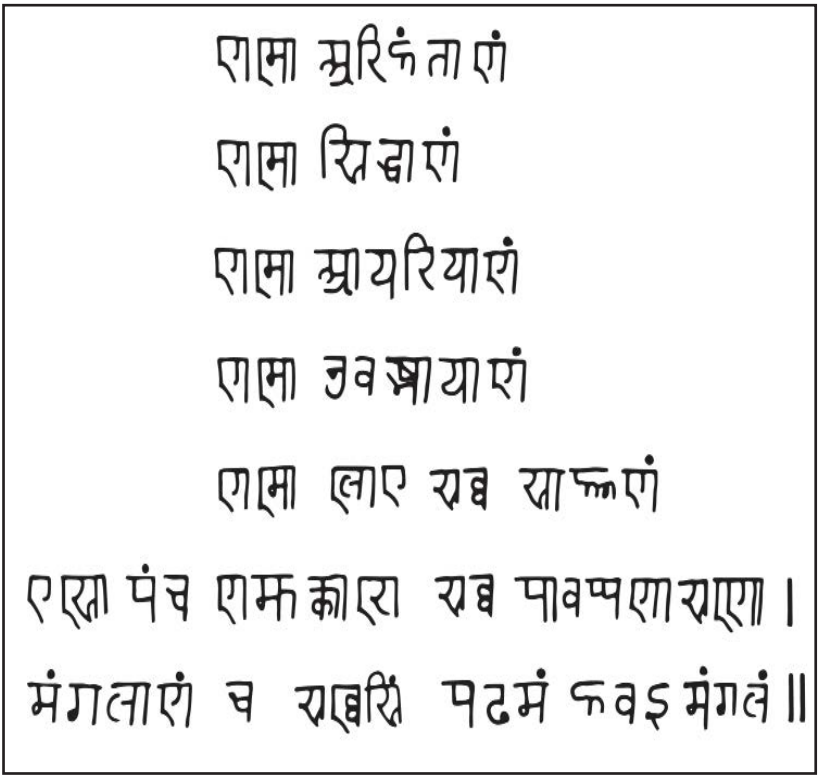

नागरी लिपि में संयुक्ताक्षरयुक्त शब्द लेखन अभ्यास :

प्राचीन नागरी-लिपिबद्ध पाण्डुलिपियों में शब्दों अथवा वाक्यों के मध्य रिक्तस्थान नहीं छोडा जाता था। अर्थात् इस लिपि में लिखते समय सभी अक्षर समानान्तर स्वतन्त्र शिरोरेखा के साथ क्रमश: लिखने का विधान रहा है।

इस कारण हस्तप्रत पढते समय अथवा लिप्यन्तर करते समय वाक्यविन्यास की दृष्टि से अशुद्धि अथवा भ्रम उत्पन्न होने की संभावना रहती है।

अत: हस्तप्रत संपादन कार्य करने हेतु भाषाव्याकरण का ज्ञान होना भी अति आवश्यक है। अभ्यास हेतु संयुक्ताक्षरयुक्त कुछ शब्दों की एक सूचि यहाँ दी जा रही है -

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तीर्थंकर		भविष्य	
अरिहन्त	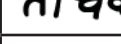	क्षत्रप	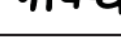
सिद्ध		उज्ज्वल	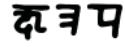
आचार्य	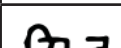	उवज्झाय	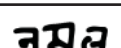
ब्राह्मी		चिक्कण	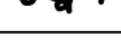
सुन्दरी	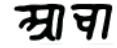	संस्थान	
स्वच्छ		वक्तृत्वम्	
मुग्ध	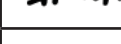	स्तवनम्	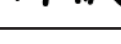
चर्चा	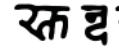	शक्तिः	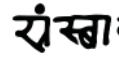
अर्चना		पाण्डुलिपि	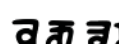
प्रार्थना	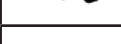	हस्तप्रत	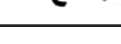
अर्जुन		सल्लकी	
लज्जा		गुञ्जारव	
निरञ्जन	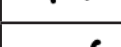	रूपम्	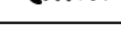
इच्छा		स्थान	

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूजा		धारणा	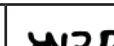
कृष्ण	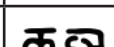	उत्थान	
वित्त	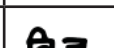	शुद्धिः	
सत्य		द्वयम्	
पद्म	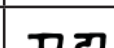	भक्त	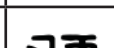
श्लोक		द्वन्द्व	
ज्वलन्त	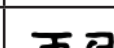	चञ्चलाक्षी	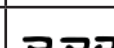
प्रतिध्वनि		बुद्धि	
धीरेन्द्र	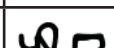	विद्वान	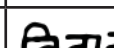
चैत्य	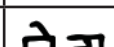	धेनु	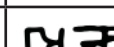
घृत	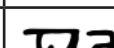	पन्था	
कैवल्यम्	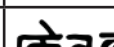	धावति	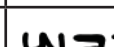
ज्ञानबन्दु	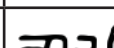	उत्तर	
वैद्य	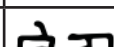	ध्वनि	
मम्मटाचार्य		पल्लवित	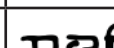

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अर्चट	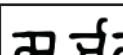	पक्ख	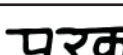
आह्लाद	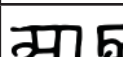	द्वन्द्वम्	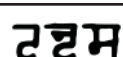
औषधालय	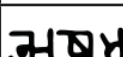	यज्ञः	
सरस्वती	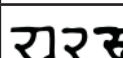	विष्णुः	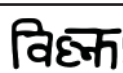
पङ्कज	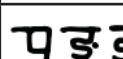	कल्याणम्	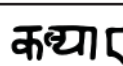
क्वचित	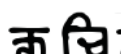	अञ्जनशलाका	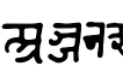
गोविन्द	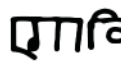	कौशलेन्द्र	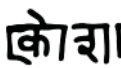
धूपम्	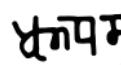	पल्लव	
स्थान	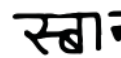	बल्लभेन्द्र	
औत्सुक्य	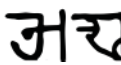	ओदनम्	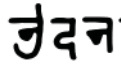
उत्कृष्ट	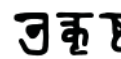	कन्नौज	
प्रशिष्य	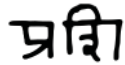	पूज्य	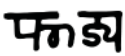
नृपेन्द्र	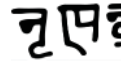	पुण्यम्	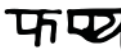
व्याख्या		पच्चक्खाण	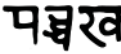

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जैन देवनागरी-लिपिबद्ध पाण्डुलिपि[1]

1. श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा के **सम्राट् संप्रति संग्रहालय** में प्रदर्शित।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नागरी-लिपिबद्ध पाण्डुलिपि[1]

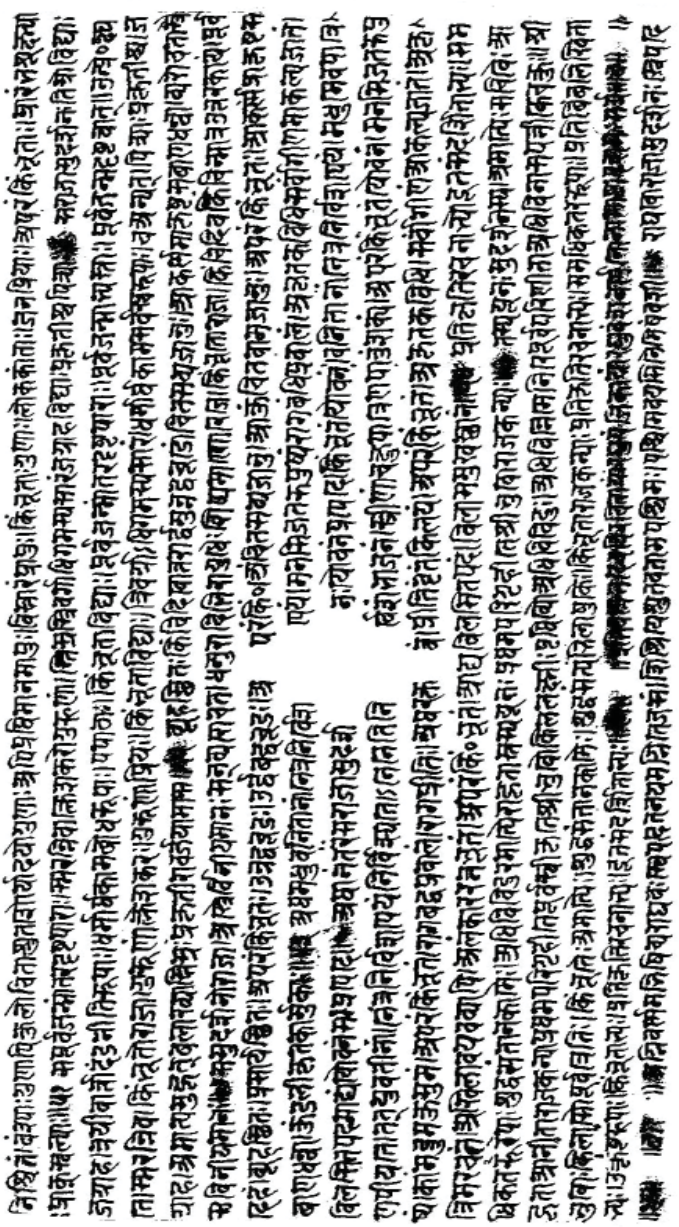

1. श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा के **सम्राट् संप्रति संग्रहालय** में प्रदर्शित।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नागरी-लिपिबद्ध शिलालेख (वि.सं.1330)

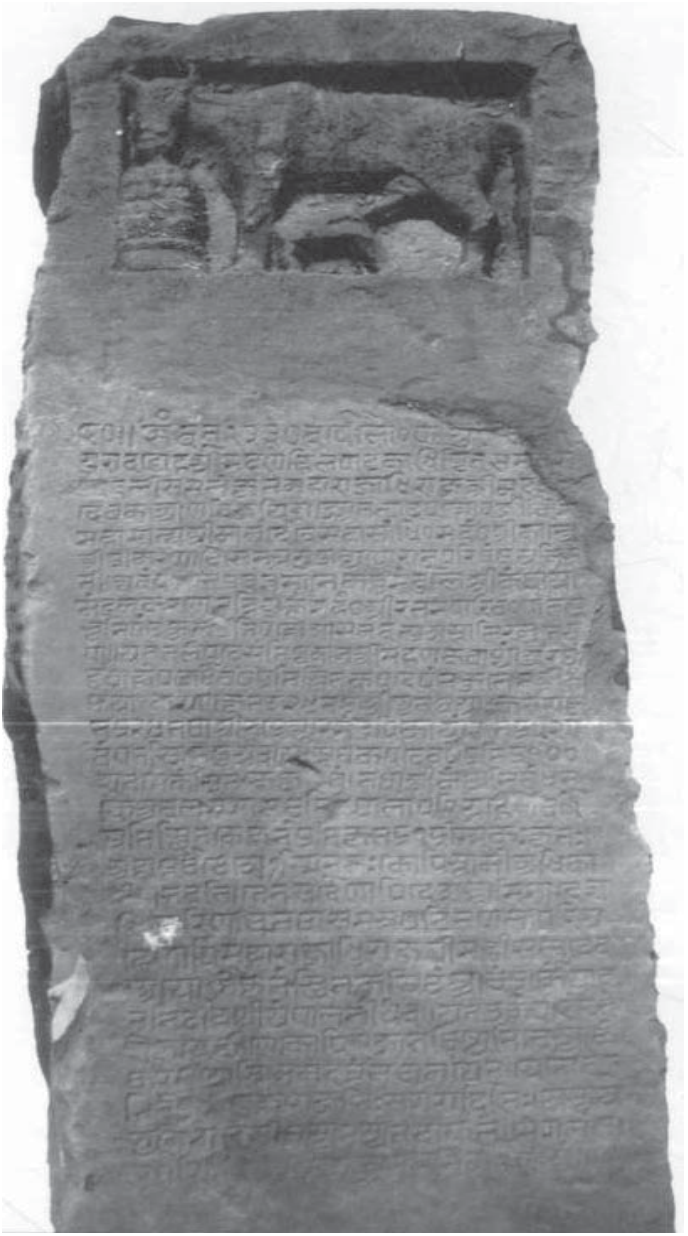

(कच्छ-भुज संग्रहालय से साभार)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नागरी-लिपिबद्ध शिलालेख (वि.सं.1021)

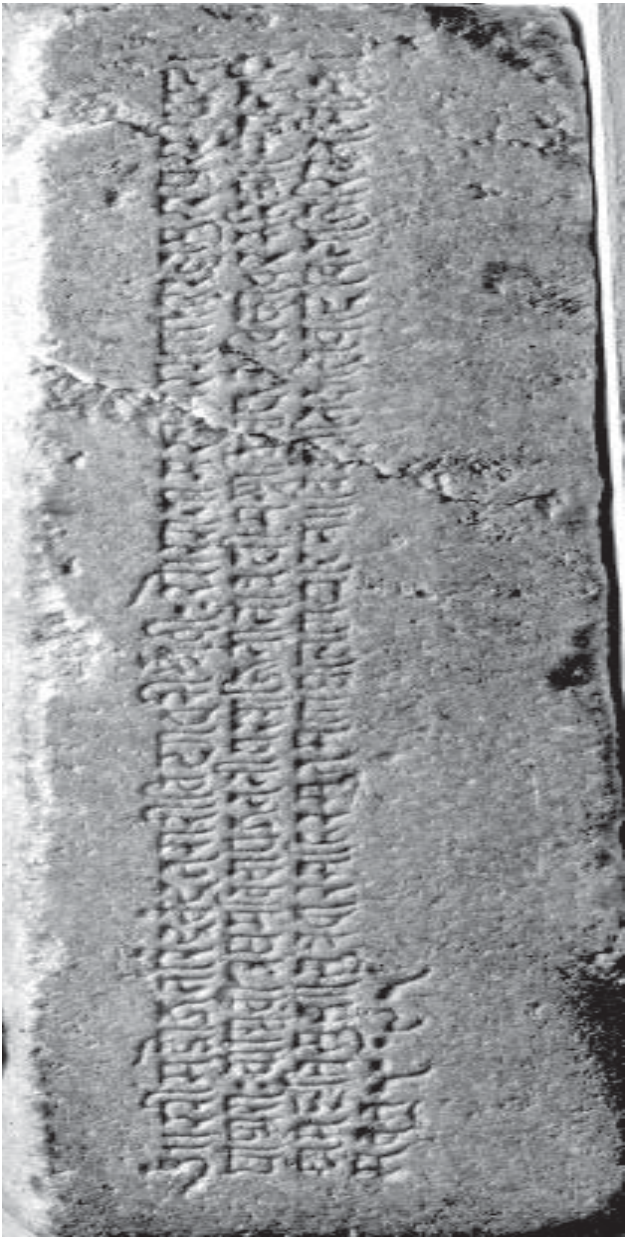

(ब्रिटिश म्यूजियम-लंदन की वेबसाईट से साभार)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारतीय प्राचीन श्रुतपरंपरा को युग-युगान्तरों से निरन्तर जीवित एवं संरक्षित रखने में इस लिपि का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इस लिपि में निबद्ध ग्रन्थराशि के आधार पर ही हमारी प्राचीन श्रुतसंपदा को पुन: प्रकाश में लाया जा सका है। भारतीय प्राचीन धरोहर-वैभव एवं राजा-महाराजाओं के पुरातन इतिहास संकलन में भी नागरी लिपिबद्ध पुरालेखों की अहम् भूमिका रही है।

आज इस लिपि का पठन-पाठन प्राय: लुप्त होता जा रहा है और इसके जाननेवाले विद्वान भी गिनेचुने ही रह गये हैं। लगभग नवमी से अठारहवीं शताब्दी के मध्य नागरी लिपिबद्ध पाण्डुलिपियों एवं पुरालेखों को आसानी से पढ सकें या लिप्यन्तर कर सकें ऐसे विद्वान आज बहुत कम दिखाई देते हैं; जबकि इस लिपि में निबद्ध प्राचीन साहित्य हमें प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो रहा है। इस लिपि का चलन तो विशेषकर उत्तर भारत में रहा लेकिन इसमें निबद्ध साहित्य हिंदुस्तान के समस्त भण्डारों में सर्वाधिक मात्रा में मिलता है। विदेशी ग्रन्थागारों में भी इस लिपि में निबद्ध पाण्डुलिपियाँ संगृहीत हैं। जो कभी ना कभी हिन्दुस्तान के ग्रन्थागारों में विद्यमान रही होंगी। इससे पता चलता है कि यह लिपि अपने समय में कितनी प्रामाणिकता के साथ प्रचलित रही होगी।

विविध प्राचीन लिपियों, विशेषत: नागरी के इतिहास की खोज करने से प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक इतिहास का संकलन हो सकता है। यद्यपि प्रागैतिहासिक काल की खोज करने में सबसे बडी कठिनता प्राचीन सामग्री का अभाव है। बहुत कुछ सामग्री काल-कवलित हो गई है। प्राचीन पुस्तकालय आदि, विध्वंसकारियों द्वारा नष्ट किये जा चुके हैं।[1] अनेक शिलालेख अज्ञानतावश दीवारों में चुने जाने के कारण शहीद होते जा रहे हैं; अथवा खुदे होने के कारण सिलबट्टे का रूप धारण करके छोटी-मोटी वस्तुओं (चटनी, मसाले आदि) को पीस रहे हैं। ताम्रपत्रों ने बर्तनों का रूप धरण कर लिया है और नित्य-प्रति कहारियों के कठोर हाथों की चोट खाते-खाते अपनी उपयोगिता खो बैठे हैं। सोने-चाँदी के सिक्के सुन्दरियों के अंग का आभूषण बनकर उनकी शोभा में

1. नालंदा विश्वविद्यालय के रत्नोदधि, रत्नसागर, रत्नरञ्जक नामक तीन विशाल ग्रन्थागारों को बख्तियार खिलजी द्वारा जलाकर नष्ट कर दिया गया, जहाँ लाखों महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ राख के ढेर में तब्दील हो गये। इन ग्रन्थागारों से वर्षों तक धुआँ निकलता हुआ देखा गया।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चारचाँद लगा रहे हैं; तदपि धरती माता ने अनेक खण्डहर, शिलालेख, ताम्रपत्र आदि बहुत-से रत्न अपने गर्भ में छिपा रखे हैं जो प्राचीन स्मारक-रक्षा विभाग एवं श्रुतरक्षकों के प्रयत्नों के फलस्वरूप समय-समय पर हमारे सम्मुख आते रहते हैं। इनका योग्य संरक्षण एवं संपादन कर प्रकाश में लाने की महती आवश्यकता है।

यद्यपि राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन नई दिल्ली द्वारा भारत के विविध शिक्षणकेन्द्रों में समय-समय पर आयोजित होनेवाली 'पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि अध्ययन कार्यशालाओं' के माध्यम से ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ आदि प्राचीन लिपियों के साथ-साथ इस लिपि को भी जीवित रखने के प्रयास किये जा रहे हैं, जो सराहनीय है। विगत कुछ वर्षों से ऐसा ही प्रयास श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा, एवं अहमदाबाद स्थित गुजरात विश्वकोश ट्रस्ट, भोलाभाई जेशींगभाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर एवं लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर आदि शैक्षणिक संस्थान कर रहे हैं। इन संस्थानों में पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि अध्ययन हेतु समय-समय पर कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। जिसे इस क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी कदम कहा जा सकता है।

इस कार्य में यदि और भी शिक्षण संस्थाएँ एवं समाजसेवी विद्वान मिलकर कार्य करें तो भारतीय श्रुतपरंपरा को सदियों तक जीवित रखनेवाली इस पुरातन धरोहर को लुप्त होने से बचाया जा सकता है।

हमने यहाँ प्राचीन नागरी लिपि का किंचित् परिचय प्रस्तुत कर पाठकों की जिज्ञासा में अभिवृद्धि करने का प्रयास किया है। आशा है विद्वान गवेषक इस प्राचीन भारतीय धरोहर को युग-युगान्तरों तक जीवित रखते हुए आगे आनेवाली पीढियों तक सुरक्षित पहुँचाने का प्रयास करेंगे।

इसके साथ ही यहां जैन देवनागरी लिपि की कुछ विशेषताएँ एवं नागरी तथा जैन देवनागरी लिपियों के अक्षरों की साम्य-वैसम्य दर्शक तालिका भी दी जा रही है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जैन देवनागरी लिपि की विशेषताएँ

आदर्श लेखकों एवं आदर्श लिपि के संरक्षण-संवर्धन में जैन संस्कृति का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। लेखनकला में जैन श्रमण संस्कृति ने अपने अनुकूल लिपि के अक्षरों में कुछ परिवर्तन, संयुक्ताक्षरों में संशोधन-संवर्धन एवं विविध सांकेतिक चिह्नों आदि का समावेश कर एक सुन्दर लिपि का निर्माण किया जो जैन देवनागरी लिपि के रूप में प्रसिद्ध हुई। इस लिपि में मगध की संस्कृति की मौलिक धरोहर विद्यमान है।

मुनिश्री पुण्यविजयजी म.सा. ने भारतीय जैन श्रमणसंस्कृति अने लेखनकला में जैन देवनागरी लिपि का विवेचनात्मक परिचय देते हुए लिखा है कि- जैन प्रजा एक समय में मगधवासिनी थी। परन्तु कालान्तर में भयंकर दुकाल एवं साम्प्रदायिक विवादों के कारण इस भूमि का त्यागकर सौराष्ट्र-गुजरात की भूमि में स्थाई निवास करने के बावजूद यह प्रजा मगध की संस्कृति व संस्कारों को नहीं भूली। इन संस्कृति एवं संस्कारों ने जैन प्रजा की लेखनकला में स्वकीय अस्तित्व स्थापित किया है, जिसके परिणामस्वरूप मगध की छाया जैन लिपि में दिखाई देती है। यह छाया अर्थात् अक्षर के मरोड, आकृति, योजना पडिमात्रा आदि।

उभयदेवसूरि को विक्रम की ग्यारहवीं सदी में नौ आगमों की टीका बनाते हुए प्राचीन ताडपत्रों की लिपि को पढने में वैविध्य के कारण बडी तकलीफ पडी थी तब उन्होंने जैन कक्कापाटी स्थिर करवाई थी जो मुद्रण युग के प्रारंभ तक एक रूप रही।

देवनागरी लिपि में से पडिमात्रा की प्रथा विक्रम की दसवीं शताब्दी पूर्व से घटते घटते आज पूर्णतः लुप्त हो गई है, जबकि जैन देवनागरी में यह प्रथा लगभग 18-19वीं शताब्दी तक देखने को मिलती है। सेकडों वर्ष के अनेकानेक संस्कारों के परिणामस्वरूप जैन लिपि में चाहे जितने परिवर्तन हुए हों, तो भी जैन ग्रन्थों की लिपि अपनी सुन्दरता एवं प्रामाणिकता को संजोए हुए है। इस लिपि का सौष्ठव एवं व्यवस्थितपना जितने प्रमाण में जैन संस्कृति में सुरक्षित व संवर्धित हुआ है उतना शायद ही अन्य किसी परम्परा में हुआ हो। प्राचीन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परम्परा को उसने अधिक सहेजकर रखा है। जैन लेखनकला के सर्वदिग्गामी विविध साधनों का संग्रह और उनका निष्पादन, लेखकों को प्रशिक्षितकर उनका एवं उनकी कला का निर्वाह करना, लिखित पुस्तकों के संशोधन की पद्धति, उसके साधन व चिह्न-संकेत, जैन लिपि के वर्ण, संयोगाक्षर तथा मरोड आदि बिलकुल अलग और विशिष्ट हैं। लिपि एवं लेखकों के आदर्श स्वरूप का वर्ण करनेवाले कुछ श्लोक निम्नवत हैं-

अक्षराणि समशीर्षाणि, वर्तुलानि घनानि च।
परस्परमलग्नानि, यो लिखेत् स हि लेखकः ॥
समानि समशीर्षाणि, वर्तुलानि घनानि च।
मात्रासु प्रतिबद्धानि, यो जानाति स लेखकः ॥
शीर्षोपेतान् सुसंपूर्णान्, शुभश्रेणीगतान् समान्।
अक्षरान् वै लिखेद् यस्तु, लेखकः स वरः स्मृतः ॥

अर्थात् अक्षर सीधे पंक्तिबद्ध गोल तथा सघन, हारबंध लेकिन एक-दूसरे से अलग, सभी अक्षरों के शीर्ष, मात्रा आदि अखण्ड होने के साथ-साथ लिपि आदि से अन्त पर्यन्त बराबर एकसमान लिखी हो तो वह आदर्श लिपि है। इस तरह के लिपि-अक्षर लिख सकने वाला ही आदर्श लेखक कहा जा सकता है।

जैन पाण्डुलिपियों का अपना वैशिष्ट्य है। मंगलसूचक चिह्न, मंगल वचन, मंगलाचरण, शब्दसंयोजन, शब्दार्थसूचक चिह्न, प्रशस्ति में अंकसूचक शब्द-प्रयोग, पुष्पिकाओं में ऐतिहासिक जानकारियों का समावेश, पद-वाक्य छूट जाने पर विशिष्ट चिह्नों के साथ नियमानुसार संशोधन, टिप्पण लेखन, अन्त मंगल, पाण्डुलिपि पर ही टीका का लिखा जान आदि इस लेखन पद्धति की प्रमुख विशेषताएँ है।

विदित हो कि यहाँ प्रदत्त प्राचीन नागरी लिपि की अक्षर तालिकाओं मे जैन देवनागरी लिपि के अक्षर भी सम्मिलित हैं। ऐसे कई अक्षर व संयुक्ताक्षर हमारे ध्यान में आये हैं जो विशुद्धरूप से जैन देवनागरी लिपि के हैं। अतः ऐसे अक्षरों व संयुक्ताक्षरों की एक तालिका यहाँ दी जा रही है-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राचीन देवनागरी	जैन देवनागरी	प्राचीन देवनागरी	जैन देवनागरी
उ	उ	ल, ल	ल
ऊ	ऊ	क्ष	क्ष
ऋ	ऋ	च्छ, च्छ	च्छ
ॠ	ॠ	त्थ, त्थ	त्थ
ओ	ओ	स्थ, स्थ	स्थ
औ	औ	द्ध, द्ध	द्ध, द्ध
ॐ	ॐ	ज्झ, ज्झ	ज्झ
ख	ख, ष	ञ	ञ
छ	छ	ष्ण, ष्ण	ष्ण
झ, झ	झ	ग्ग	ग्ग, ग्ग
ड	ड	ल्ल, ल्ल	ल्ल

For Private and Personal Use Only

हस्तप्रतों में प्रयुक्त संयुक्ताक्षर, संख्या सूचक अक्षर व चिह्नों का संपादकीय विवेचन

वर्तमान में उपलब्ध ऐतिहासिक तथ्यों एवं अन्य विवरणों से यह स्पष्ट है कि हमारे विद्वानों, आचार्यों, साधु-साध्वीजी भगवन्तों एवं श्रावकों के द्वारा रचित ग्रन्थों की संख्या प्रचुर मात्रा में है। जिनमें से अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हैं तो अनेक ग्रन्थ अनुपलब्ध हैं।

कुछ ग्रन्थों के तो सिर्फ उद्धरण ही मिलते हैं लेकिन आज वे ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं। या फिर कहीं हैं तो अन्धकार में डूबे हुए हैं, उनका कोई पञ्जियन नहीं है और कैसी स्थिति में होंगे यह हम अनुमान भी नहीं लगा सकते!

नई दिल्ली स्थित इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कलाकेन्द्र के प्राङ्गण में सञ्चालित राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन द्वारा प्राचीन हस्तप्रतों के सर्वे का काम पूरे देश में चलाया जा रहा है। सौभाग्य से मुझे भी इस सर्वे-कार्य में जुडने का अवसर प्राप्त हुआ। इस सर्वे के दौरान हमें कई स्थानों पर अनेकों महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ मिले हैं। इनमें से कुछ ग्रन्थों की दशा श्रेष्ठ है तो कुछ उचति रख-रखाव के अभाव में अति जीर्ण हो गये हैं।

कई ग्रन्थ तो ऐसे प्राप्त हुए हैं जिन्हें दीमक या सिल्वरफिश् आदि कीडों के द्वारा पूर्णत: नष्ट कर दिया गया है। अनेकों ग्रन्थ ऐसे भी मिल रहे हैं जिनकी स्याही बरसात या धूप के कारण फीकी पड गई है, कागज भी पीला पड गया है और अब उन्हें पढपाना बहुत मुश्किल है।

कुछ ताडपत्र ऐसे भी मिले हैं जिनपर टाँकणी द्वारा टाँक कर (खोदकर) लिखा हुआ तो मिलता है लेकिन उन अक्षरों में स्याही नहीं भरी है। हो सकता है कि लहिया अथवा ग्रन्थ लिखवाने वाले व्यक्ति के पास स्याही का अभाव रहा हो, या कोई अन्य कारण भी हो सकता है।

क्योंकि उस समय एक ग्रन्थ तैयार करने हेतु स्याही, कागज, ताडपत्र, कलम आदि लेखन-सामग्री का इंतजाम करने में ही लंबा समय गुजर जाता था। अर्थात् यह सब व्यवस्था करना इतना आसान नहीं था।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आज भी अनेकों महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लोगों के घरों में रखें हुए हैं एवं असुरक्षित और अप्रकाशित हैं। कुछ महत्त्वपूर्ण ग्रन्थभण्डारों में हमारी प्राचीन हस्तप्रत-संपदा को सुव्यवस्थित एवं सुरक्षित तरीके से रखा हुआ है और वहाँ के पण्डित इन ग्रन्थों के सम्पादन एवं प्रकाशन-कार्य में संलग्न हैं। सौभाग्य से मुझे भी अहमदाबाद एवं गांधीनगर के मध्य स्थित श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा के ज्ञानभण्डार में कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ है।

इस भण्डार में लगभग दो लाख पाण्डुलिपि ग्रन्थ संगृहीत हैं। जो संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, पालि, मारुगुर्जर, राजस्थानी, पुरानी हिंदी एवं गुजराती आदि विभिन्न भाषाओं में निबद्ध हैं।

प्राचीन देवनागरी, शारदा, नेवारी, ग्रंथ, बंगला, मैथिल आदि लिपिबद्ध ग्रन्थों के सूचीकरण एवं प्रकाशनार्थ लिप्यन्तर आदि कार्य करते समय उनकी पाण्डुलिपियों में अनेकविध चिह्न देखने को मिलते हैं। जिनका ज्ञान संपादनकार्य को अति सरल और शुद्ध बना सकता है।

विदित हो कि इन हस्तप्रतों को ग्रन्थकार स्वयं लिखकर अथवा लहिया (लिपिक, प्रतिलेखक) के पास लिखवाकर इन्हें फिर संशोधन की दृष्टि से पढते थे। उस समय मूल पाठ में जिस प्रकार के संशोधन की आवश्यकता होती थी उसे विशेष चिह्नों द्वारा अंकित कर पत्र के मार्जिन-हाँसिया में लिख दिया जाता था।

यदि किसी शब्द अथवा पंक्ति को डीलिट करना हो, नया अक्षर, शब्द या मात्रा जोडना हो, अवग्रह चिह्न लगाना हो अथवा किसी पंक्ति को लॉक करना हो तो इस हेतु कुछ विशेष प्रकार के चिह्नों का प्रयोग किया जाता था।[1]

हस्तप्रत संपादन में इस प्रकार के संशोधनों का बडा महत्त्व है। इससे समय एवं संसाधनों की भी बचत होती थी। जैन परंपरा में गुरु-शिष्य की अनवरत परंपरा के कारण ऐसे संशोधन प्रायः होते रहे हैं।

आज भी कई भण्डारों में स्वयं कर्ता द्वारा संशोधित हस्तप्रत प्राप्त होती हैं जो संपादन एवं शुद्ध-पाठ निर्धारण की दृष्टि से अति महत्त्वपूर्ण हैं। अतः इस

1. देखें पृष्ठ १६६.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हेतु हस्तप्रतों में प्रयुक्त संशोधन चिह्नों का ज्ञान अतीव अनिवार्य हो जाता है। और यदि इन चिह्नों का ज्ञान न हो तो इसी कारण से अनेकविध भ्रान्तियाँ एवं अशुद्धियाँ होने की संभावना भी बढ जाती है।

हस्तप्रतों में प्रयुक्त कुछ चिह्न एवं संयुक्ताक्षरों की लेखन परंपरा के बोधार्थ यहाँ एक संकलित तालिका भी संलग्न की गई है जो हस्तप्रत संशोधकों के लिए सहायक सिद्ध होगी।

संयुक्ताक्षरों की स्थिति :

प्राचीन नागरी एवं जैन-नागरी लिपिबद्ध हस्तप्रतों में मिलनेवाले संयुक्ताक्षरों का ज्ञान संपादनकार्य में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

विदित् हो कि नागरी लिपि में कुछ अक्षर ऐसे हैं जो दूसरे वर्णों के साथ जुडने पर पूर्णतः परिवर्तित हो जाते हैं और अन्य वर्णों का भ्रम भी उत्पन्न करते हैं। उस परिवर्तित स्वरूप का ज्ञान यदि न हो तो अनेकविध अशुद्धियाँ होने की संभावना बढ जाती है।

इन संयुक्ताच्छरों में विशेषकर 'ज्ज' जो कि 'ज्झ' का भ्रम करता है।

'क्ख' जो कि 'रक', 'रवु' या 'खु' का भ्रम उत्पन्न करता है।

'ओ' जो कि 'उ' वर्ण को निरस्त करने अथवा 'न' वर्ण का भ्रम करता है।

'ऋ' वर्ण 'क्ष' या 'कृ' का भ्रम करता है।

यदि 'ग' वर्ण में 'ए' की अग्रमात्रा लगाकर 'गे' लिखा हो तो अग्रमात्रा के कारण 'ण' या 'ऐ' का भ्रम करता है।

'थ' वर्ण 'व्व' एवं 'घ' का भ्रम करता है। 'श' वर्ण 'ल' या 'ऋ' का भ्रम करता है। 'च्छ' वर्ण 'त्थ' का भ्रम उत्पन्न करता है।

विदित् हो कि 'छ' वर्ण के साथ जब 'च्' वर्ण जुडता है तो उसे 'च्छ' पढा जाता है, लेकिन जब उसी 'छ' वर्ण के साथ 'त्' वर्ण जुडता है तो 'छ' वर्ण 'थ' में परिवर्तित हो जाता है और संयुक्त अक्षर 'त्थ' का स्वरूप ग्रहण करता है। यदि उसी 'छ' वर्ण के साथ 'स्' वर्ण जुडता है तो उसे 'स्थ' पढा जाता है, और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यदि 'छ' वर्ण दो पूर्णविरामों के मध्य ॥ ॥ इस प्रकार लिखा हो तो उसे गाथा, श्लोक, अध्याय अथवा ग्रन्थ-पूरक या 'विषय समाप्ति सूचक चिह्न' के रूप में पढा जाता है।

ऐसा ही एक वर्ण ॥ ळ ॥ है जो ग्रन्थ समाप्ति अथवा अध्याय या पाठ की समाप्ति का द्योतक है। यह वर्ण तथा पूर्ण कुंभ आकृति आदि चिह्न अंतिम मंगल सूचक चिह्न के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं।

ज्ज =   **('ज्झ' का भ्रम उत्पन्न करता है)**

क्ख =   **('रक, रवु या खु' का भ्रम उत्पन्न करता है)**

ओ =   **('उ' वर्ण को डिलीट करने अथवा 'न' वर्ण का भ्रम उत्पन्न करता है)**

ऋ =   **('क्ष' या 'कृ' वर्ण का भ्रम उत्पन्न करता है)**

गे =   **(अग्रमात्रा के कारण 'ण' अथवा 'ए' वर्ण का भ्रम उत्पन्न करता है)**

ए =   **('ग' अथवा 'ण' वर्णों का भ्रम उत्पन्न करता है)**

ण =   **('ऐ' अथवा 'ग' वर्णों का भ्रम उत्पन्न करता है)**

य =   **('व्व' का भ्रम उत्पन्न करता है)**

श =   **('त्न' अथवा 'ऋ' का भ्रम उत्पन्न करता है)**

च्छ =   **('त्य' का भ्रम उत्पन्न करता है)**

इसी प्रकार जब 'प' वर्ण के साथ 'भ' वर्ण जुडता है तो उसे 'ब्भ' पढा जाता है। तथा मूर्धन्य 'ष' के साथ जब 'भ' वर्ण जुडता है तो 'ज्झ' पढा जाता

च्छ =	**त्थ =**	**स्थ =**
॥ ॥ **(पूरक या समाप्ति सूचक चिह्न)**		

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। यथा-

प् + भ = प्भ	प्+ न = प्न
ष् + भ = ष्भ	ष्+ न = ष्न

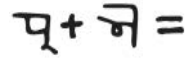

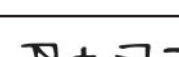

ऐसे और भी कई वर्ण हैं जो संयुक्त होने पर अपना स्वरूप बदल लेते हैं और संपादक को भ्रमित करते हैं। अतः ऐसे कुछ संयुक्त वर्णों तथा समानता के कारण भ्रमित करनेवाले अक्षरों की तालिकाएँ यहाँ संलग्न की जा रही हैं-

क्क	क्ख	त्य	क्य	त्व	ख्य	म्य	क्त
क्क,क्क	क्ख	त्य	क्य	त्व	ख्य	म्य	क्त
द्व	द्ध	न्द्व	ज्ज	ज्झ	ञ्च	न्त	ल्ल
द्व	द्ध	न्द्व	ज्ज	ज्झ	ञ्च	न्त	ल्ल
ज्ज्व	ध्व	श्ल	श्न	ष्ट	ष्ठ	ह्न	ह्ल
ज्ज्व	ध्व	श्ल	श्न	ष्ट	ष्ठ	ह्न	ह्ल
च्छ्व	ष्ण	स्थ	त्स	त्थ	च्छ	द	त्स्य
च्छ्व	ष्ण,ष्ण	स्थ	त्स	त्थ	च्छ	द	त्स्य
श्च	श्व	च्च	ण्य	ट्ठ	ण्ण	त्त	प्त
श्च	श्व	च्च	ण्य	ट्ठ	ण्ण,ण्ण	त्त	प्त,प्त
धा	ब्ब	व्व	त्क	त्ख	त्न	स्त	ग्ग
धा,धा	ब्ब	व्व	त्क	त्ख	त्न	स्त	ग्ग,ग्ग
ब्भ	र्य	ट्य	ग्य	क्ल	ॐ	ह्रीँ	एँ
ब्भ	र्य	ट्य,ट्य	ग्य	क्ल,क्ल	ॐ	ह्रीँ	एँ

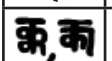

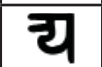

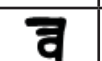

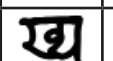

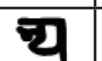

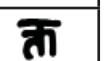

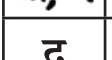

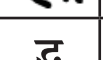

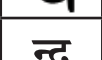

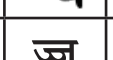

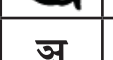

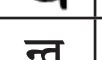

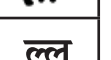

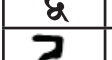

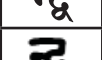

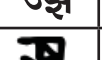

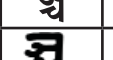

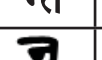

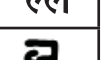

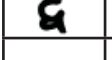

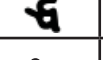

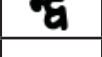

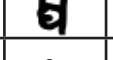

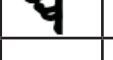

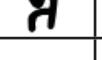

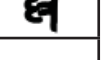

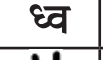

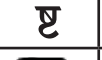

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

११वीं सदी से १९वीं सदी पर्यन्त पाण्डुलिपियों में प्रयुक्त संयुक्ताक्षर[1]

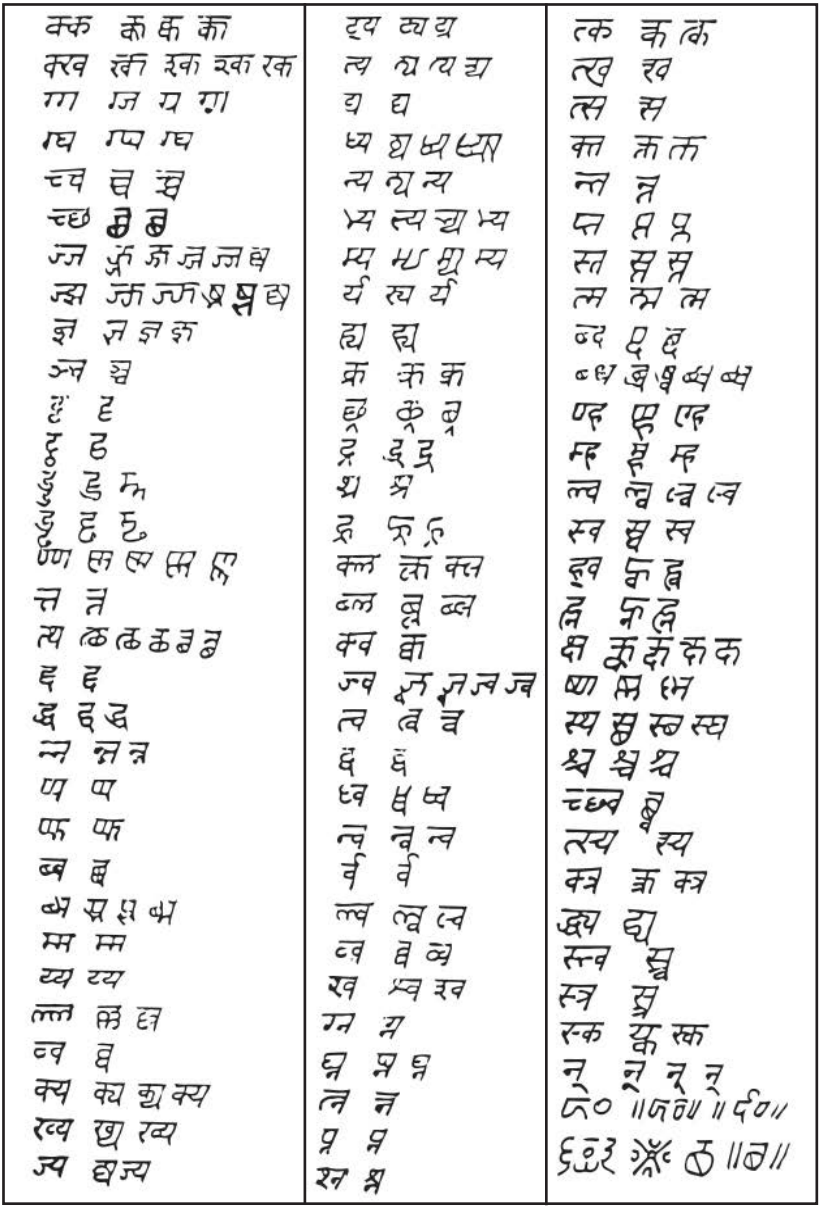

1. मुनीश्री पुण्यविजयजी म. सा. के प्रिय शिष्य कुशल लेखक एवं पुरालिपिवेत्ता श्री लक्ष्मणभाई भोजक (लक्ष्मणकाका) द्वारा निर्मित लिपि पत्रों से आभार सहित।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

समानता के कारण भ्रम उत्पन्न करनेवाले अक्षर

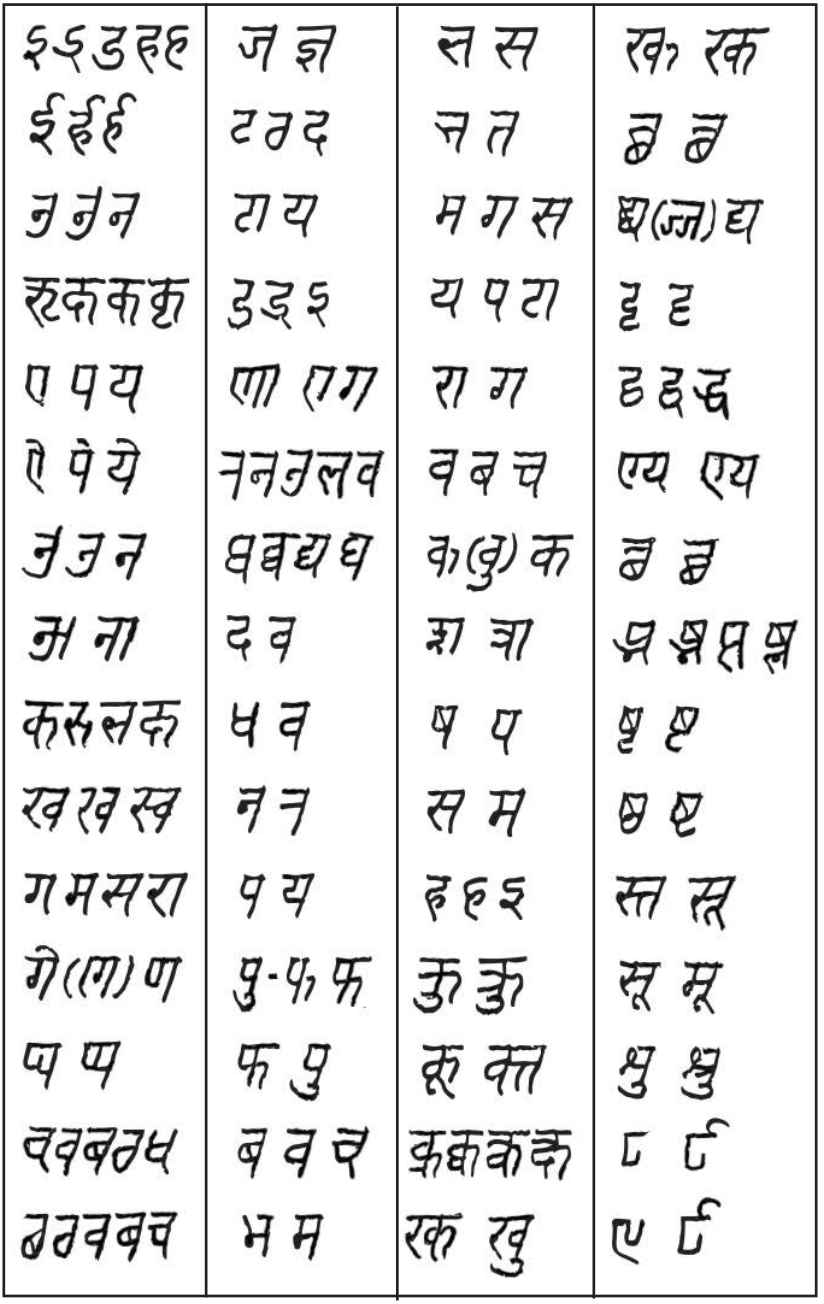

For Private and Personal Use Only

हस्तप्रतों में प्रयुक्त चिह्न

१		[प्रथम मंगल सूचक चिह्न, (भले मिंडु) 10वीं शताब्दी से 15-16वीं शताब्दी तक]
२		[शब्द अथवा पंक्ति योजक चिह्न]
३		[पंक्ति पूर्णता सूचक चिह्न, (10वीं से 15-16वीं शताब्दी तक ताडपत्री ग्रन्थ]
४		[श्लोक, गाथा अथवा अध्याय पूर्णता सूचक चिह्न]
५		[रिक्तस्थान सूचक चिह्न]
६		[काकपाद, हंसपाद या मोर पगला]
७		[अक्षर अथवा पंक्ति योजक चिह्न]
८		[टिप्पण सूचक चिह्न]
९		[मध्य फुल्लिका]
१०		[छिद्रक अथवा चन्द्रक]
११		[अवग्रह सूचक चिह्न]
१२		[गलत वर्ण अथवा मात्रा को डिलिट करने हेतु]
१३		[गलत शब्द अथवा वाक्य को डीलिट करने हेतु प्रयुक्त चिह्न]
१४		[ग्रन्थ पूर्णता सूचक चिह्न अथवा अन्तिम मंगल सूचक चिह्न]

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

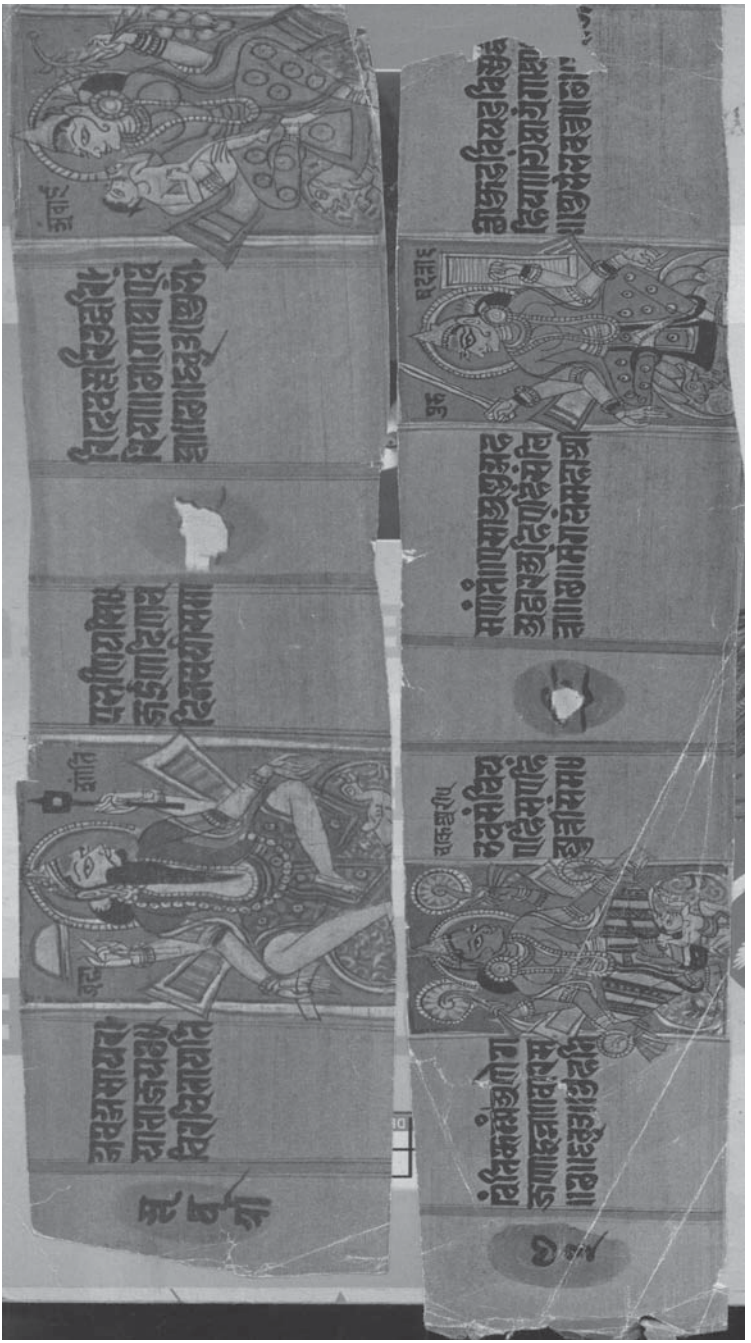

अन्तिम मंगल सूचक चिह्न तथा योजक चिह्नों का प्रयोग

For Private and Personal Use Only

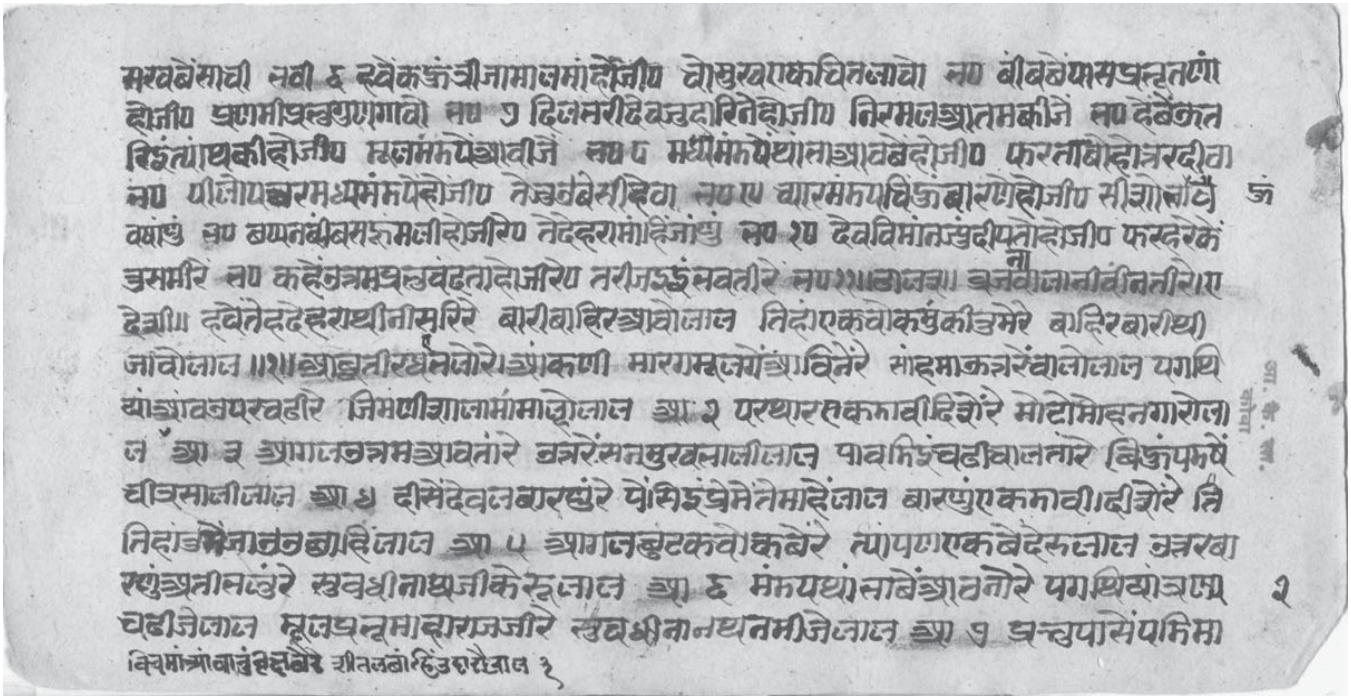

ऊपर से चतुर्थ पंक्ति में जोडने हेतु मार्जिन हाँसिया में उसी पंक्ति के समक्ष प्रदर्शित पाठ तथा नीचे से ऊपर की ओर छठी पंक्ति में जोडने हेतु पाठ के अन्त में ६ संख्या लिखकर प्रदर्शित पाठ

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir
For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जैन देवनागरी लिपिबद्ध हस्तप्रत पठन-पाठन अभ्यासार्थ शब्दसंग्रह[1]

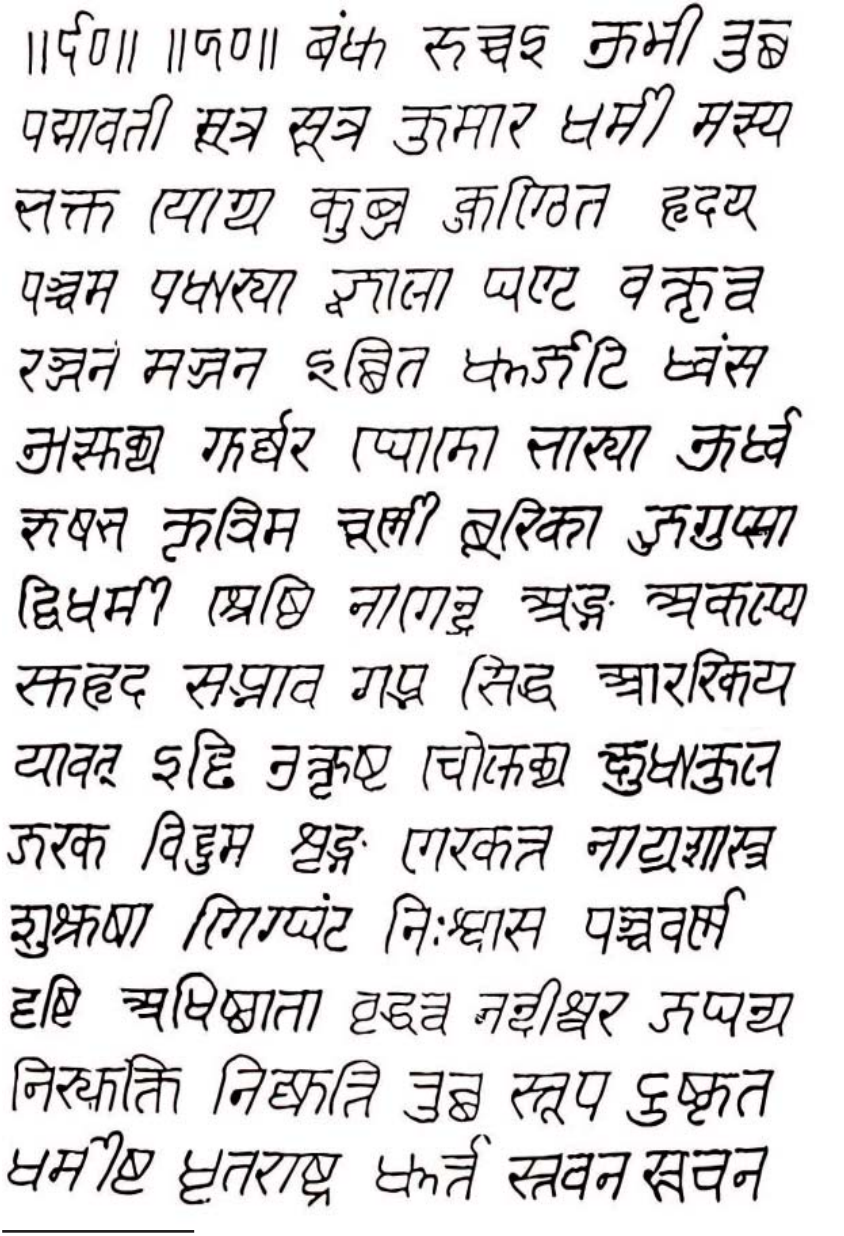

1. श्री लक्ष्मणभाई भोजक (लक्ष्मण काका) द्वारा संकलित पत्र की प्रतिलिपि, आभार सहित ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारतीय प्राचीन कला-साहित्य एवं संस्कृति को सुरक्षित रखने और इसकी निरन्तरता को बनाए रखने में जैन तीर्थक्षेत्रों, मन्दिरों, साधु-साध्वियों, विद्वानों, गुरुकुल, शिक्षण संस्थानों तथा व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर किये गये प्रयत्नों तथा स्वाध्याय, प्रवचन, शास्त्र-सभाओं, शास्त्र-भण्डारों आदि की अहम भूमिका रही है।

किन्तु इन प्रयत्नों के उपरान्त भी ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व की बहुत-सी अमूल्य धरोहर उचित संरक्षण एवं रख-रखाव के अभाव में यत्र-तत्र बिखरी हुई है। हमारी महत्त्वपूर्ण मूर्तियाँ, दुर्लभ ग्रन्थ व कलात्मक-सामग्री उचित एवं वैज्ञानिक संरक्षण के अभाव में नष्ट हो रही है। ऐसे समय में हमारा कर्त्तव्य है कि हमारी कला एवं संस्कृति की अमूल्य धरोहरस्वरूप प्राचीन विरासत को सुरक्षित एवं संरक्षित करके भावी पीढी को हस्तान्तरित कर अपने पूर्वजों की परम्परा को बचाए रखें और पितृ-ऋण से ऊर्ण हों।

आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व महाराजा सयाजीराव गायकवाड के समय बडोदरा स्थित ग्रन्थागार में पाण्डुलिपियों को रखने हेतु अलमारियों का अभाव था तब महाराजा ने कहा था कि 'आभूषणों को रखने हेतु जो अलमारियाँ राजदरबार में हैं उन्हें खाली करके उनका उपयोग मूल्यवान हस्तप्रतों को सुरक्षित रखने हेतु किया जाये'। प्राचीन श्रुतसंपदा के प्रति आस्था एवं उसके संरक्षणार्थ हर संभव प्रयास करने का यह एक अनूठा उदाहरण है।

हमारे पूर्वजों, ग्रंथकर्ता, लहिया, ग्रंथ प्रेरक, संरक्षक आदि की आत्मा आज भी उनके द्वारा लिखित ग्रन्थों में अटकी हुई है, उनकी आत्मा को मोक्ष की प्राप्ति तभी हो सकती है जब हम उनके हस्तलिखित ग्रन्थों को सम्पूर्ण सुरक्षा प्रदान करें और उनका प्रकाशन एवं संपादन कर समाज के समक्ष प्रस्तुत् करें।

आशा है इस पुस्तक के माध्यम से प्राचीन लिपियों तथा हस्तप्रतविद्या अध्ययन-अध्यापन एवं संरक्षण-संवर्धन के प्रति समाज में रुचि जागृत होगी व नये विद्वान तैयार होंगे।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हस्तप्रतों में प्रयुक्त अक्षरात्मक अंक व संख्यासूचक शब्द :

हस्तप्रतों में विशेषरूप से संख्याओं का प्रयोग पत्रसंख्या, गाथा अथवा श्लोकसंख्या, अन्त में रचना-प्रशस्ति व प्रतिलेखन पुष्पिका आदि लेखनार्थ पाया जाता है।

विविध ग्रन्थों में पत्रसंख्या लेखनार्थ अक्षर प्रयुक्त हुए मिलते हैं जबकि रचना-प्रशस्ति व लेखन संवत् आदि दर्शाने हेतु संख्यावाचक शब्द लिखने की परम्परा मिलती है। यहाँ दोनों ही परम्पराओं का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है-

अक्षरात्मक पत्रांक लेखन परम्परा :

ताडपत्रीय हस्तप्रतों में पत्रसंख्या मार्जिन हाँसिया में दायीं ओर मध्यभाग में लिखने का विधान मिलता है। जबकि कागजीय हस्तप्रतों में ज्यादातर दायीं ओर नीचे के भाग में पत्र संख्या लिखने की परंपरा मिलती है। कुछ प्राचीन कागजीय हस्तप्रतों में भी ताडपत्रों की तरह ही मार्जिन हाँसिया के मध्यभाग में पत्रांक लिखे हुए मिलते हैं।

ताडपत्रीय ग्रन्थों में पत्रांक लेखनार्थ अंकों के साथ साथ नागरी लिपि के प्रतीकात्मक अक्षरों व संयुक्ताक्षरों का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में हुआ है।

जिन ताडपत्रीय ग्रन्थों में अक्षरात्मक अंकों का प्रयोग हुआ है उनमें ताडपत्र के मार्जिन हाँसिया में बायीं ओर मध्यभाग में ये अक्षर पत्रांक के रूप में ऊपर से नीचे की ओर लिखे हुए मिलते हैं तथा दायीं तरफ अंकों में पत्रसंख्या लिखी हुई मिलती है।

हस्तप्रतों में प्रयुक्त अक्षरात्मक अंकों की तालिका यहाँ संलग्न की जा रही है[1] जो इस क्षेत्र में काम करनेवाले गवेषकों के लिए सहायक सिद्ध होंगी :

---

१. अधिक जानकारी हेतु देखें भारतीय जैन श्रमणसंस्कृति अने लेखनकला पृ. ६०-६७, पाण्डुलिपि सूचिकरण एवं संपादन पृ. ६८-९३, भारतीय प्राचीन लिपिमाला पृ. १०३-१३०.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इकाई अंक :

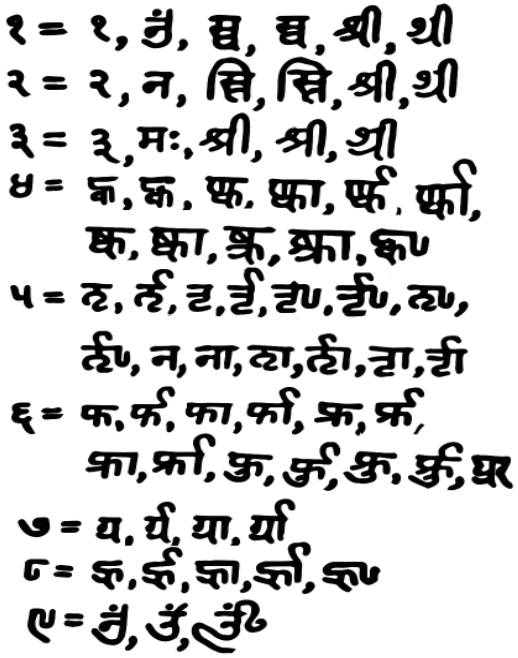

दशक अंक :	शतक अंक :

For Private and Personal Use Only

प्राचीन अंकमाला के वर्ण, जैसलमेर सूचीपत्र,
खण्ड-2, पृ. 320 से साभार.

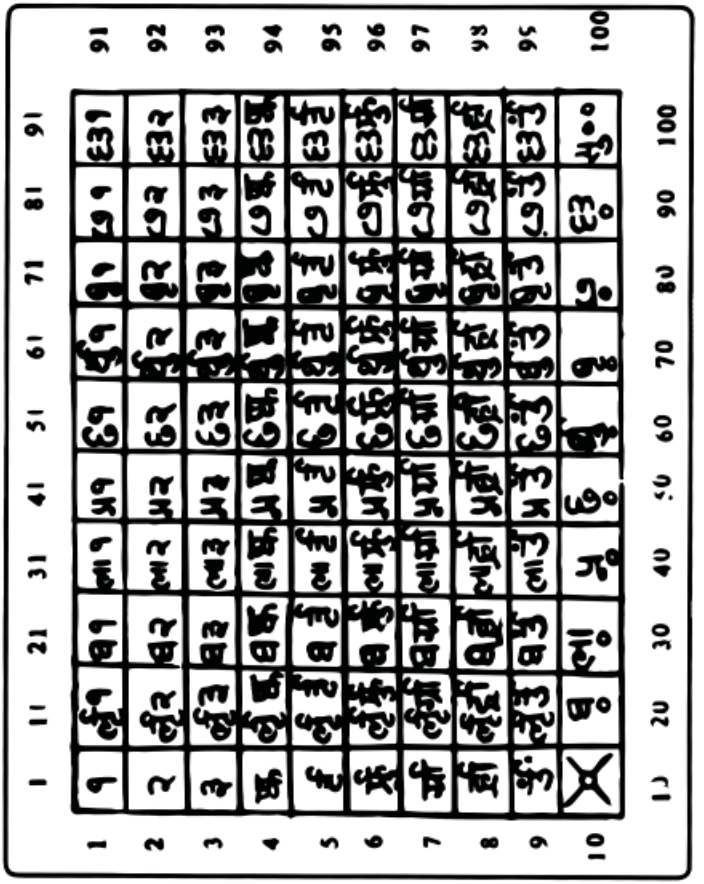

पाण्डुलिपियों में अक्षरों के साथ कभी-कभी अंक तथा रिक्तस्थान के लिये शून्य भी लिखा मिलता है, यथा-

33= ला ३, 100= सु ० ०, 102= सु ० २, 131= सु ला १, 150= ६ ० ०, 209= स्रु ० ६ आदि।

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संख्यासूचक शब्द लेखन परम्परा :

हस्तप्रतों के अन्त में मिलनेवाली रचना-प्रशस्ति व प्रतिलेखन-पुष्पिकाओं में जहाँ रचनाकाल एवं प्रतिलेखन-वर्ष आदि का उल्लेख मिलता है, वहाँ अंकों के स्थान पर शब्दों के माध्यम से रचनासंवत् अथवा प्रतिलेखनवर्ष आदि लिखने की विशिष्ट परम्परा मिलती है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, मारुगुर्जर, पुरानी हिन्दी तथा अन्य देशी भाषाओं के ग्रन्थों में शब्दों के माध्यम से अंकों का उल्लेख करने की परिपुष्ट विधा देखने को मिलती है। इस परम्परा के तहत पहले इकाई फिर दहाई, सैकडा व हजार की संख्या के बोधक शब्दों का क्रमशः प्रयोग होता है। इस प्रकार 'अंकानां वामतो गतिः' के आधार पर संख्याओं का व्यवस्थापन कर कालनिर्धारण किया जाता है। यहाँ कुछ ग्रन्थों की पाण्डुलिपियों से उदाहरण संकलित हैं, यथा-

१. गुण[३]-नयन[२]-रसे[६]-न्दु[१]-मिते वर्षे भावप्रकरणावचूरिः संपूर्णा। वि.संत् १६२३.

२. मुनि[७]-वसु[८]-सागर[४]-सितकर[१]-मित-वर्षे सम्यक्त्वकौमुदी। वि.संवत् १४८७.

३. संवत् शशि[१]-कृत[१]-वसु[८]-शशि[१]-आस्वनि मिति तिथि नाग।

दिन मंगल मंगलकरन हरत सकल दुःख दाग॥ वि.संवत् १८११.

४. वेद[४]-इन्दु[१]-गज[८]-भू[१] गनित संवत्सर कविवार।

श्रावन सुक्ल त्रयोदशी रच्यौ ग्रन्थ सुविचारि॥ वि.सं. १८१४.

५. रस[६]-सागर[७]-रवितुरंग[७]-विधु[१] संवत मधुर वसंत।

विकस्यो रसिक रसाल लखि हुलसत सुहृद वसन्त॥ वि.संवत् १७७६.

इस प्रकार ग्रन्थों की प्रशस्ति एवं पुष्पिकाओ में अनेकविध ऐतिहासिक उल्लेख मिलते हैं। यहाँ कुछ ग्रन्थों एवं संख्यावाचक शब्दकोश आदि से संकलित संख्यावाची शब्दों की एक संक्षिप्त तालिका दी जा रही है।[1]

०-शून्य, ख, गगन, आकाश, अंबर, अभ्र, वियत्, व्योम, अन्तरिक्ष, नभ, पूर्ण, रन्ध्र, बिन्दु, छिद्र आदि।

---

१. विसद् विवेचनार्थ देखें भारतीय प्राचीन लिपिमाला, पाण्डुलिपि विज्ञान, भारतीय जैन श्रमणसंस्कृति अने लेखनकला तथा संख्यावाचक शब्दकोश।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

१-आदि, शशि, इन्दु, विधु, चन्द्र, शीतांशु, शीतरश्मि, सोम, शशांक, सुधांशु, अब्ज, भू, भूमि, क्षिति, धरा, उर्वरा, गो, वसुंधरा, पृथ्वी, क्षमा, धरणी, वसुधा, इला, कु, मही, रूप, पितामह, नायक, तनु, कलि, सितरुच, निशेश, निशाकर, औषधीश, क्षपाकर आदि।

२-यम, यमल, अश्विन, नासत्य, दस्र, लोचन, नेत्र, अक्षि, दृष्टि, चक्षु, नयन, ईक्षण, पक्ष, बाहु, कर, कर्ण, कुच, ओष्ठ, गुल्फ, जानु, जंघा, द्वय, द्वन्द्व, युगल, युग्म, अयन, कुटुम्ब, रविचन्द्रौ, श्रोत्र आदि।

३-राम, गुण, त्रिगुण, लोक, त्रिजगत् भुवन, काल, त्रिकाल, त्रिनेत्र, सहोदरा, अग्नि, वह्नि, पावक, वैश्वानर, दहन, तपन, हुताशन, ज्वलन, शिखिन, कुशानु, होतृ, त्रिपदी, अनल, तत्त्व, त्रैत, शक्ति, पुष्कर, संध्या, वर्ण, स्वर, पुरुष, अर्थ, गुप्ति आदि।

४-वेद, श्रुति, समुद्र, सागर, अब्धि, जलधि, उदधि, जलनिधि, अम्बुधि, केन्द्र, वर्ण, आश्रम, युग, तुर्य, कृत अय, आय, दिशा, बन्धु, कोष्ठ, वर्ण, वारिनिधि, अंबुनिधि, अर्णव, ध्यान, गति, संज्ञा, कषाय आदि।

५-बाण, शर, शायक, ईषु, भूत, पर्व, प्राण, पाण्डव, अर्थ, विषय, महाभूत, तत्त्व, इन्द्रिय, रत्न, अक्ष, वर्ष्म, व्रत, समिति, कामगुण, शरीर, अनुत्तर, महाव्रत, शिवसुख आदि।

६-रस, अंग, काम, ऋतु, दर्शन, राग, अरि, शास्त्र, तर्क, कारक, समास, लेश्या, क्षमाखण्ड, गुण, गूहक, गुहवक्त्र आदि।

७-नग, अग, भूभृत, पर्वत, शैल, अद्रि, गिरि, ऋषि, मुनि, अत्रि, वार, स्वर, धातु, अश्व, तुरंग, वाजि, द्वन्द्व, धी, कलत्र, हय, भय, सागर, जलधि, लोक आदि।

८-वसु, अहि, नाग, गज, दन्ति, दिग्गज, हस्तिन्, मातंग, कुञ्जर, द्वीप, सर्प, तक्ष, सिद्धि, भूति, अनुष्टुप, मंगल, नागेन्द्र, करि, मद, प्रभावक, कर्मन, धीगुण, बुद्धिगुण, सिद्धगुण आदि।

९-अंक, नन्द, निधि, ग्रह, रन्ध्र, छिद्र, द्वार, गो, पवन, खग, हरि, नारद, तत्त्व, ब्रह्मगुप्ति, ब्रह्मवृत्ति, ग्रैवेयक आदि।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

१०-दिश, दिशा, आशा, अंगुलि, पंक्ति, कुकुभ, रावणशिर, अवतार, कर्मन, यतिधर्म, श्रमणधर्म, प्राण आदि।

११-रुद्र, ईश्वर, हर, ईश, भव, भर्ग, हूलिन, महादेव, अक्षौहिणी, शूलिन आदि।

१२-रवि, सूर्य, अर्क, मार्तण्ड, द्युमणि, भानु, आदित्य, दिवाकर, मास, राशि, व्यय, दिनकर, उष्णांशु, चक्रिन्, भावना, भिक्षुप्रतिमा, यतिप्रतिमा आदि।

१३-विश्वदेवाः, काम, अतिजगती, अघोष, विश्व, क्रियास्थान, यक्ष आदि।

१४-मनु, विद्या, इन्द्र, शक्र, लोक, वासव, भुवन, विश्व, रत्न, गुणस्थान, पूर्व, भूतग्राम, रज्जु आदि।

१५-तिथि, घर, दिन, अह्न, पक्ष, परमार्थिक आदि।

१६-नृप, भूप, भूपति, अष्टि, कला, इन्दुकला, शशिकला आदि।

१८-धृति, अब्रह्म, पापस्थानक आदि।

१९-अतिधृति।

२०-नख, कृति।

२१-उत्कृति, प्रकृति, स्वर्ग आदि।

२२-कृति, जाति, परीषह आदि।

२३-विकृति।

२४-गायत्री, जिन, अर्हत्, सिद्ध आदि।

२५-तत्त्व।

२७-नक्षत्र, उडु, भ आदि।

३२-दन्त, रद, रदन आदि।

३३-देव, अमर, त्रिदश, सुर आदि।

४०-नरक, ४८-जगती, ४९-तान, पवन, ६४-स्त्री-कला, ७२-पुरुष-कला आदि।

इनमें कुछ शब्द ऐसे भी हैं जो कि एक से अधिक अंकों के पर्याय के रूप

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में प्रयुक्त होते हैं। यथा- तत्त्व शब्द- ३, ५, ९, २५ के लिए भी प्रयुक्त हुआ है। ऐसी स्थिति में अध्येताओं को अन्य सन्दर्भों के आधार पर योग्य अर्थ का गठन करना चाहिए।

साहित्य में भी कवि-समय या काव्यरूढि के रूप में संख्या को शब्दों के द्वारा व्यक्त किया जाता रहा है। जैन साहित्यिक ग्रन्थ कविशिक्षा की काव्यकल्पलतावृत्ति से संख्या विषयक शब्दों की एक तालिका यहाँ दी जा रही है-

एक- आदित्य, मेरु चन्द्र, प्रासाद, दीपदण्ड, कलश, खग, हरनेत्र, शेष, स्वरदण्ड, अंगुष्ठ, हस्तिकर, नासा, वंश, विनायक-दन्त, पताका, मन, शक्राश्व, अद्वैतवाद आदि।

दो- भुज, दृष्टि, कर्ण, पाद, स्तन, संध्या, राम-लक्ष्मण, श्रृंग, गजदन्त, प्रीति-रति, गंगा-गौरी, विनायक-स्कन्द, पक्ष, नदितट, रथधुरी, खंग-धारा, भरत-शत्रुघ्न, राम-सुत, रवि-चन्द्र आदि।

तीन- भुवन, वलि, वह्नि, विद्या, संध्या, गज-जाति, शंभुनेत्र, त्रिशिरा, मौलि, दशा, क्षेत्रपाल-फण, काल, मुनि, दण्ड, त्रिफला, त्रिशूल, पुरुष, पलाशदल, कालिदास-काव्य, वेद, अवस्था, कम्बुग्रीवारेखा, त्रिकूट-कूट, त्रिपुर, त्रियामा, यामा, यज्ञोपवीतसूत्र, प्रदक्षिणा, गुप्ति, शल्य, मुद्रा, प्रणाम, शिव, भवमार्ग, आदि।

चार- ब्रह्मा के मुख, वेद, वर्ण, हरिभुज, सुर-गज-रद, चतुरिकास्तम्भ, संघ, समुद्र, आश्रम, गो-स्तन, दिशाएँ, गज-जाति, याम, सेना के अंग, दण्ड, हस्त, दशरथ-पुत्र, उपाध्याय, ध्यान, कथा, अभिनय, रीति, गोचरण, माल्य, संज्ञा, असुर, योजनक्रोश, लोकपाल आदि।

पाँच- स्वर, बाण, पाण्डव, इन्द्रीय, करांगुलि, शंभुमुख, महायज्ञ, विषय, व्याकरणांग, व्रत-वह्नि, पार्श्व, फणि-फण, परमेष्ठि, महाकाव्य, स्थानक, तनु-वात, मृगशिर, पंचकुल, महाभूत, प्रणाम, विमान, महाव्रत, मरुत, शस्त्र, श्रम, तारा आदि।

छः- रस, राग, ब्रज-कोण, त्रिशिरा के नेत्र, गुण, तर्क, दर्शन, गुहमुख आदि।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सात- विवाह, पाताल, शक्रवाह-मुख, दुर्गति, समुद्र, भय, सप्तपर्ण-पर्ण आदि।

आठ- दिशा, देश, कुम्भिपाल, कुल, पर्वत, शम्भु-मूर्ति, वसु, योगांग, व्याकरण, ब्रह्म, श्रुति, अहिकुल आदि।

नौ- सुधा-कुण्ड, जैन-पद्म, रस, व्याघ्री-स्तन, गुप्ति, अधिग्रह।

दस- रावण-मुख, अंगुलि, यति-धर्म, शंभुकर्ण, दिशाएँ, अंगद्वार, अवस्था-दश आदि।

ग्यारह- रुद्र, अस्त्र, जिनमतोक्त अंग, ध्रुव, गणधर, प्रतिमा।

बारह- गृह के नेत्र, राशियाँ, मास, संक्रान्तियाँ, आदित्य, चक्र, राजा, चक्रि, सभासद आदि।

तेरह- विश्वेदेव।

चौदह- विद्या-स्थान, स्वर, भुवन, रत्न, पुरुष, स्वप्न, जीवाजीवोपकरण, गुण, मार्ग, रज्जु, सूत्र, कुलकर, पिण्ड, प्रकृति, स्रोतस्विनी आदि।

पंद्रह- परम धार्मिक तिथियाँ, चन्द्रकलाएँ आदि।

सोलह- शशिकला, विद्यादेवियाँ।

सत्रह- संयम।

अठारह- विद्याएँ, पुराण, द्वीप, स्मृतियाँ आदि।

उन्नीस- ज्ञाताध्यान।

बीस- करशाखा, सकल-जिन-नख और अंगुलियाँ, रावण के नेत्र और भुजाएँ आदि।

शत- कमलदल, रावणांगुलि, शतमुख, जलधि-योजन, शतपत्र-पत्र, धृतराष्ट्र के पुत्र, जयमाला, मणि हार, स्रज, कीचक आदि।

सहस्र- अहिपति-मुख, गंगामुख, पंकज-दल, रविकर, इन्द्रनेत्र, विश्वामित्राश्रम वर्ष, अर्जुन-भुज, सामवेद की शाखाएँ, पुण्य-नर-दृष्टि-चन्द्र आदि[1]।

---

१. विशेष जानकारी हेतु देखें भारतीय साहित्य, अप्रैल-१९५७, पृ. १९४-१९६ तक व पाण्डुलिपि विज्ञान पृ.४२-४५.

For Private and Personal Use Only

परिशिष्ट

चारों लिपियों में प्रयुक्त वर्णों की संयुक्त तालिका

ब्राह्मी	शारदा	ग्रंथ	प्राचीन नागरी	आधुनिक नागरी
				अ
				आ
				इ
				ई
				उ
				ऊ
				ऋ
				ॠ
	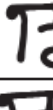			ऌ
				ॡ
				ए
				ऐ
				ओ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी	शारदा	ग्रंथ	प्राचीन नागरी	आधुनिक नागरी
				औ
				अं
				अः
				क
				ख
				ग
				घ
				ङ
				च
				छ
				ज
				झ
				ञ
				ट

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी	शारदा	ग्रंथ	प्राचीन नागरी	आधुनिक नागरी
				ठ
				ड
				ढ
				ण
				त
				थ
				द
				ध
				न
				प
				फ
				ब
				भ
				म

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ब्राह्मी	शारदा	ग्रंथ	प्राचीन नागरी	आधुनिक नागरी
				य
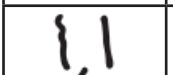				र
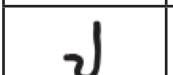	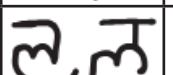		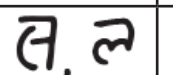	ल
	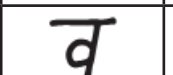		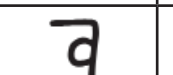	व
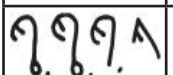		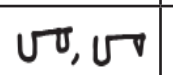	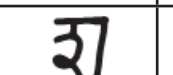	श
		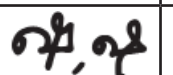	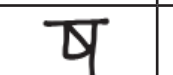	ष
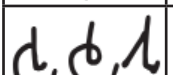				स
	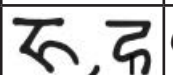		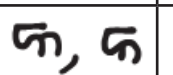	ह
		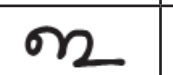	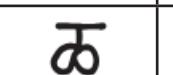	ळ
				क्ष
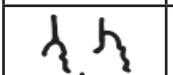	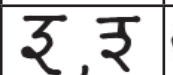			त्र
				ज्ञ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

११-१२वीं सदी की शारदा-लिपिबद्ध हस्तप्रतों में प्रयुक्त वर्णों की तालिका

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
क											
ख											
ग											
घ											
च											
छ											
ज											
ट											
ठ											
ड											
ढ											
ण											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
त											
थ											
द											
ध											
न											
प											
फ											
ब											
भ											
म											
य											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
र											
ल											
व											
श											
ष											
स											
ह											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संयुक्ताक्षर व मात्रा आदि

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
क्क											
क्र											
क्ख											
क्छ											
क्त											
क्त्य											
क्प											
क्य											
क्ल											
क्व											
क्स्व											
ख्य											
ग्ग											
ग्ज											
ग्र											
ग्य											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
ग्व											
घ्र											
ङ्ग											
ङ्घ्र											
ङ्न											
च्च											
च्छ											
च्छ्र											
च्य											
ज्ज											
ज्ञ											
ज्य											
ञ्च											
ञ्छ											
ञ्ज											
ट्क											
ट्प्र											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
ट्स											
ढ़्ध											
ढ़्न											
ण्ढ											
ण्ण											
ण्म											
ण्य											
त्क											
त्त											
त्त्य											
त्र											
त्व											
त्प											
त्र											
त्म											
त्य											
त्र											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
त्र्य											
त्व											
त्स											
त्स्न											
त्स्व											
थ्न											
थ्य											
द्ग											
द्घ											
द्ध											
द्न											
द्य											
द्र											
द्व											
ध्य											
ध्र											
ध्व											
न्त											
न्त्य											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
न्द											
न्द्र											
न्ध											
न्न											
न्प											
न्म											
न्य											
न्व											
प्त											
प्त्य											
प्न											
प्य											
प्र											
प्ल											
प्स											
ब्द											
ब्ध											
ब्य											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
ब्र											
ब्भ्य											
भ											
म्ब											
म्भ											
म्भ्य											
र्क											
र्ग											
र्ज											
र्ज्य											
र्ण											
र्त्त											
र्थ											
र्द											
र्ध											
र्न्न											
र्भ											
र्म											
र्य											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
र्व											
र्व्व											
र्श											
र्ष											
र्शा											
र्ह											
र्ह्य											
ल्प											
ल्प्य											
ल्य											
ल्व											
व्य											
श्च											
श्न											
श्य											
श्र											
श्ल											
ष्क											
ष्क्र											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
ष्ट											
ष्ट्य											
ष्ट्व											
ष्ठ											
ष्ण											
ष्फ											
ष्म											
ष्य											
ष्व											
स्क											
स्त											
स्त्र											
स्त्व											
स्थ											
स्न											
स्प											
स्प्र											
स्म											
स्य											
स											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
स्व											
स्स											
ह्म											
ह्य											
ह्र											
ह्व											

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिपि-विकासदर्शक तालिका

(श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा के सम्राट् संप्रति संग्रहालय में प्रदर्शित)

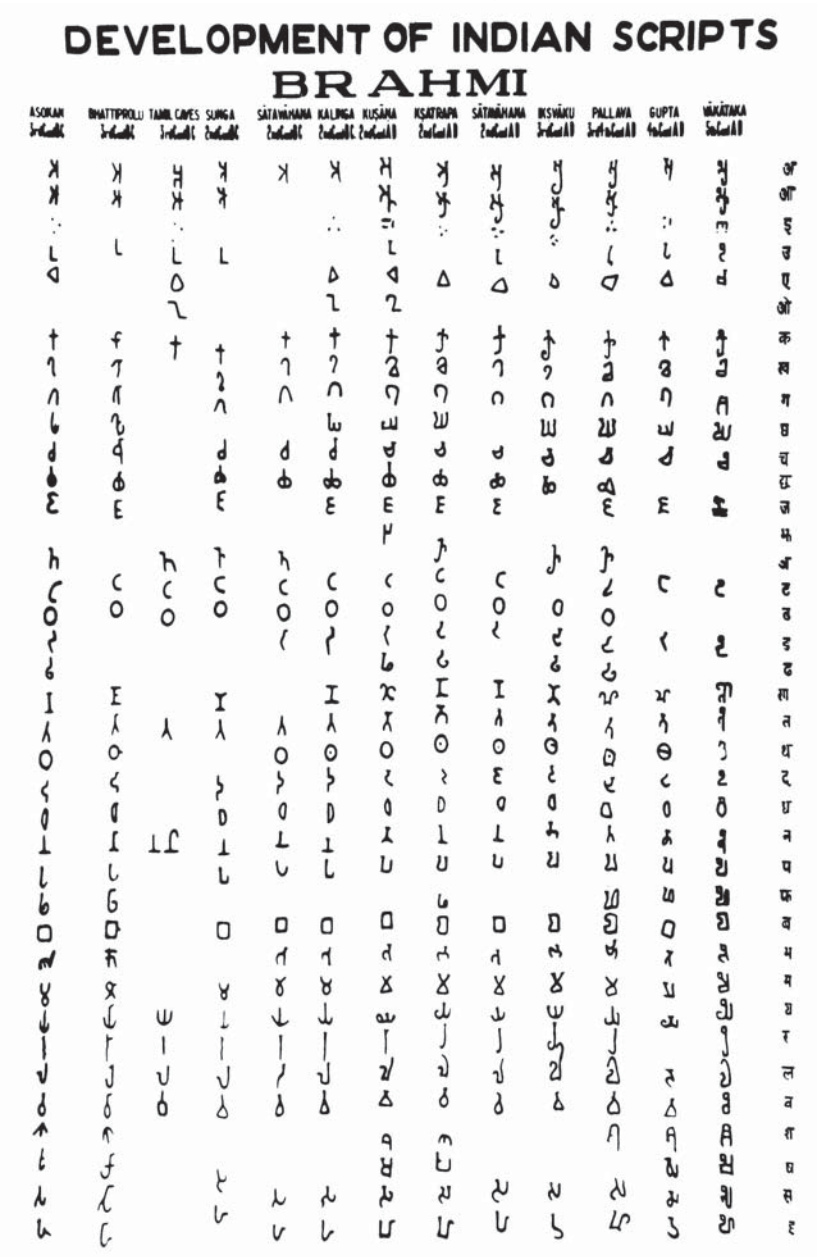

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

DEVELOPMENT OF INDIAN SCRIPTS
NAGARI

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

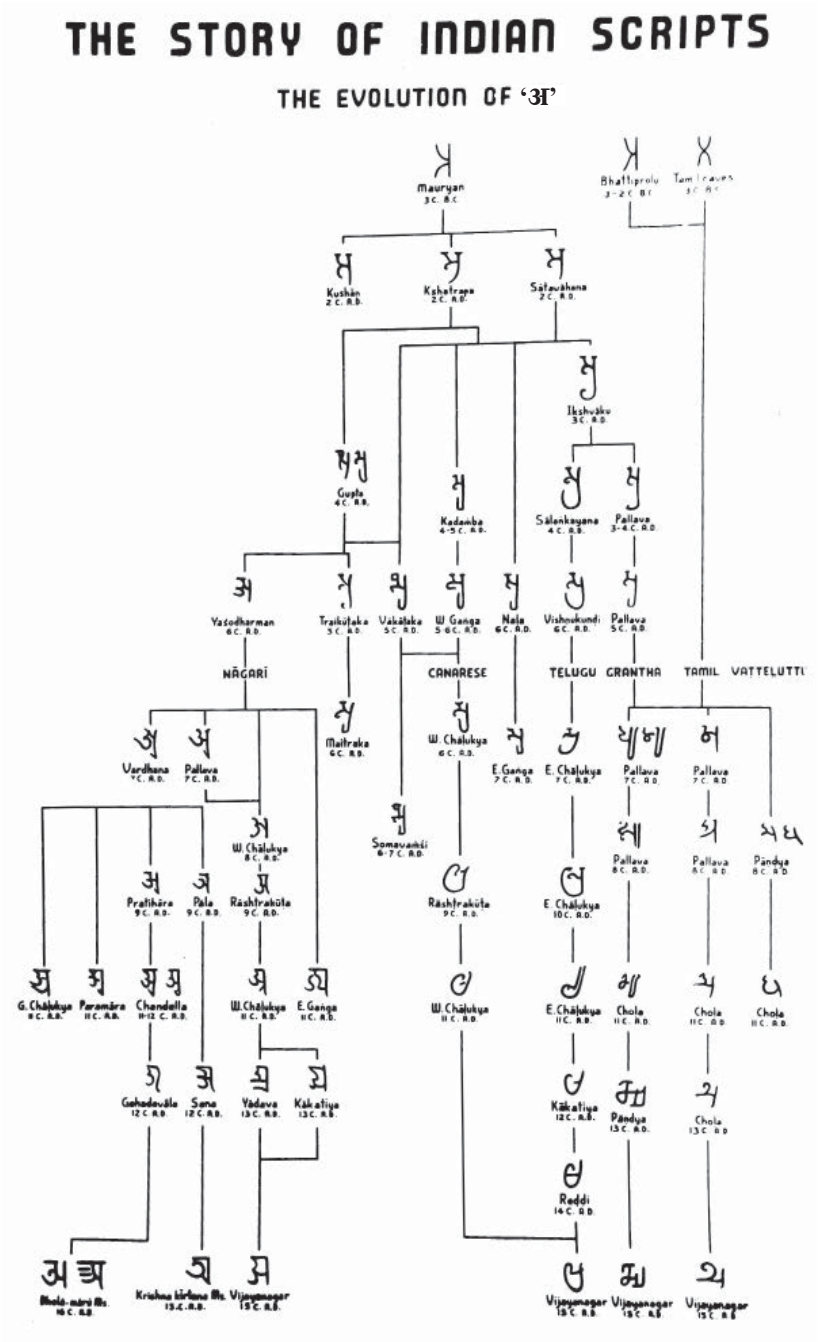

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

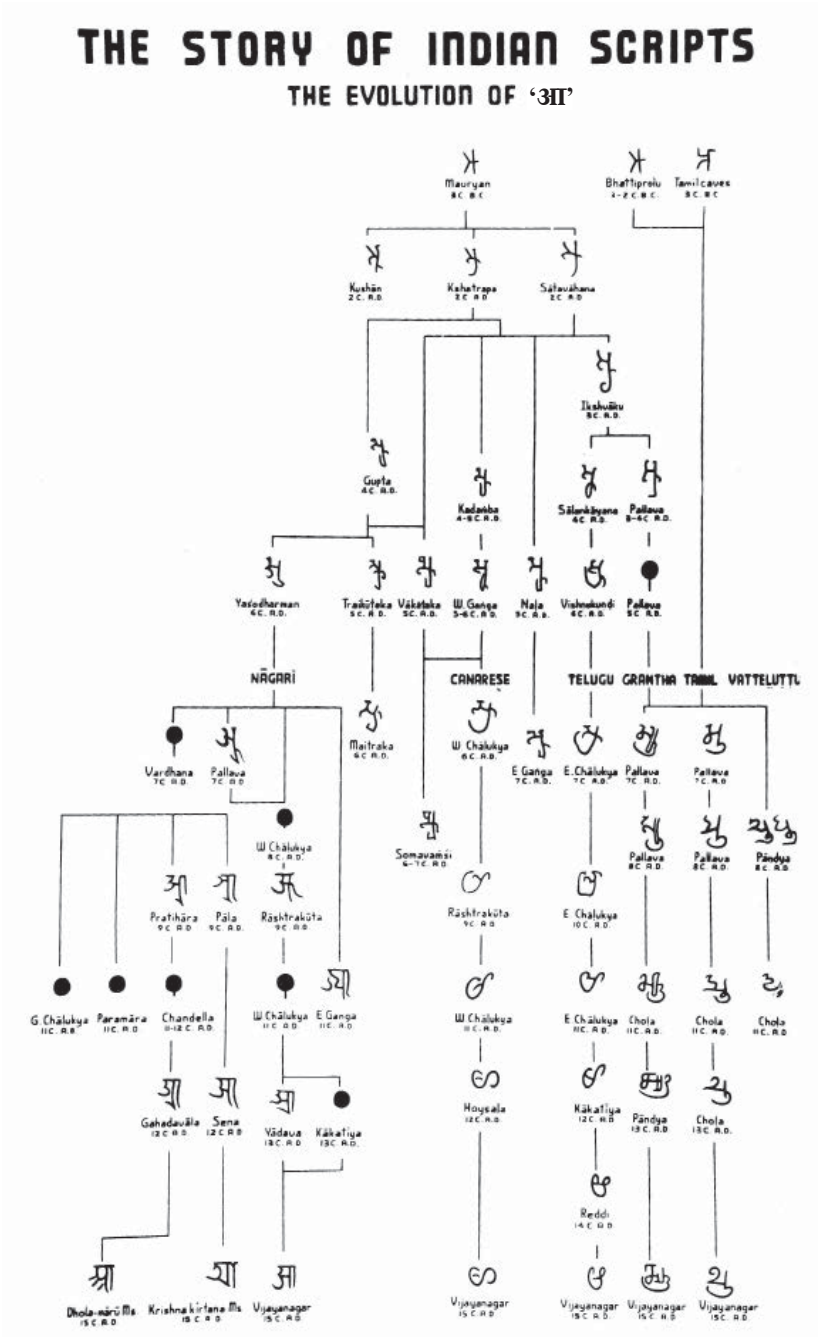

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

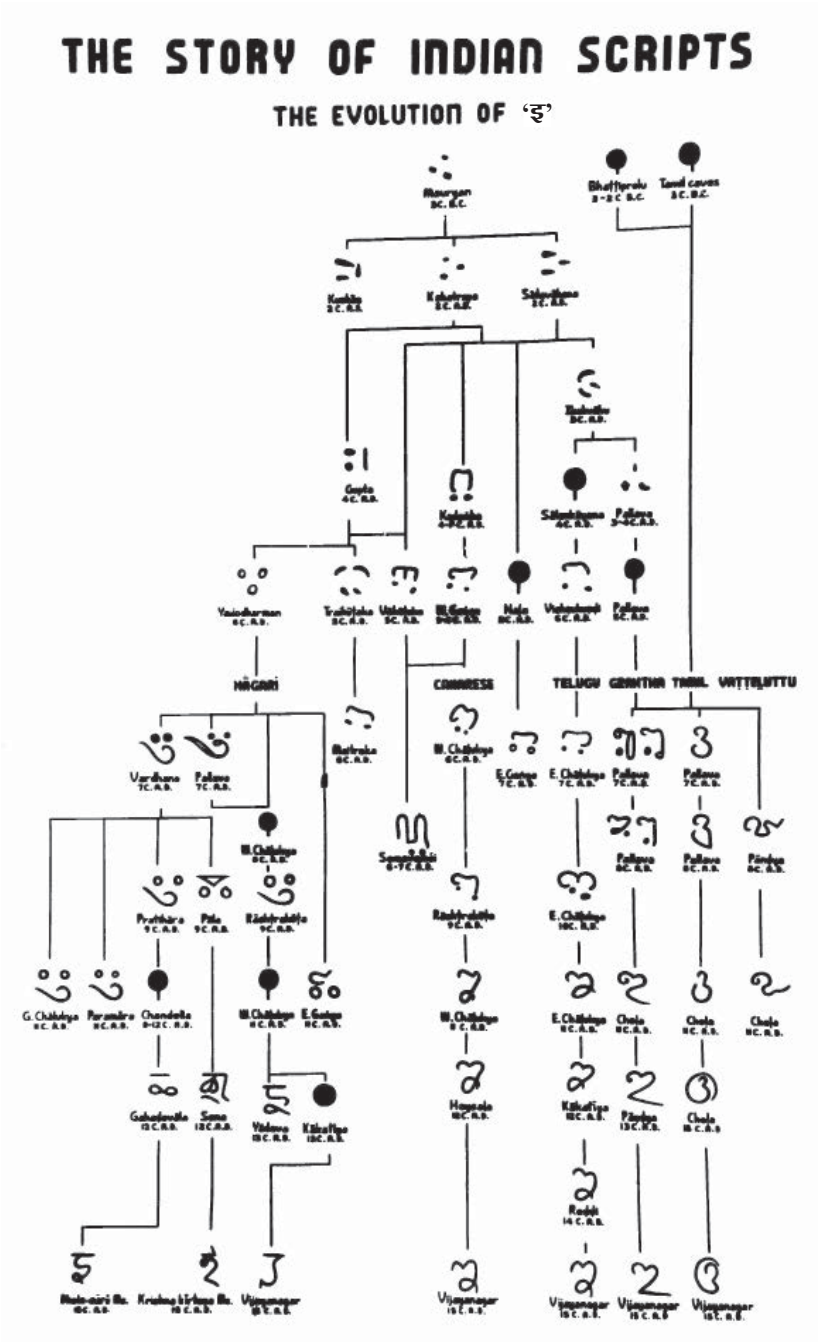

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

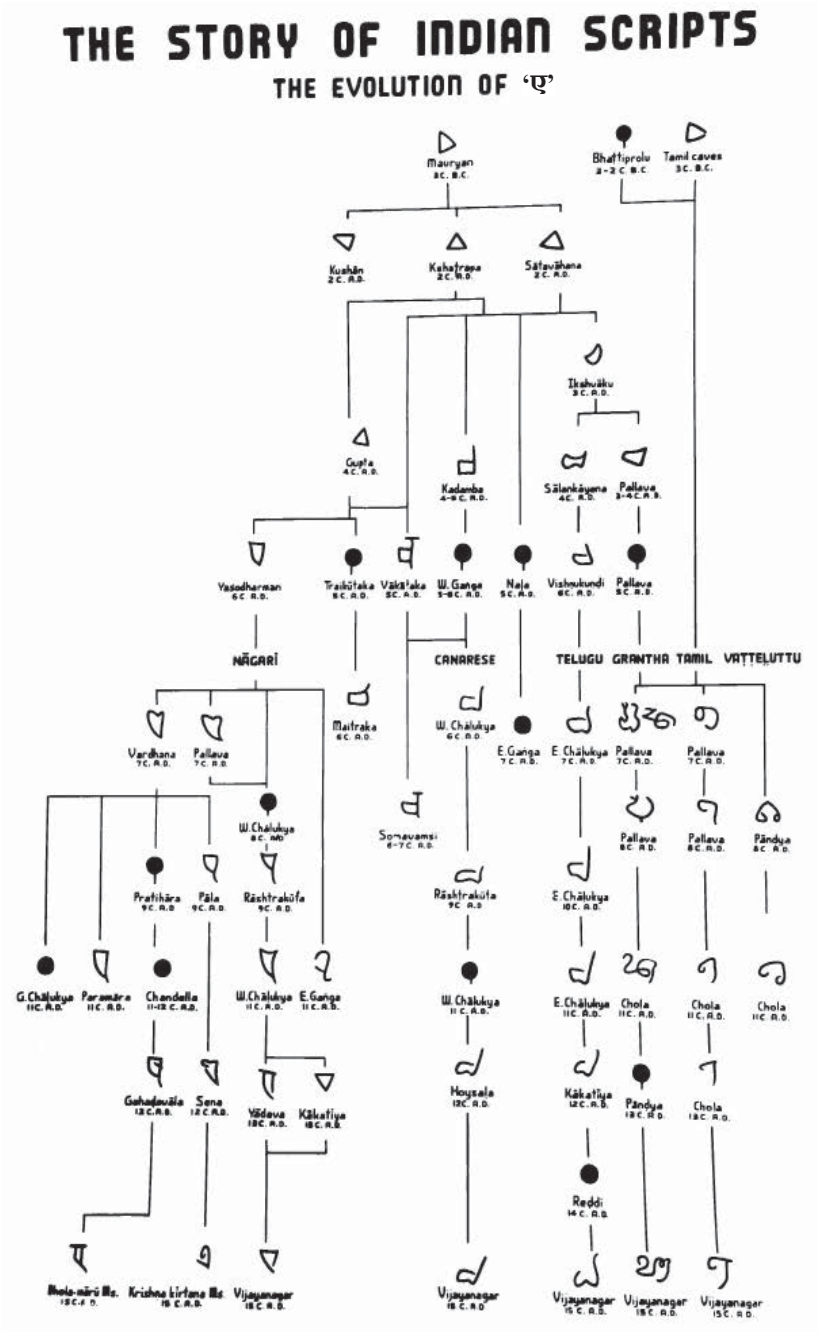

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

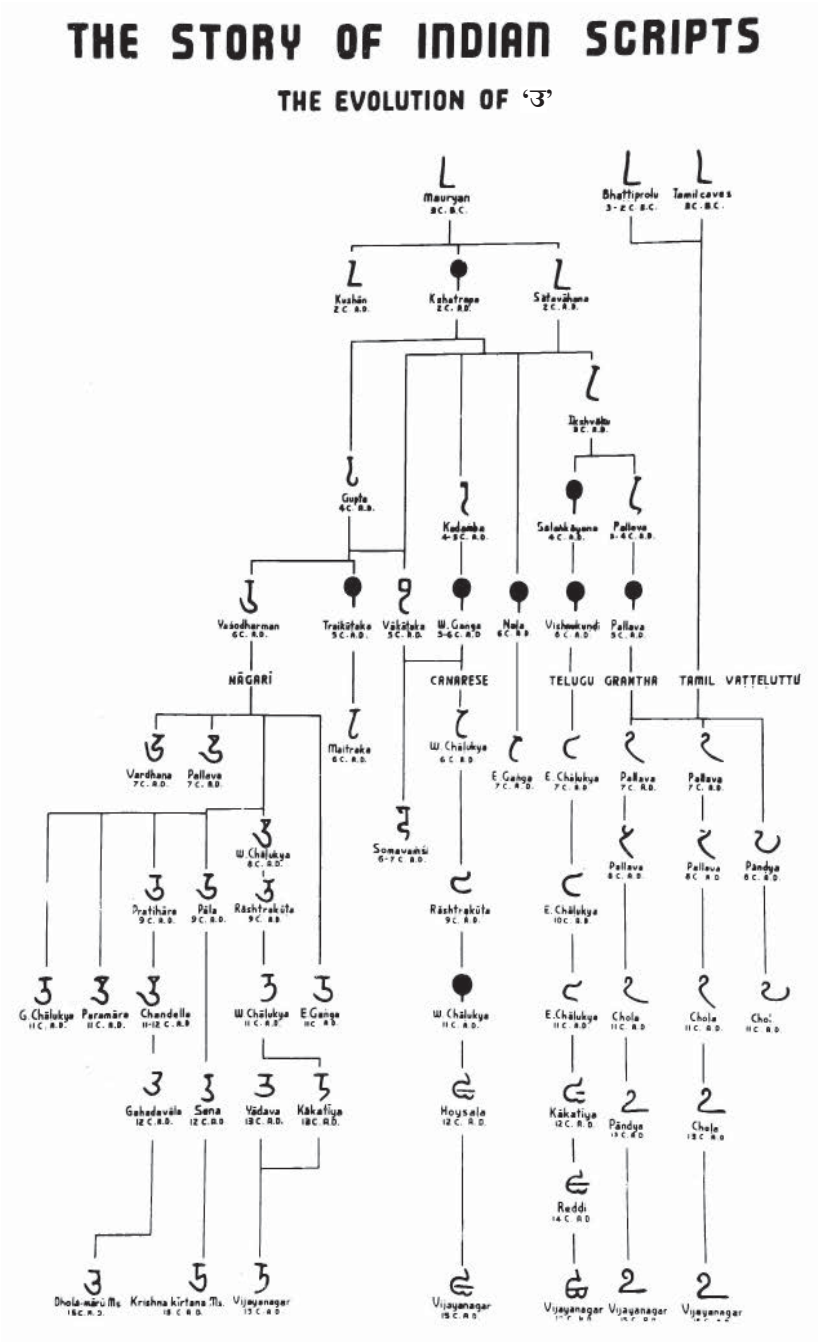

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

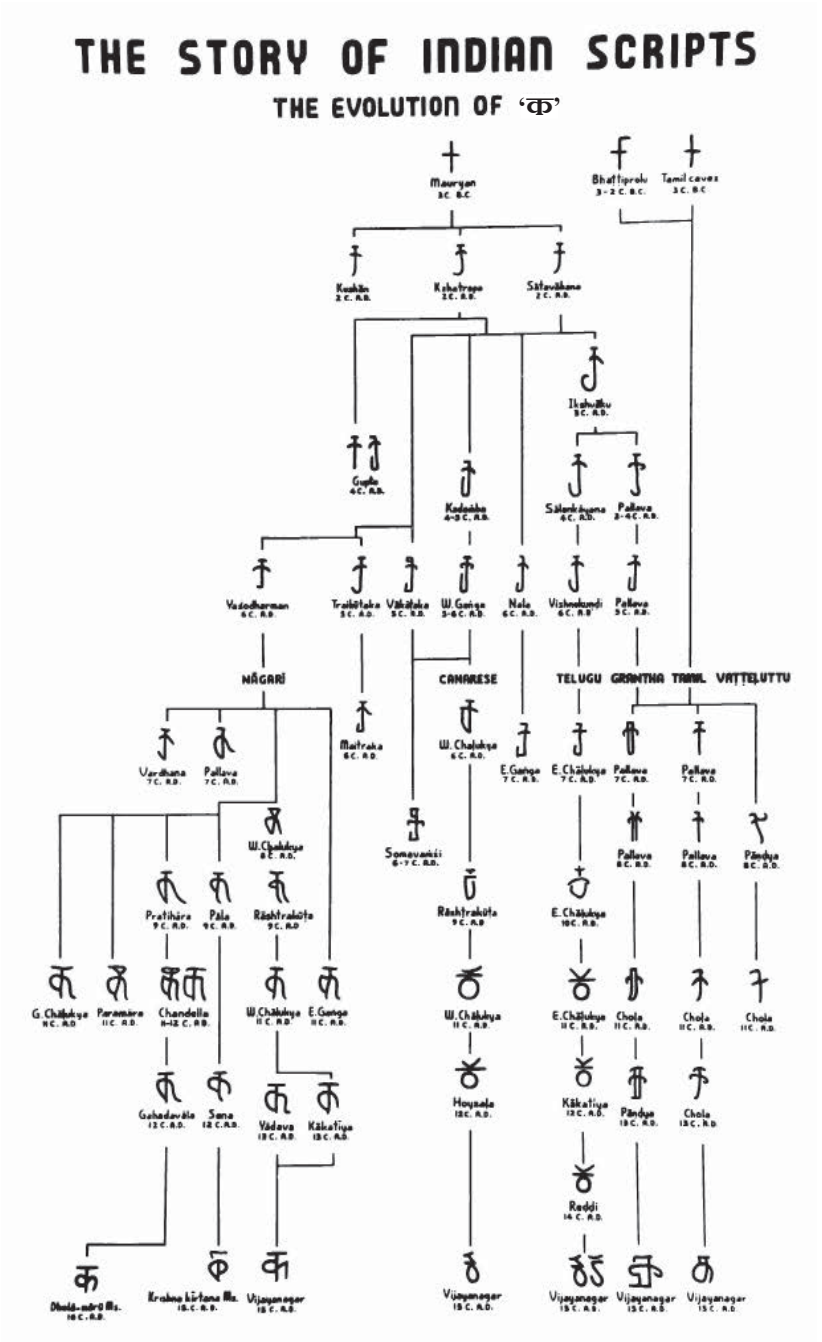

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

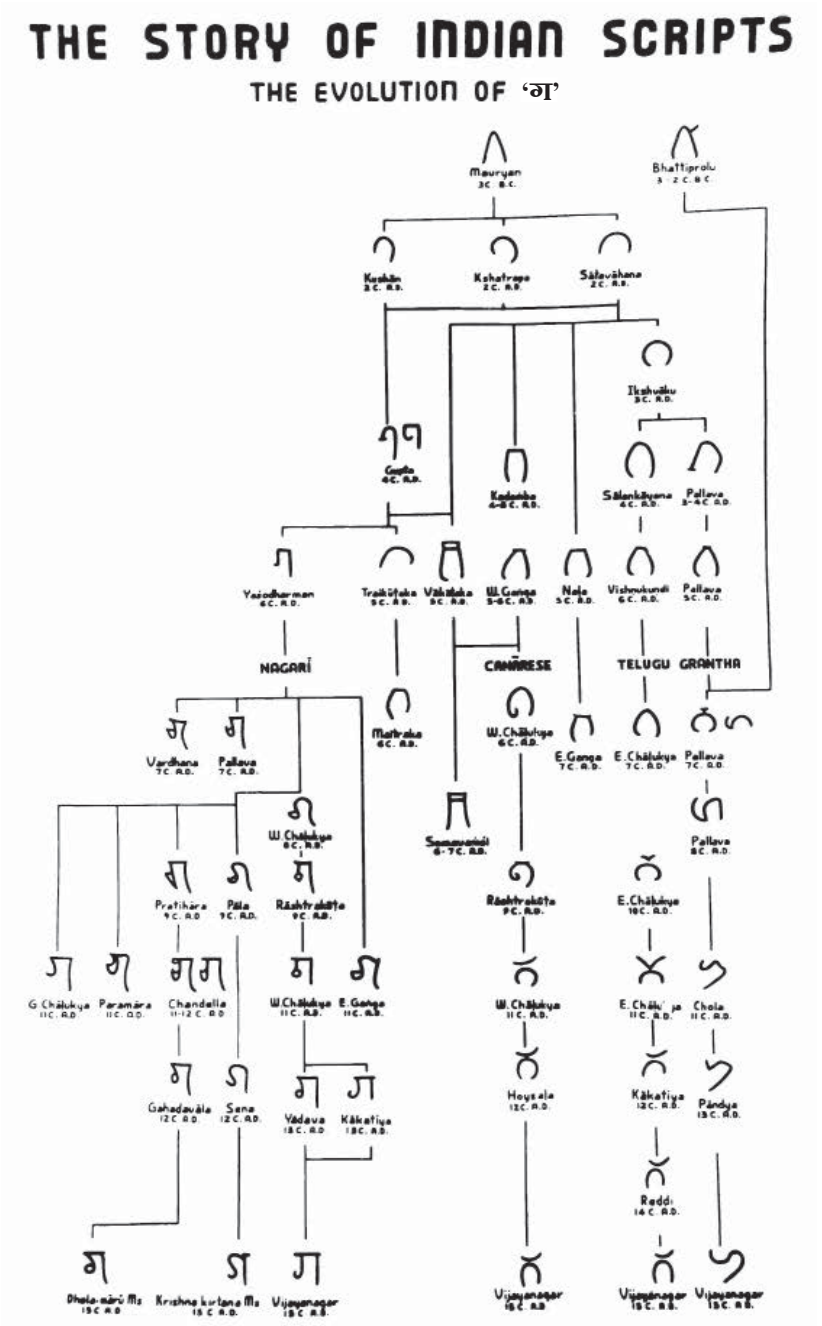

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

THE STORY OF INDIAN SCRIPTS

THE EVOLUTION OF 'च'

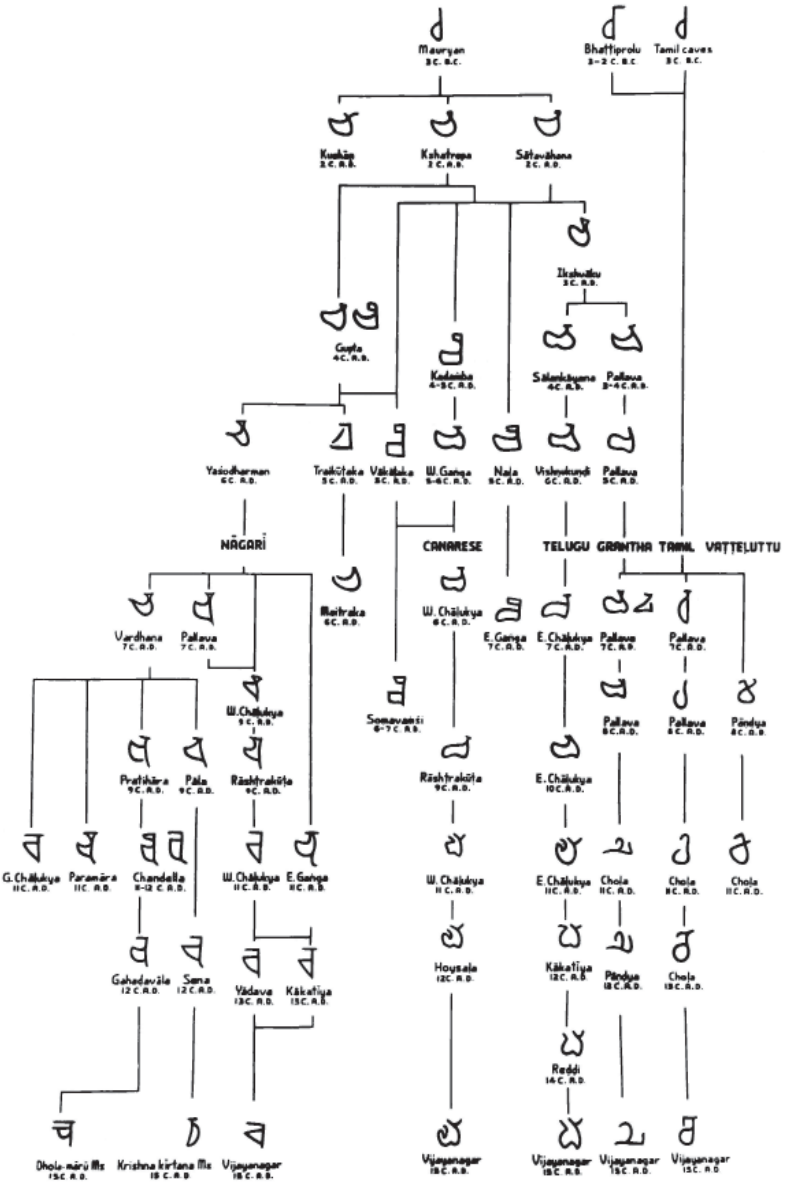

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

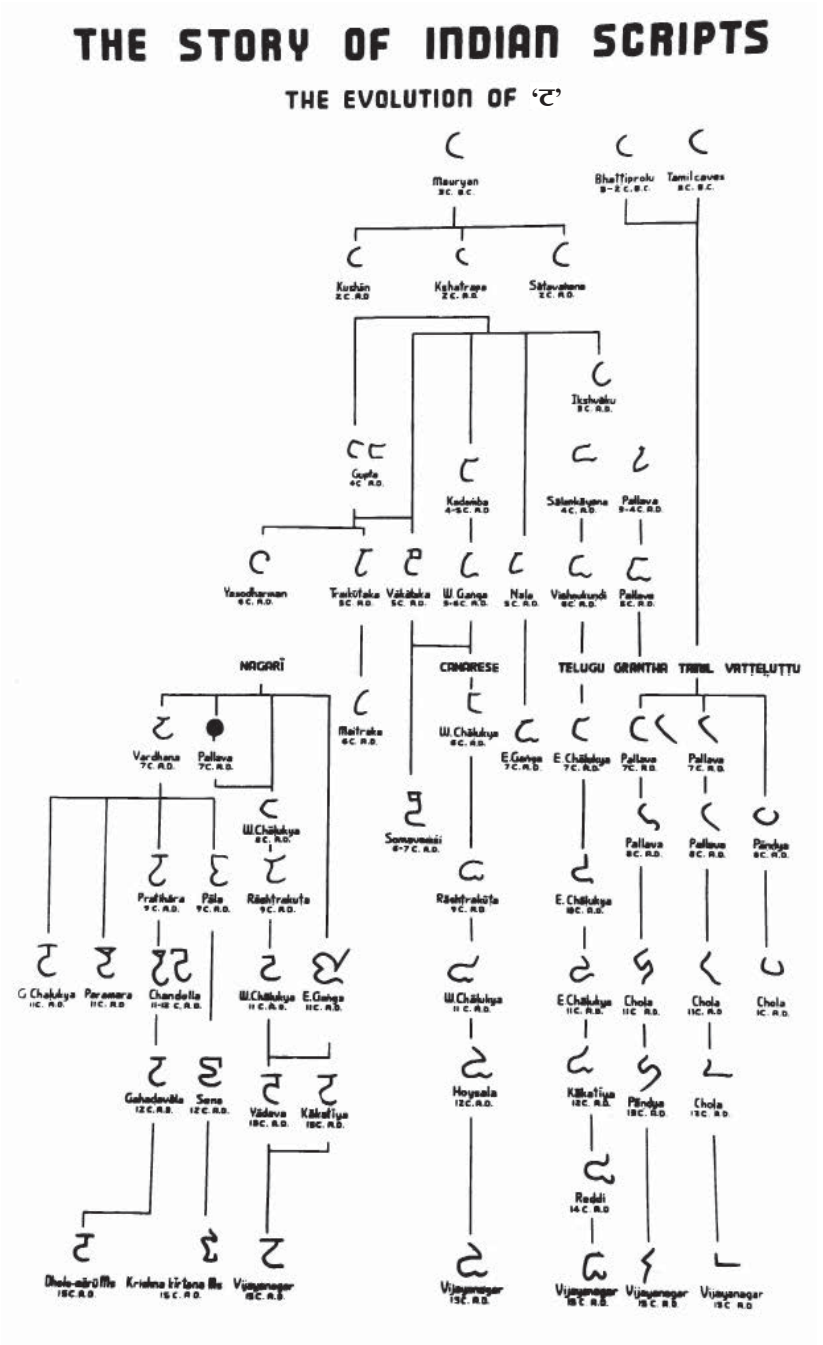

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

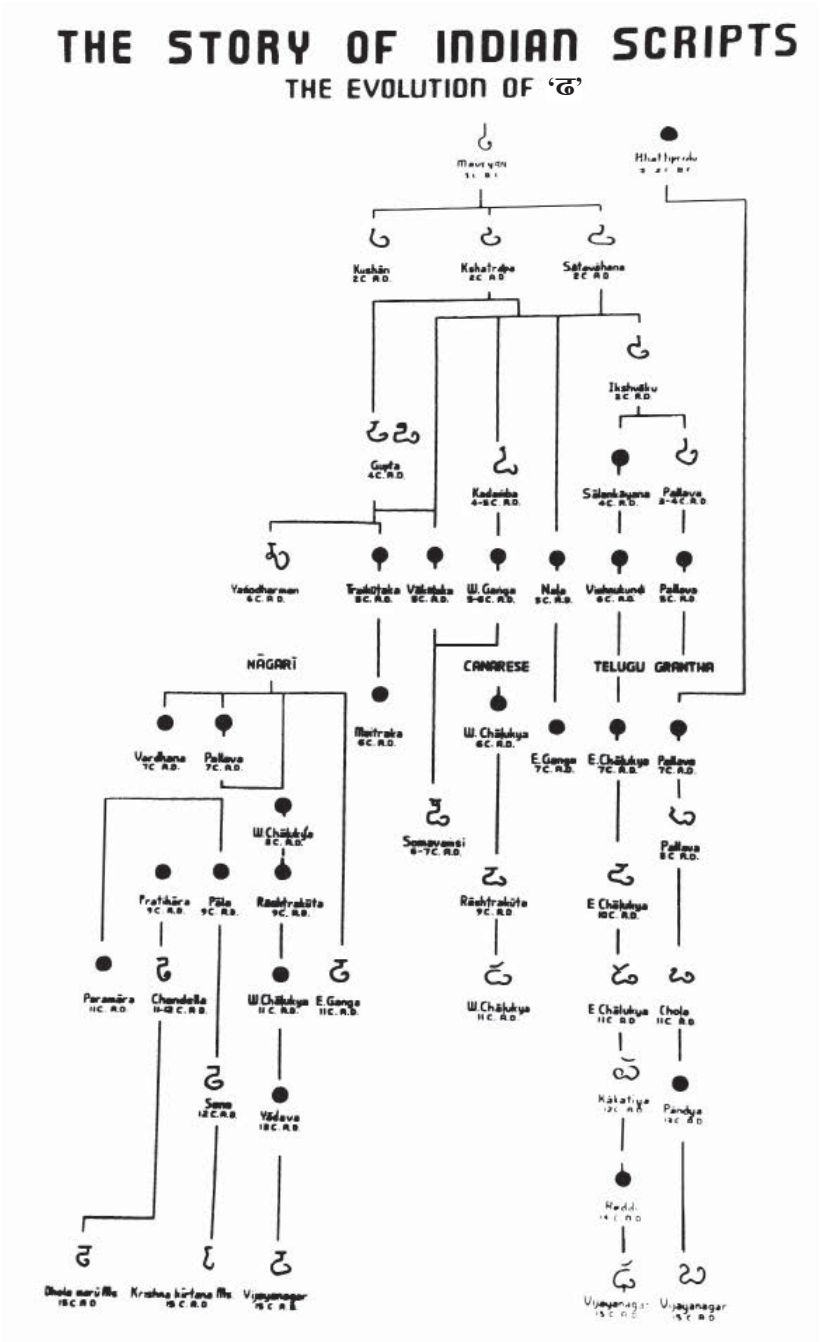

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

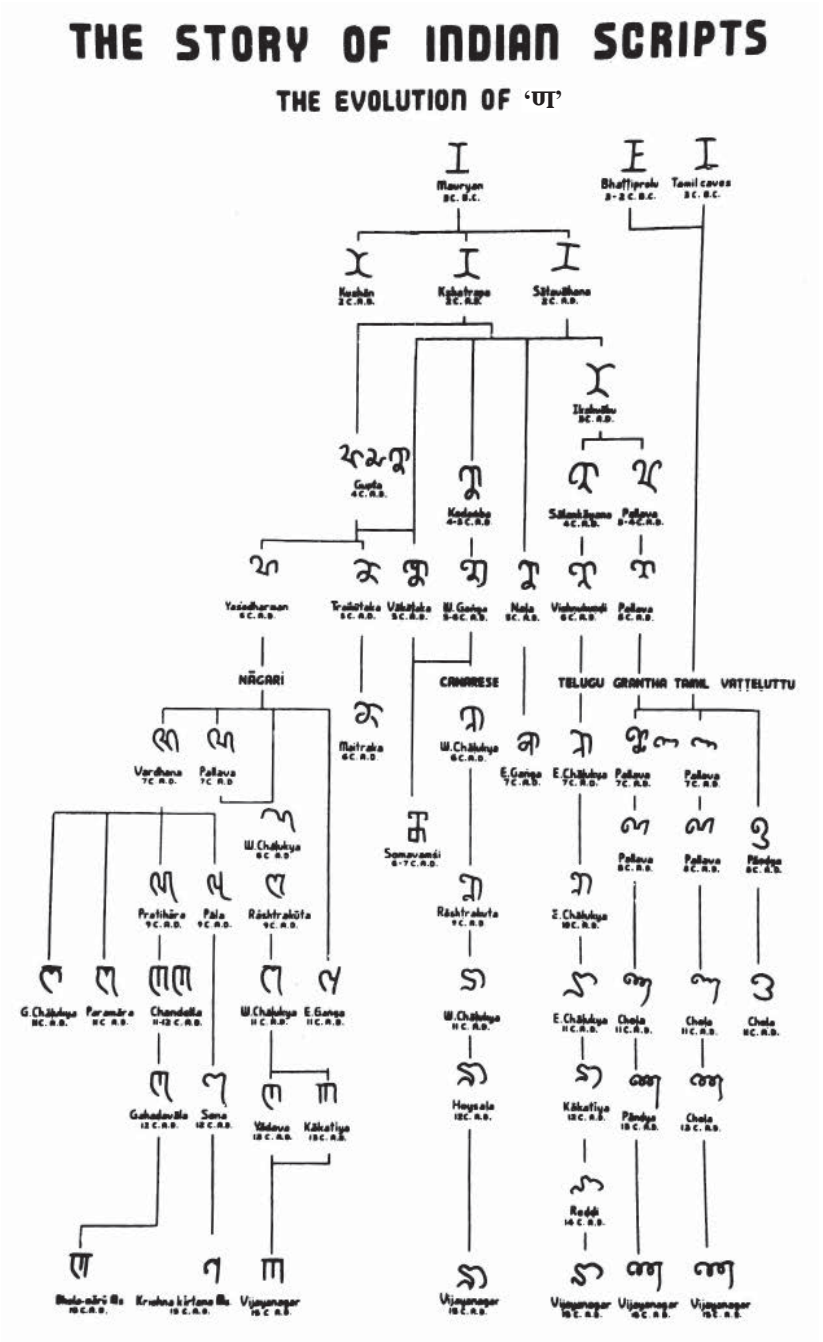

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

THE STORY OF INDIAN SCRIPTS

THE EVOLUTION OF 'अ'

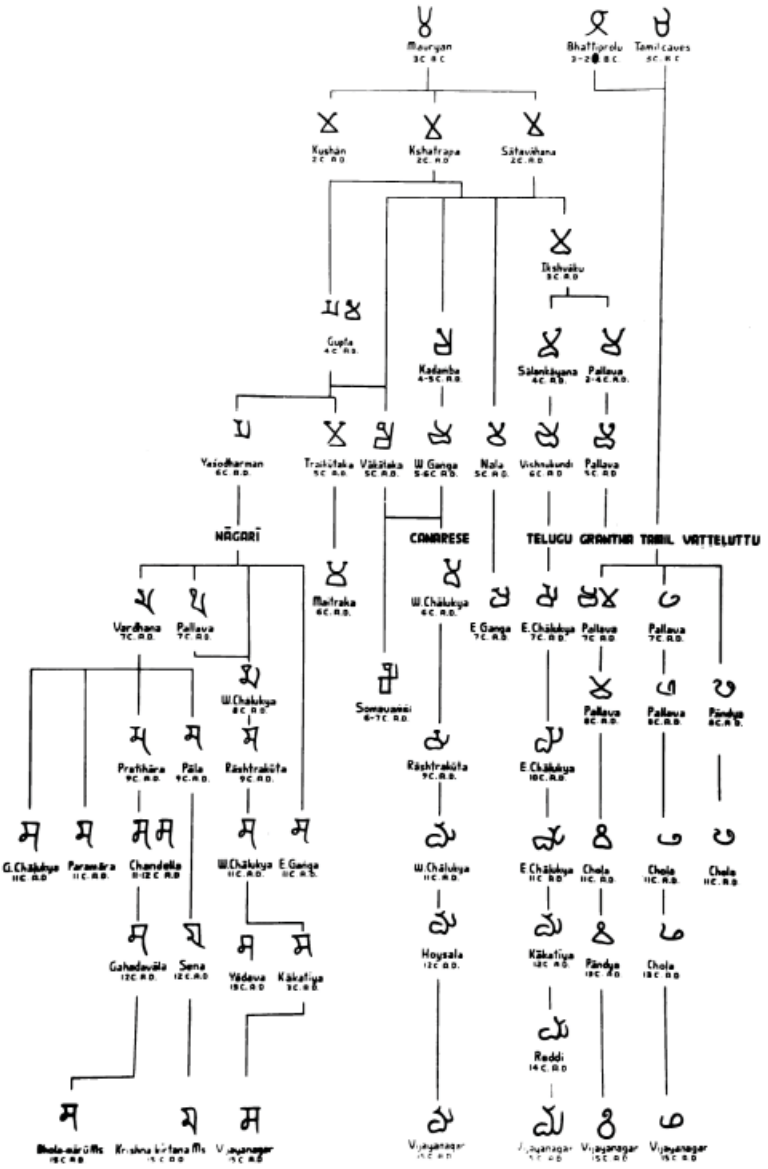

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

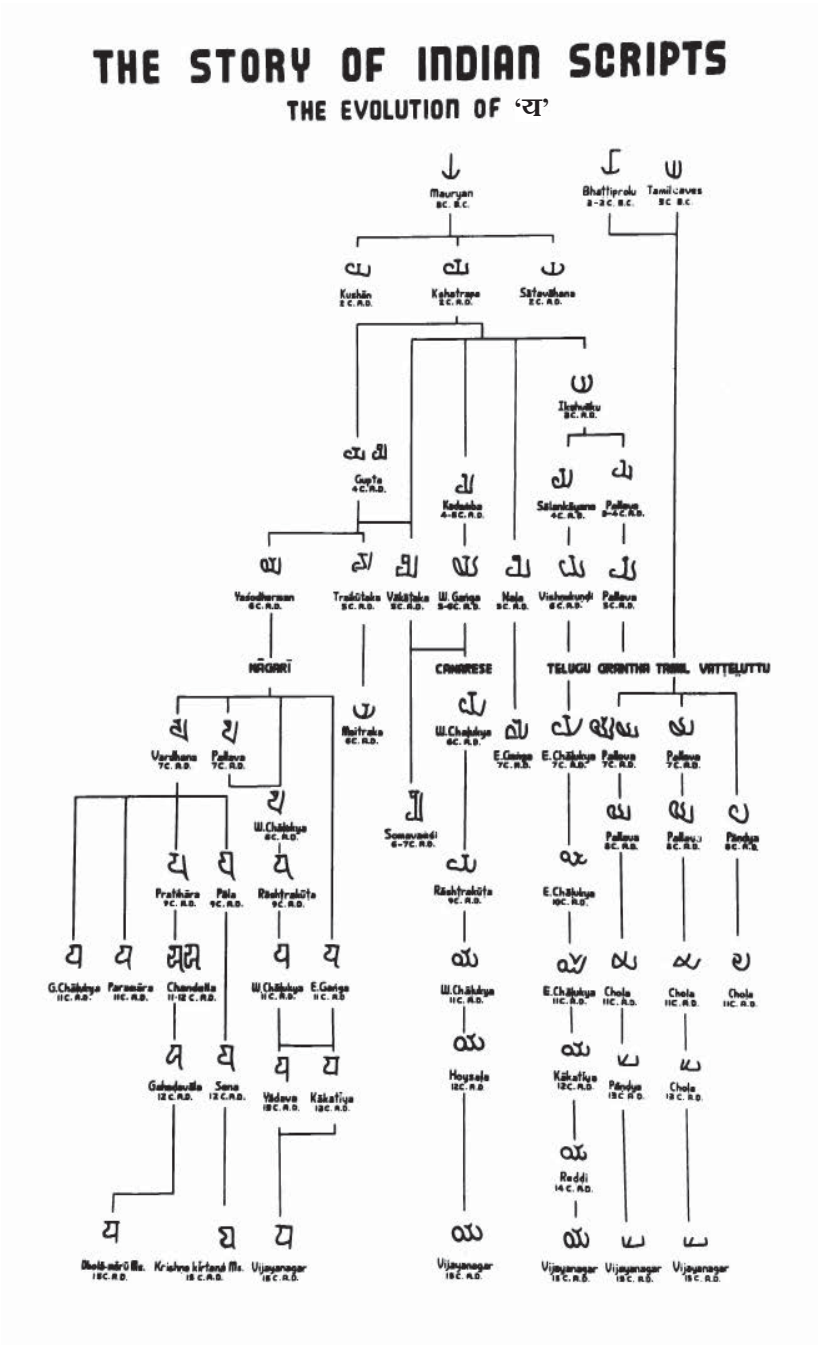

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

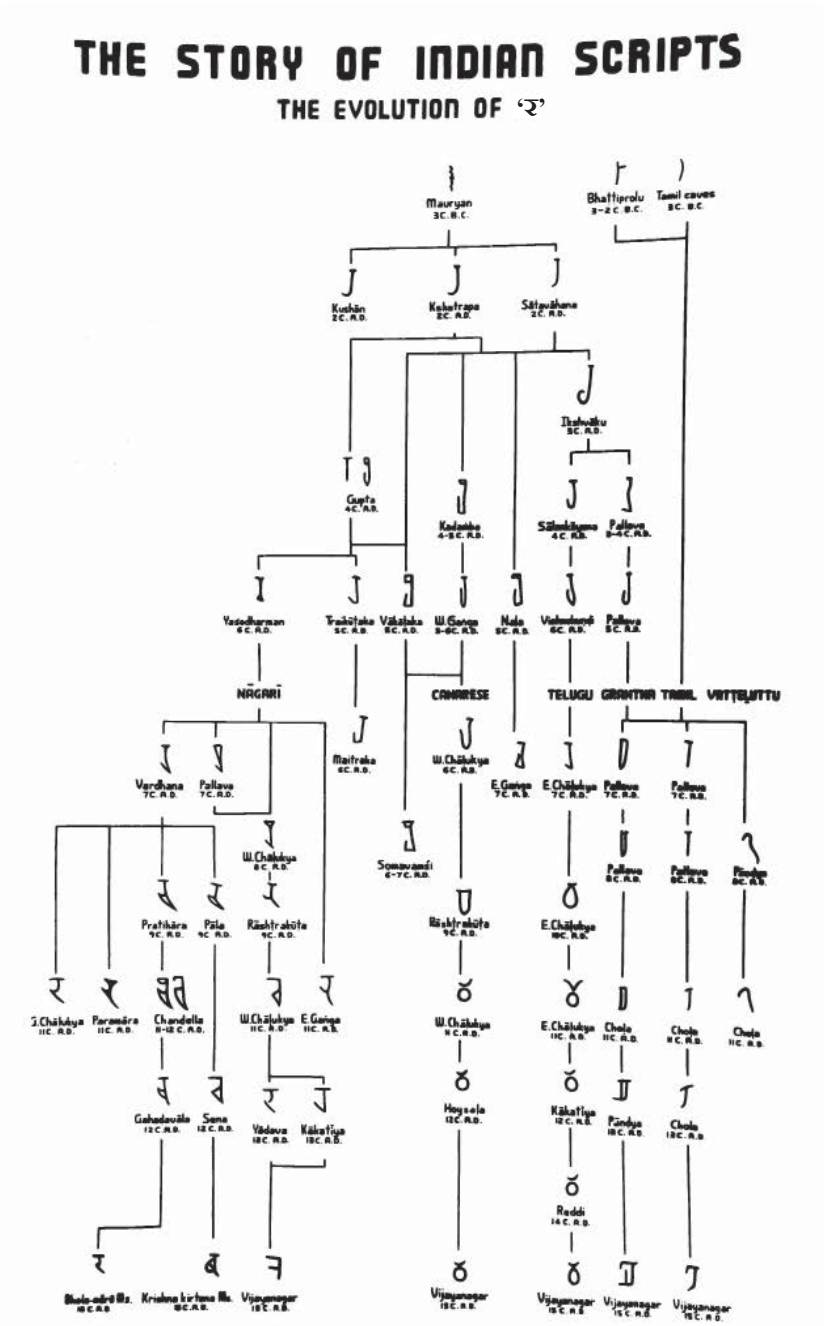

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

THE STORY OF INDIAN SCRIPTS

THE EVOLUTION OF 'ल'

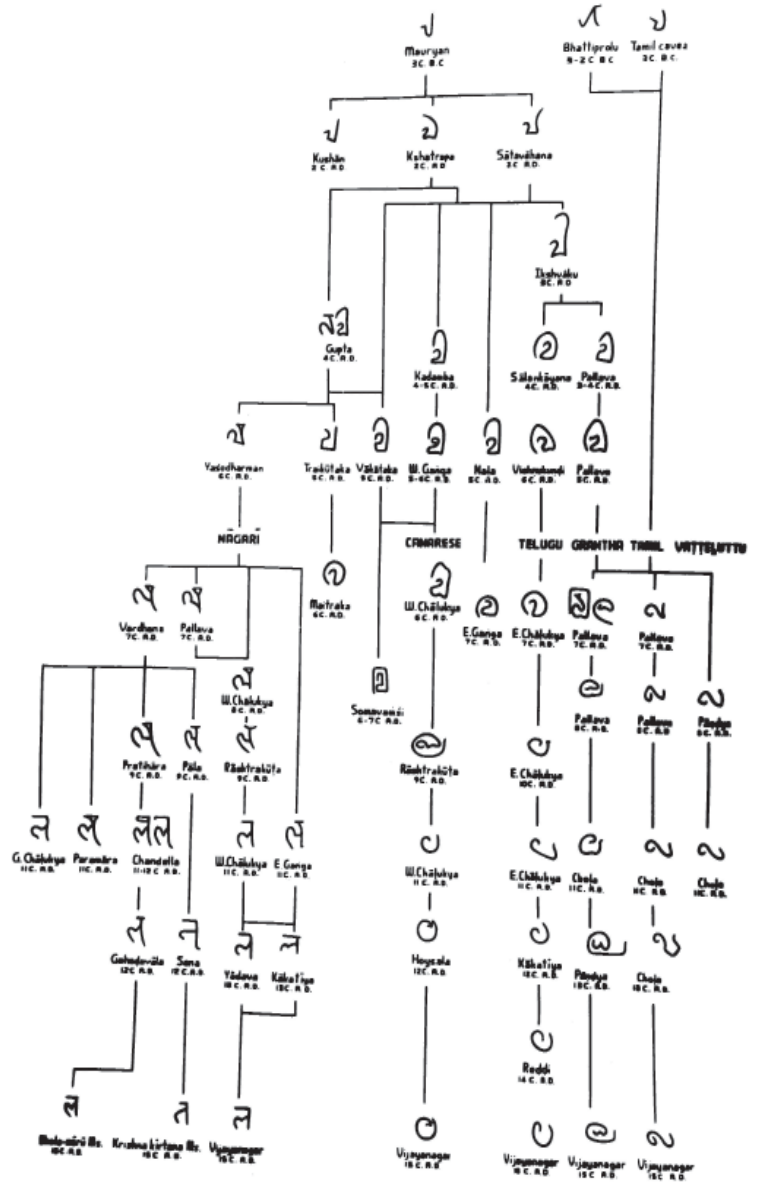

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

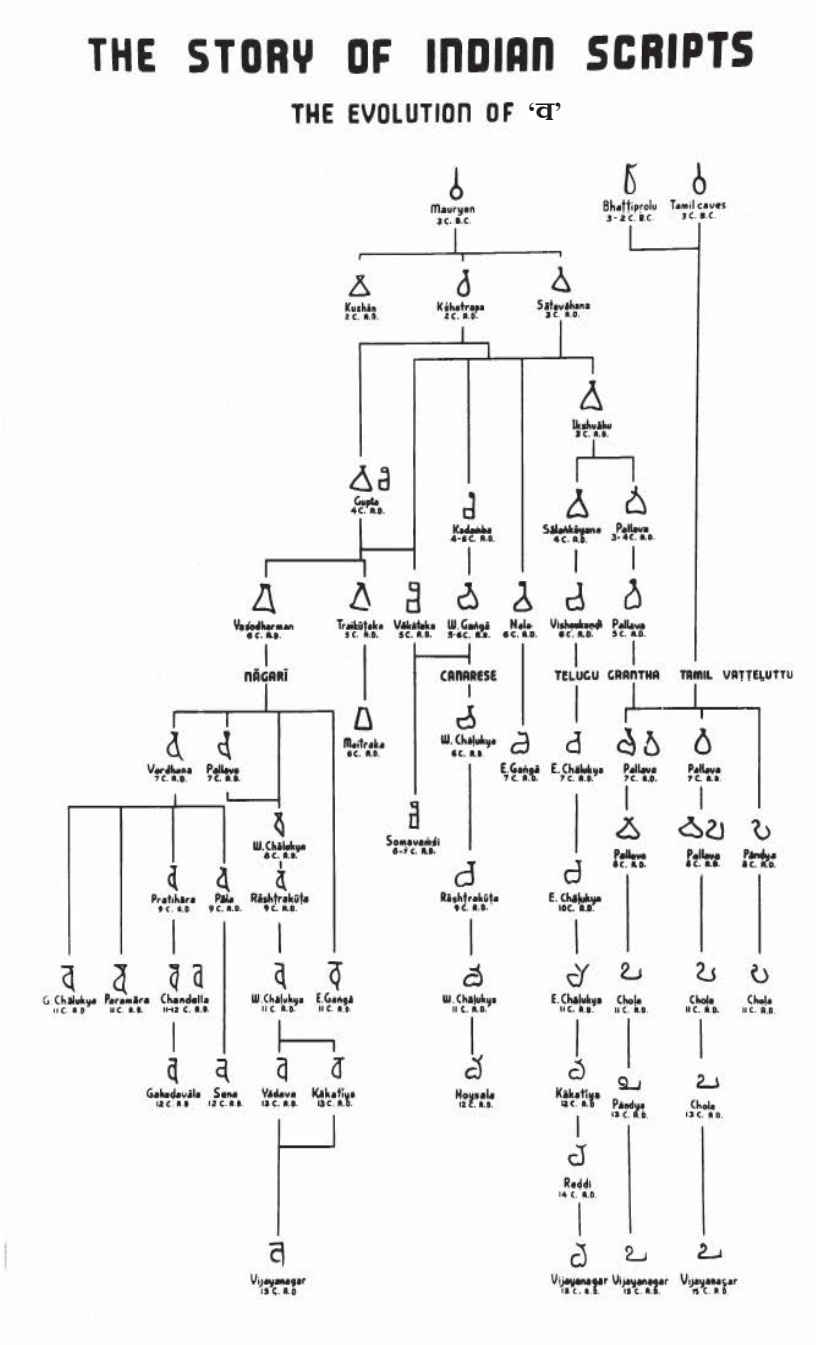

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

THE STORY OF INDIAN SCRIPTS

THE EVOLUTION OF 'अ'

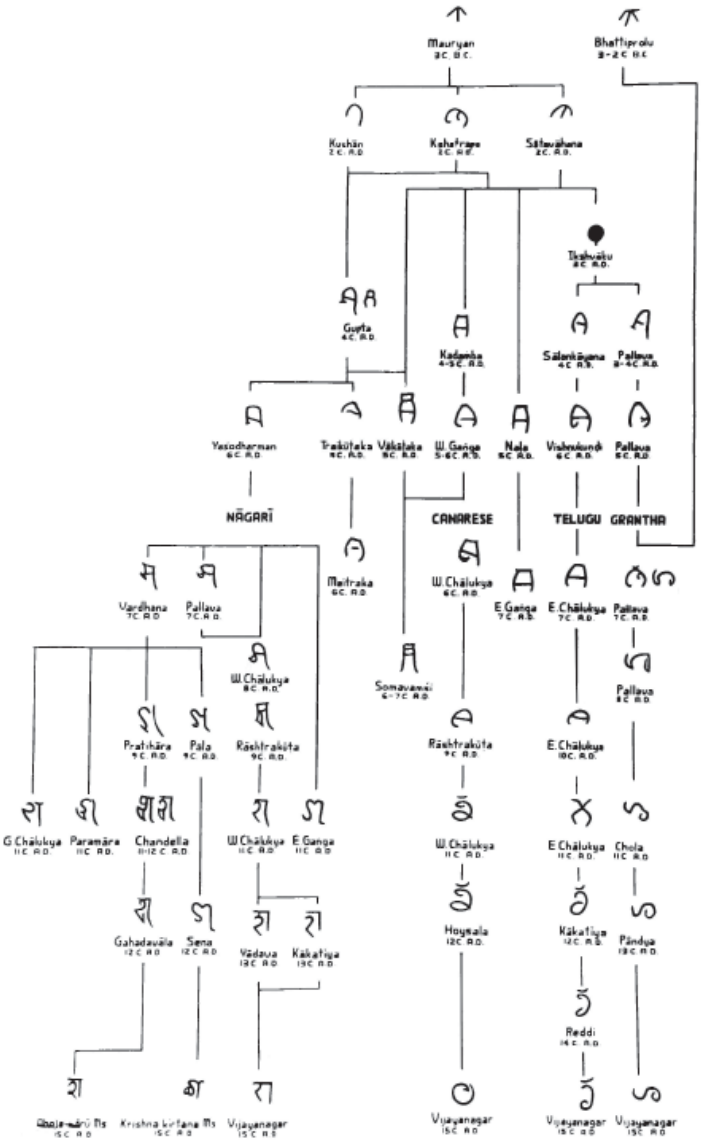

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संदर्भग्रन्थ-सूचि

१. भारतीय प्राचीन लिपिमाला : गौरीशंकर हीराचंद ओझा, राजपूताना म्यूझियम-अजमेर, ई.सन् १९७५

२. अशोक कालीन धार्मिक अभिलेख : गौरीशंकर हीराचंद ओझा एवं श्यामसुन्दरदास, भारतीय कला प्रकाशन, ई.सन् २००२

३. प्राचीन भारतीय लिपिशास्त्र एवं मुद्राशास्त्र : एम.पी.त्यागी एवं आर.के. रस्तौगी, संजीव प्रकाशन-मेरठ

४. अशोक अने एना अभिलेख : हरिप्रसाद गंगाशंकर शास्त्री, गुजरात विश्वविद्यालय-अहमदाबाद, ई.सन् १९७२

५. अशोकना शिलालेखो : भरतराम भानुसुखराम महेता, एम.सी.कोठारी-बरोडा, ई.सन् १९८२

६. भारतीय पुरालिपि विद्या : दिनेशचंद्र सरकार, अनु०-कृष्णदत्त वाजपेयी, विद्यानिधि प्रकाशन-दिल्ही, ई.सन् १९९६

७. लिपि विकास : राममूर्ति मेहरोत्रा, साहित्य रत्नभंडार-आगरा, ई.सन् १९५०

८. नागरी लिपि और हिंदी वर्तनी : डॉ. अनंत चौधरी, दिल्ली विश्वविद्यालय-दिल्ही, ई.सन् १९९२

९. हिंदी भाषा एवं नागरी लिपि का विकास : डॉ. कन्हैयालाल शर्मा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी-जयपुर, ई.सन् १९८४

१०. मध्यकालीन नागरी लिपिनो परिचय : श्री लक्ष्मणभाई भोजक, अहमदाबाद

११. ब्राह्मीलिपि का उद्भव और विकास : डॉ. ठाकुरप्रसाद वर्मा, रामानन्द विद्याभवन-दिल्ही, ई.सन् १९९८

१२. अशोक की धर्मलिपियाँ (भाग-१) : गौरीशंकर हीराचंद ओझा, काशी नागरीप्रचारिणी सभा-वाराणसी, ई.सन् १९८०

१३. अशोकना शिलालेखो ऊपर दृष्टिपात : श्री विजयेन्द्रसूरिजी म.सा., यशोविजयजी जैन ग्रंथमाला-भावनगर, ई.सन् १९९२

१४. इंडियन पेलियोग्राफी : जार्ज बूलर, ओरिएण्टल बुक्स रिप्रिंट कॉर्पोरेशन-दिल्ही, ई.सन् १९८०

१५. वातायन (भारतीय लिपिशास्त्र एवं इतिहास के कुछ नवीन संदर्भ) :

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

डॉ. विंध्येश्वरी प्रसाद मिश्र 'विनय', परिमल पब्लिकेशन-दिल्ही, ई.सन् २००५
१६. संस्कृत पाण्डुलिपिओ अने समीक्षित पाठसंपादन-विज्ञान : प्रो. वसंतकुमार एम.भट्ट, सरस्वती पुस्तक भण्डार-अहमदाबाद, ई.सन् २०१०
१७. प्राचीन भारतीय लिपि एवं अभिलेख : डॉ. गोपाल यादव, कला प्रकाशन, वाराणसी, ई.सन् २०१०
१८. ब्राह्मी सिक्के कैसे पढें : प्रदीप दत्तुजी वनकर, चन्द्रपुर कॉइन सोसायटी-चन्द्रपुर, ई.सन् २००८
१९. भारतीय जैन श्रमणसंस्कृति अने लेखन कला : मुनिश्री पुण्यविजयजी, श्रुतरत्नाकर-अहमदाबाद, ई.सन् २०१०
२०. पाण्डुलिपि विज्ञान : डॉ. सत्येन्द्र, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी-जयपुर, ई.सन् १९८९
२१. शारदा लिपि मञ्जूषा : डॉ. अनिर्वाण दश, पद्मजा पब्लिकेशन-इलाहाबाद, ई.सन् २०१२
२२. ग्रंथ लिपि वर्णमाला : डॉ. एस. जगन्नाथ, अड्डीयर पुस्तकालय-मैसूर
२३. पन्नवणासूत्र : संपा० अक्षयचंद्रसागरजी, आनन्द प्रकाशन-अहमदाबाद, वि.सं.२०५८
२४. समवायांगसूत्र : संपा० मुनिश्री जंबूविजयजी, जिनशासन आराधना ट्रस्ट-मुंबई, वि.सं.२०६४
२५. ललितविस्तर : अनु० शान्तिभिक्षु शास्त्री, उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान-लखनऊ, ई.सन् १९८४
२६. प्राचीन लेखनकला और उसके साधन : हिंदी अनु.-डॉ. उत्तमसिंह, लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामन्दिर-अहमदाबाद, ई.सन् २००९
२७. हस्तप्रतोने आधारे पाठसंपादन : डॉ. हरिवल्लभ चुनीलाल भायाणी, प्राकृत विद्यामण्डल-अहमदाबाद, ई.सन् १९८७
२८. ललितविस्तर : संपा० डॉ. परशुराम लक्ष्मण वैद्य, मिथिला विद्यापीठ-दरभंगा, वि.सं.२०१८
२९. श्रुतसागर (पत्रिका) : सह संपा० डॉ. उत्तमसिंह, आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर-कोबा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

३०. भगवतीसूत्र : संपा० आनन्दसागरसूरिजी, जैनानन्द पुस्तकालय-सूरत, वि.सं.२०६१
३१. गुजरातमां ब्राह्मीथी नागरीलिपि सुधीनो विकास : प्रवीणचंद्र चिमनलाल परीख, ई.सन् १९७४
३२. भारतीय लिपियों की कहानी : गुणाकर मुले, राजकमल प्रकाशन-नई दिल्ही, ई.सन् १९७४
३३. भारतीय पुरालिपि शास्त्र : मंगलनाथसिंह, मोतीलाल बनारसीदास-दिल्ही, ई.सन् १९६६
३४. भाषाविज्ञान हिंदी भाषा और लिपि : डॉ. रामकिशोर शर्मा, लोकभारती प्रकाशन-इलाहाबाद, ई.सन् २००७
३५. यशोधरचरित सचित्र पाण्डुलिपियाँ : कमला गर्ग, भारतीय ज्ञानपीठ-नई दिल्ही, ई.सन् १९९१
३६. हस्तप्रत विज्ञान : जयंत पी. ठाकर, गुजरात विश्वकोष ट्रस्ट-अहमदाबाद, ई.सन् २००६
३७. शारदा-लिपि दीपिका : श्रीनाथ तिक्कु, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान-नई दिल्ही, ई.सन् १९८८
३८. सामान्य पाण्डुलिपि विज्ञान : महावीर प्रसाद शर्मा, जैनविद्या संस्थान-महावीरजी, ई.सन् २००३
३९. सिंधुलिपि एवं भारत की अन्य लिपियाँ : संपा० पद्माकर मिश्र, संपूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय-वाराणसी, ई.सन् २०१३
४०. हस्तलिपि विज्ञान : बालकृष्ण मिश्र, विद्याविहार प्रकाशन-दिल्ही, ई.सन् १९९७
४१. हस्तप्रत विद्या अने आगमसाहित्य संशोधन-संपादन : डॉ. निरंजना वोरा, गुजरात विद्यापीठ-अहमदाबाद, ई.सन् २००१
४२. हस्तप्रतोनुं संरक्षण : प्रो.नरेश आर. शाह, यूनिवर्सिटी ग्रंथ निर्माण बोर्ड-अहमदाबाद, ई.सन् २०००
४३. कैलास श्रुतसागर ग्रंथसूचि भाग-१-२१ : संपा० मुनिश्री निर्वाणसागरजी, आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर, श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा, वि.सं.२०५९

For Private and Personal Use Only

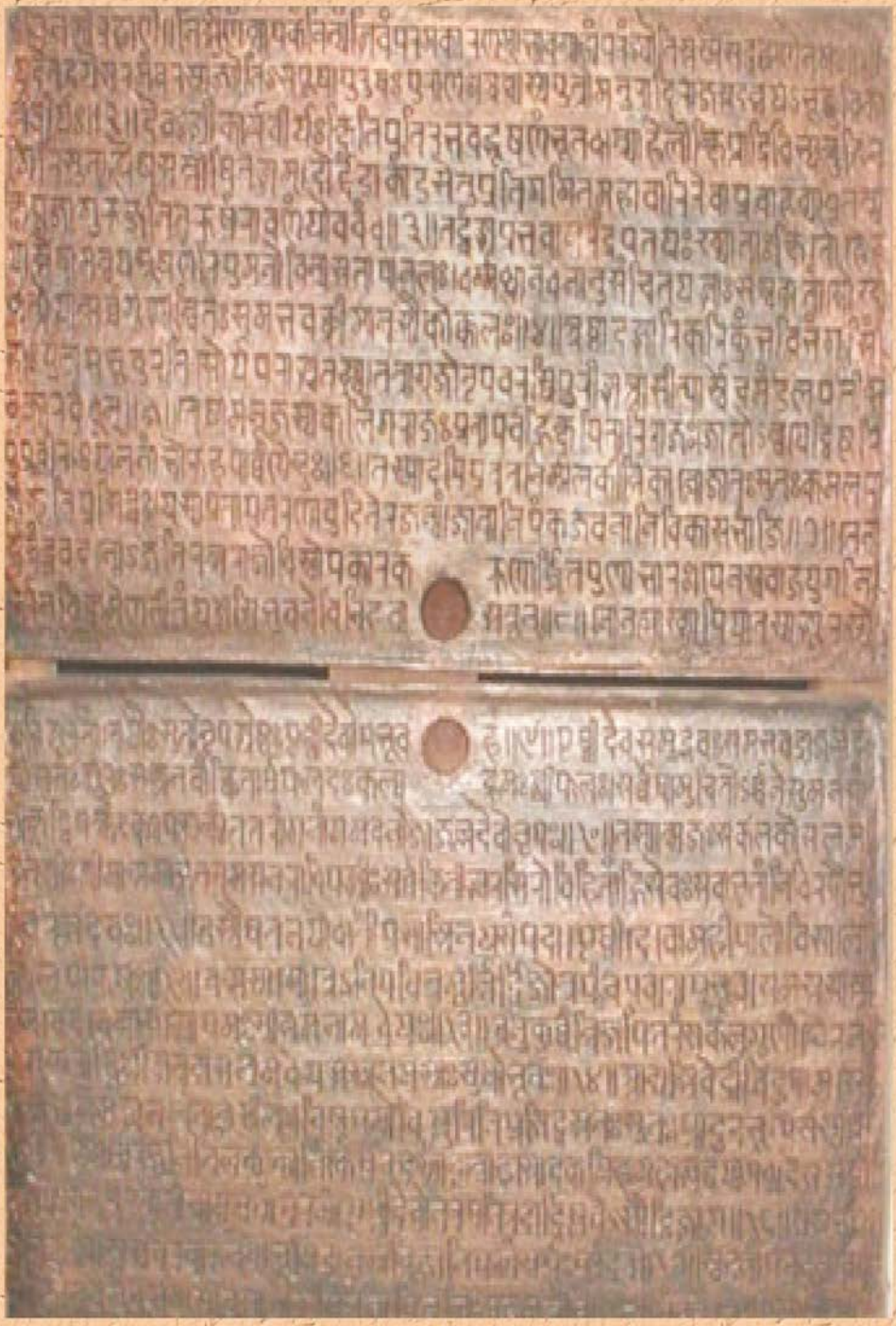

(नागरी लिपिबद्ध ताम्रपत्र)

For Private and Personal Use Only

डॉ. उत्तमसिंह

जन्म राजस्थान के भरतपुर जिलान्तर्गत 'मामटौली' गाँव में दिनाङ्क 15 जुलाई 1975 के दिन हुआ। प्राथमिक अध्ययन गाँव के ही सरकारी विद्यालय में पूर्ण कर माध्यमिक अध्ययन जयपुर में पूर्ण करने के बाद राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान लखनऊ परिसर, लखनऊ से शास्त्री, आचार्य (स्वर्णपदक प्राप्त), शिक्षाशास्त्री एवं बौद्ध-जैन दर्शन में प्रातःस्मरणीय डॉ. विजयकुमार जैन जी के निर्देशन में शोधकार्य पूर्ण कर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

जून 2004 में UGC द्वारा आयोजित NET परीक्षा पास की तथा शोधकार्य के दौरान राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान लखनऊ परिसर 'बौद्धदर्शन विभाग' में तीन वर्ष तक शास्त्री एवं आचार्य कक्षाओं में अध्यापनकार्य किया।

तदुपरान्त अहमदाबाद स्थित 'शारदाबेन चिमनभाई शैक्षणिक शोध संस्थान' में ई.सन् 2005 से जून 2012 तक पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि-शास्त्र अध्ययन-अध्यापन, संशोधन-संपादन, प्रकाशन एवं गुजराती भाषाबद्ध महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद तथा प्रूफ-सुधार आदि कार्यों में सलग्न रहे।

संप्रति श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा, गाँधीनगर, गुजरात के 'आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर' (जैन व प्राच्यविद्या शोधसंस्थान एवं ग्रन्थालय) में विगत चार वर्षों से 'पुस्तक' व 'हस्तप्रत' विभाग में संशोधनात्मक संकलित सूचीकरण आदि कार्यों हेतु 'वरिष्ठ पण्डित' के रूप में कार्यरत हैं, जहाँ दो लाख हस्तलिखित प्राचीन पाण्डुलिपियाँ तथा इतनी ही मुद्रित पुस्तकों का विशाल एवं अद्भुत संग्रह है।

साथ ही 'राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन-दिल्ली' तथा विविध शैक्षणिक संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा आयोजित 'पाण्डुलिपि एवं पुरालिपि अध्ययन कार्यशालाओं' के माध्यम से ब्राह्मी, शारदा, ग्रंथ एवं प्राचीन देवनागरी लिपियों के प्रचार-प्रसार, संरक्षण-संवर्धन व अध्ययन-अध्यापन-कार्य में संलग्न। अद्यपर्यन्त विविध पत्र-पत्रिकाओं में लगभग बीस से अधिक लेख प्रकाशित तथा एक दर्जन से अधिक राष्ट्रीय व दो अन्तरराष्ट्रीय संगोष्ठियों में शोधपत्र वाचनार्थ उपस्थित रहे।

लेखन-सम्पादन : 1. जैनधर्म-दर्शन (गुजराती से हिंदी अनुवाद), 2. जैन आचार दर्शन (गुजराती से हिंदी अनुवाद), 3. प्राचीन लेखनकला और उसके साधन (गुजराती से हिंदी अनुवाद), 4. रासपद्माकर, भाग-1 व 2 (प्राचीन पाण्डुलिपियों के आधार पर विविध मध्यकालीन पद्यात्मक कृतियों का संकलित एवं समीक्षात्मक संपादन), 5. भारतीय पुरालिपि मञ्जूषा, 6. पाण्डुलिपि-रक्षण-संदेश (लघु नाटिका)

पत्र/पत्रिकाएँ : सम्पादक : श्रुतसागर (मासिक पत्रिका), श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र-कोबा, गाँधीनगर, गुजरात से प्रकाशित। सह-सम्पादक : ज्ञानायनी (वार्षिक पत्रिका), लखनऊ, उत्तर प्रदेश से प्रकाशित।

संपर्क : दूरभाष नं. 9427523323, ई.मेल. uttamsingh75@gmail.com

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा तीर्थ
Acharya Sri Kailassagarsuri Gyanmandir
Sri Mahavir Jain Aradhana Kendra
Koba Tirth, Gandhinagar-382007 (Guj.) INDIA
Website : www.kobatirth.org
E-mail : gyanmandir@kobatirth.org
ISBN : 978-93-85803-02-4

For Private and Personal Use Only